लोकभारती प्रकाशन

१५-ए, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद-१

उलटा दाँव

प्रबोधकुमार सान्याल

उलटा दाँव

: : १ : :

एक जमाना था जब नई बहू के साथ मायके की कोई नौकरानी या नायन आया करती थी। ससुराल के अपरिचित वातावरण में लड़की अकेलापन महसूस न करे, बस इसी ख्याल से माता-पिता साथ में किसी ऐसी दासी को भेज देते थे जिससे लड़की हिली हुई होती थी। उधर ससुराल वाले भी नई बहू की तरफ से निश्चिंत से रहते थे। कम से कम उन्हें यह चिंता तो नहीं रहती थी कि बहू ठीक से खाती-पीती है या नहीं। और धीरे-धीरे जब लड़की ससुराल में रम जाती तो तरह-तरह के इनामों से अपनी झोली भर हँसी-खुशी वह दासी वहाँ से विदा ले लेती।

किंतु उस काल की बहू होती थी किशोरी कन्या जो एक बन्द कली व कच्चा फल रहते ही ससुराल आ जाती थी। सास-ससुर, जेठ-जेठानी, ननद-देवर के स्नेह-सिंचन से वह कली चिटक कर फूल बनती, पति के प्यार की गर्मी पा कर वह कच्चा फल पकता। लेकिन अब जमाना बदल गया है। शिवानी ने बहू बन कर ससुराल में पैर रक्खा—रस से छलकते—परिपक्व फल के रूप में, सौरभ से परिपूर्ण—पूर्ण विकसित पुष्प के रूप में! अपनी देखभाल के लिए अपने साथ वह कोई दासी नहीं लाई। बल्कि वह लाई अपने अधरों की मधुर मृदु मुस्कान! वह इस घर में आई नवजीवन के संचार की तरह—मानों मधुमालती की लता हो, जिसकी हवा का हर झोंका चारों ओर सुगंध ही सुगंध बिखेर जाता हो। शंख बजाने वालों ने शंख बजाया पर केवल नई बहू की अभ्यर्थना के लिए नहीं, इस शंख-ध्वनि के माध्यम से उन्होंने दूर-दूर तक मानो हर श्रोता के कानों में यह संवाद पहुँचा दिया कि मैत्र-परिवार में एक नवयुगीन गृहलक्ष्मी का पदार्पण हुआ है।

सबने सुन रक्खा था कि हेमन्त की बहू जितनी सुन्दर है उतनी ही उच्च शिक्षित भी है। दोनों की जोड़ी भी खूब मिलती थी। हेमन्त था रूपवान, गुणवान तथा शरीर से लम्बा-चौड़ा, स्वस्थ, इसीलिए शिवानी के पार्श्व में और भी जँचता था। इस सामन्ती परिवार में एक अरसे बाद मानों नवयुग का आविर्भाव हुआ था। गौरव व आनन्द से माया देवी की आँखें चमक रही थीं। आज उनके पाँव धरती पर नहीं पड़ रहे थे। मुस्कुराती हुई अभ्यागतों से बोलीं, ना बाबा ना, अब युग

लोग मुझसे कोई फरमाइश मत करो ! अब थोड़े दिन में लड़के की वहू को लेकर एकान्त में रहना चाहती हूँ।

लावण्य बोली, देख रही हो छोटी मौसी, माँ को पता नहीं क्या हो गया है। अब इस उम्र में गुड़िया का खेल खेलने के लिए उतावली हो रही हैं।

और बस हँसते-हँसते लोगों के पेट में बल पड़े गये।

आनन्द के इस मधुर स्रोत में कब कैसे कितने दिन बीत गये माया देवी को पता भी नहीं लगा। आत्मीय-स्वजन एक-एक करके विदा हो गये, अभ्यागतों का आना-जाना कम हो गया, हर दूसरे क्षण टेलीफोन का बजना बंद हो गया। लावण्य थी माया देवी की एकमात्र कन्या व हेमन्त की बहन। उसने भी एक दिन शिवानी को गले से लगा कर प्यार जताया और हँसी-खुशी विदा ली।

अब घर में रह गये मात्र तीन प्राणी—माया देवी, हेमन्त और शिवानी। आसपास जो लोग थे वे थे वेतनभोगी भृत्य वगैरह, जैसे आया के रूप में यशोदा, भृत्य नारायण, गुमाश्ता मनोहर, माली माधव और दो ड्राइवर—सुनील व रामसेवक। एक यशोदा को छोड़कर बाकी सब आउट हाउस में रहते थे। रसोइया देवानन्द सुबह छह बजने से पहले आता था और रात के दस बजे के बाद घर चला जाता था। उसका घर पास ही था। इन सब लोगों को लेकर माया देवी अपनी गृहस्थी एक तरह से घड़ी की सुई की तरह चलाती थीं।

एक दिन माया देवी शिवानी से बोलीं, अब तुम्हें क्या बताऊँ रुनु, इतने दिनों से यह सारा बोझ बस तुम दोनों के लिए सँभालती आ रही हूँ। सोचती थी, हेमन्त योरोप से लौटेगा, तुम हाथ में दीपक लेकर इस शून्य घर में आओगी और मुझे छुट्टी मिल जायेगी—हमेशा-हमेशा के लिए !

मुस्कुराकर शिवानी बोली, पर छुट्टी आपको दे कौन रहा है माँ ?

क्यों ! तुम दोगी रुनु—तुम्हारे परिचालन में रहूँगी मैं, बस समय ही समय रहेगा मेरे हाथ में।—कुछ रुककर फिर से माया देवी बोलीं, तुम आओगी यह सोचकर स्वयं अपने हाथों सब ठीक-ठाक करके रक्खा था। नहीं तो जरा सोचो रुनु, पाँच साल से ज्यादा हो गये मुझे अकेले प्रतीक्षा करते-करते कि कब लौटेगा मेरा हेमन्त ! अब जाकर मेरे सारे आयोजन सार्थक हुए। जब उनकी मृत्यु हुई मैं छब्बीस की भी नहीं थी। जिस समय वहू बनकर मैं इस घर में आई थी, बारह साल की लड़की थी।

शिवानी ने घूमकर देखा—बस बारह साल की ?

हँसकर माया देवी बोली, हाँ ! लहँगा पहनाकर माँ ने नौकरानी के साथ पार्क में घूमने के लिए भेजा था और दूसरे दिन से घटक का आना-जाना शुरू

हो गया था ।

शिवानी पास खिसक आई और माया देवी के ललाट पर आई बालों की लट को पीछे करके बोली, समझ गई मैं ! आप आज भी उतनी ही सुन्दर हैं माँ ! अच्छा, भला बताइए तो कि सब कुछ जानते-बूझते हुए भी मेरे जैसी धींगड़ी को आप घर में क्यों लाईं ?

शिवानी का सिर छाती से लगाकर माया देवी बोली, मेरे लिए यही अच्छी है, सबसे अच्छी । तुम्हें लाने के लिए तुम्हारे पिता जी आचार्य महाशय के पास न जाने कितने चक्कर लगाये हैं, तुमने तो देखा ही है ! भला रूप और गुण में मुझे तुम्हारे जैसी लड़की कहां मिलती ? जब हेमन्त हुआ, मेरी उम्र सोलह साल की थी और जब लावण्य पेट में आई तब मैं पूरे उन्नीस की भी नहीं हुई थी । दिन के समय भी लेटे-लेटे स्वप्न देखा करती थी कि मनपसन्द जमाई से शादी करूँगी लड़की की और मनपसन्द बहू लाऊँगी घर में लड़के के लिए ।

शिवानी हँस रही थी ।

माया देवी ने बात पूरी की, अब जाकर मेरी दोनों साध पूरी हुई हैं रनु ! आचार्य महाशय की मैं आजन्म कृतज्ञ रहूँगी ।

इसी समय बाहर हॉल में टेलीफोन की घंटी बजी । न मालूम किधर से आकर यशोदा ने टेलीफोन उठाया और कुछ क्षण बाद कमरे में आकर खबर दी, माँ, सरकार साहब बुला रहे हैं ।

कौन सरकार ?

श्यामबाजार से ।

माया देवी उठकर हॉल में गई और पीछे से स्मितवदन शिवानी उन्हें देखती रही । सच, नजरें ठहर जाती हैं उनके परिणत यौवन की उठान देखकर । पतली किनारी की महीन धोती पहनती थीं वे और हाथों में पतली-पतली दो-दो चूड़ियाँ । शिवानी ने कभी पूछा तो नहीं पर देखने में उनकी उम्र चालीस से भी कम लगती थी । सास होते हुए भी ननद जैसी लगती थीं ।

लौटने में कुछ विलम्ब हो गया माया देवी को । आते ही शुरू किया उन्होंने, तुम्हीं बताओ रनु, अब क्या यह सब अच्छा लगता है ? मेरा तो ख्याल है कि एक विशेष उम्र तक ही यह हो-हुल्लड़ अच्छा लगता है, उसके बाद भाटा शुरू हो जाता है । जैसे-जैसे उम्र बढ़ती है बंधु-बांधवों की संख्या कम होती जाती है ।

अंग्रेजी में इसको शायद पैराडॉक्स कहते हैं । शिवानी के कालेज जीवन में इन सब को लेकर खूब हुड़दंग मचता था । शिवानी ने मुस्कुरा कर सास की तरफ देखा और बोली—आपको शायद किसी पर गुस्सा आ रहा है माँ ।

ना, गुस्सा नहीं रुनु ! माया देवी ने न जाने कैसे एक बनावटी स्वर में जवाब दिया, हर जगह जाने कितने परिचित हैं, जो वक्त बे-वक्त तंग किया करते हैं। मैं उन्हें कैसे समझाऊँ कि अब मैं थोड़ा विश्राम चाहती हूँ। कुछ दिनों के लिए मेरे फाटक के बाहर की पृथ्वी चुप क्यों नहीं रहती। लावण्य कह रही थी मैं गुड़िया के खेल में डूब गई हूँ तो बुरा क्या है, यदि थोड़े दिन मैं अपने घर की गुड़िया से खेलूँ। बाहर की गुड़ियों का खेल अब बंद रहे कुछ काल के लिए।

बिल्कुल चुप एकटक सास को देख रही थी शिवानी। बीच-बीच में वह क्यों इस तरह देखती है समझना कठिन है। उस दृष्टि में नववधू का स्मितहास्य नहीं होता, लगता है जैसे उन दो बड़ी-बड़ी आँखों में अतल समुद्र का अंधकार छा गया हो, जहाँ आभास है, अनुमान है, किन्तु उसके अलावा उस अतल गहराई में क्या डूबा हुआ है यह पता नहीं चल पाता। उसकी यह शान्त दृष्टि मानो अन्तर्भेदी हो जिससे कोई बात छुपी नहीं रहती।

माया देवी जरा चौंकीं, कुछ कहना चाहती हो रुनु ?

शिवानी बोली, आप साहस दें तो कहूँ।

अरे, यह क्या कह रही हो रुनु ? माया देवी मुस्कुरा कर बोलीं, अभी तक तुम्हारा संकोच नहीं गया। मैं तुम्हें रुनु कह कर बुलाती हूँ, यह शायद तुम्हें अच्छा नहीं लगता। पर तुम चाहे कुछ भी कहो, शिवानी से मुझे रुनु ज्यादा अच्छा लगता है। जब रुनु कह कर तुम्हें बुलाती हूँ मेरे कानों में जैसे रुनझुन नूपुर बज उठते हैं। ना-ना, मैं तो रुनु ही कहूँगी तुम्हें।

मैंने इस विषय में तो कुछ नहीं कहा माँ।

तो फिर ?—माया देवी ने नजरें उठाईं।

शिवानी बोली, ज्यादा आदमी होने के कारण ही आपका झंझट बढ़ गया है माँ। सुबह से रात तक आप परेशान रहती हैं, जरा-सा भी आराम नहीं मिलता आपको।

जिज्ञासु दृष्टि से माया देवी ने पुत्रवधू की ओर देखा।

भीरु एवं द्विधा-जड़ित कंठ से शिवानी बोली, यहाँ हम केवल तीन जने हैं, लेकिन बाहर के आदमी सात हैं। इतने आदमियों को रखने से क्या फायदा माँ ?

जरा अप्रतिभ होकर माया देवी बोलीं, तुम्हारी दृष्टि बड़ी सजग है रुनु। यह बात इससे पहले कभी किसी ने मुझसे नहीं कही।

शिवानी को जैसे थोड़ा साहस मिल गया; बोली, अब देखिए, दो ड्राइवर, गुमाश्ता, रसोइया—ये सब फालतू हैं। मेरा ख्याल है—

हठात् माया देवी हँस पड़ीं। बोलीं, गाड़ी कौन चलायेगा रुनु ? और रसोइया

नहीं रहेगा तो खाना कौन बनायेगा ?

क्यों माँ, दो वक्त खाना बनाना कौन-सा बड़ा काम है ? फिर हम कुल तीन ही तो हैं। रही गाड़ी चलाने की बात, तो क्या एक ड्राइवर काफी नहीं है माँ ? गुमाश्ते की क्या जरूरत है ? नारायण है—माधव है, खरीद-फरोख्त ये लोग कर लेंगे ! और फिर मैं भी तो सारा दिन खाली बैठी रहती हूँ।

सब कुछ सुन कर माया देवी को हँसी आ रही थी, पर उसे दबा कर बोलीं, अच्छा रुनु, तुमने संस्कृत में एम० ए० पास कर लिया और बँगला में दिया है, लेकिन बँगला के बजाय तुमने इकॉनॉमिक्स में एम० ए० की परीक्षा क्यों नहीं दी ? इन तीन जनों को निकाल कर तुम अपने घर का खर्च तो बचा लोगी, पर इन तीनों के बेकार हो जाने से तीन परिवार क्या भूखे नहीं मरेंगे ? जो रुपया तुम बचाओगी वह तो 'ब्लैक मनी' है; और फिर रुपया-पैसा खर्च करने से ही तो रोल करता है।

बात सुनने में तो अच्छी थी लेकिन युक्तिपूर्ण नहीं थी। हँस कर शिवानी बोली, अरे हाँ, सच में इस तरफ तो मेरा ख्याल ही में नहीं गया माँ ! आपकी बात बिल्कुल ठीक है।

किन्तु शिवानी का मूल प्रतिपाद्य विषय माया देवी के मन में घर कर गया। इसका मतलब है इस घर के आय-व्यय के संबंध में रुनु आवश्यकता से अधिक चौकसी है और उसकी नजरों से कुछ छिपा नहीं रहता। कौन-सी चीज अहितकर है वह जानती है, क्या अनावश्यक है वह समझती है।

तुम्हारे घर खाना कौन बनाता था, रुनु ?

क्यों, कभी बुआ, कभी मैं !

विस्मित स्वर में माया देवी बोलीं, अरे, तुमने पहले कभी नहीं बताया कि तुम्हें खाना बनाना आता है।

हँसते-हँसते शिवानी के पेट में बल पड़ गये। बोली, यह आप क्या कह रही हैं माँ ? खाना बनाना भला कौन लड़की नहीं जानती ? यह भी कोई बताने की बात है !

पर तुम्हारे हाथों या उँगलियों में किसी तरह के दाग तो नहीं हैं। फिर तुम्हारी पढ़ाई-लिखाई, कालेज जाना, आचार्य महाशय की देखभाल करना, यह सब करने के बाद तुम्हें समय कैसे मिलता था ? और फिर बी० ए० में तुमने अँग्रेजी में आनर्स किया था न ?

अब शिकायत के स्वर में शिवानी बोली, आप तो लज्जित कर रही हैं माँ। पिता जी के यहाँ काम ही कितना था ? इतना भी नहीं करती तो मेरे ह—

ना, गुस्सा नहीं रुनु ! माया देवी ने न जाने कैसे एक बनावटी स्वर में जवाब दिया, हर जगह जाने कितने परिचित हैं, जो वक्त बे-वक्त तंग किया करते हैं। मैं उन्हें कैसे समझाऊँ कि अब मैं थोड़ा विश्राम चाहती हूँ। कुछ दिनों के लिए मेरे फाटक के बाहर की पृथ्वी चुप क्यों नहीं रहती। लावण्य कह रही थी मैं गुड़िया के खेल में डूब गई हूँ तो बुरा क्या है, यदि थोड़े दिन मैं अपने घर की गुड़िया से खेलूं। बाहर की गुड़ियों का खेल अब बंद रहे कुछ काल के लिए।

बिल्कुल चुप एकटक सास को देख रही थी शिवानी। बीच-बीच में वह क्यों इस तरह देखती है समझना कठिन है। उस दृष्टि में नववधू का स्मितहास्य नहीं होता, लगता है जैसे उन दो बड़ी-बड़ी आँखों में अतल समुद्र का अंधकार छा गया हो, जहाँ आभास है, अनुमान है, किन्तु उसके अलावा उस अतल गहराई में क्या डूबा हुआ है यह पता नहीं चल पाता। उसकी यह शान्त दृष्टि मानो अन्तर्भेदी हो जिससे कोई बात छुपी नहीं रहती।

माया देवी जरा चौंकीं, कुछ कहना चाहती हो रुनु ?

शिवानी बोली, आप साहस दें तो कहूँ।

अरे, यह क्या कह रही हो रुनु ? माया देवी मुस्कुरा कर बोलीं, अभी तक तुम्हारा संकोच नहीं गया। मैं तुम्हें रुनु कह कर बुलाती हूँ, यह शायद तुम्हें अच्छा नहीं लगता। पर तुम चाहे कुछ भी कहो, शिवानी से मुझे रुनु ज्यादा अच्छा लगता है। जब रुनु कह कर तुम्हें बुलाती हूँ मेरे कानों में जैसे रुनझुन नूपुर बज उठते हैं। ना-ना, मैं तो रुनु ही कहूँगी तुम्हें।

मैंने इस विषय में तो कुछ नहीं कहा माँ।

तो फिर ?—माया देवी ने नजरें उठाईं।

शिवानी बोली, ज्यादा आदमी होने के कारण ही आपका झंझट बढ़ गया है माँ। सुबह से रात तक आप परेशान रहती हैं, जरा-सा भी आराम नहीं मिलता आपको।

जिज्ञासु दृष्टि से माया देवी ने पुत्रवधू की ओर देखा।

भीरु एवं द्विधा-जड़ित कंठ से शिवानी बोली, यहाँ हम केवल तीन जने हैं, लेकिन बाहर के आदमी सात हैं। इतने आदमियों को रखने से क्या फायदा माँ ?

जरा अप्रतिभ होकर माया देवी बोलीं, तुम्हारी दृष्टि बड़ी सजग है रुनु। यह बात इससे पहले कभी किसी ने मुझसे नहीं कही।

शिवानी को जैसे थोड़ा साहस मिल गया; बोली, अब देखिए, दो ड्राइवर, गुमाश्ता, रसोइया—ये सब फालतू हैं। मेरा ख्याल है—

हठात् माया देवी हँस पड़ीं। बोलीं, गाड़ी कौन चलायेगा रुनु ? और रसोइया

नहीं रहेगा तो खाना कौन बनायेगा ?

क्यों माँ, दो वक्त खाना बनाना कौन-सा बड़ा काम है ? फिर हम कुल तीन ही तो हैं। रही गाड़ी चलाने की बात, तो क्या एक ड्राइवर काफी नहीं है माँ ? गुमाश्ते की क्या जरूरत है ? नारायण है—माधव है, खरीद-फरोख्त ये लोग कर लेंगे ! और फिर मैं भी तो सारा दिन खाली बैठी रहती हूँ।

सब कुछ सुन कर माया देवी को हँसी आ रही थी, पर उसे दबा कर बोलीं, अच्छा रुनु, तुमने संस्कृत में एम० ए० पास कर लिया और बँगला में दिया है, लेकिन बँगला के बजाय तुमने इकॉनॉमिक्स में एम० ए० की परीक्षा क्यों नहीं दी ? इन तीन जनों को निकाल कर तुम अपने घर का खर्च तो बचा लोगी, पर इन तीनों के बेकार हो जाने से तीन परिवार क्या भूखे नहीं मरेंगे ? जो रुपया तुम बचाओगी वह तो 'ब्लैक मनी' है; और फिर रुपया-पैसा खर्च करने से ही तो रोल करता है।

बात सुनने में तो अच्छी थी लेकिन युक्तिपूर्ण नहीं थी। हँस कर शिवानी बोली, अरे हाँ, सच में इस तरफ तो मेरा ख्याल ही में नहीं गया माँ ! आपकी बात बिल्कुल ठीक है।

किन्तु शिवानी का मूल प्रतिपाद्य विषय माया देवी के मन में घर कर गया। इसका मतलब है इस घर के आय-व्यय के संबंध में रुनु आवश्यकता से अधिक चौकन्नी है और उसकी नजरों से कुछ छिपा नहीं रहता। कौन-सी चीज अहितकर है वह जानती है, क्या अनावश्यक है वह समझती है।

तुम्हारे घर खाना कौन बनाता था, रुनु ?

क्यों, कभी बुआ, कभी मैं !

विस्मित स्वर में माया देवी बोलीं, अरे, तुमने पहले कभी नहीं बताया कि तुम्हें खाना बनाना आता है।

हँसते-हँसते शिवानी के पेट में बल पड़ गये। बोली, यह आप क्या कह रही हैं माँ ? खाना बनाना भला कौन लड़की नहीं जानती ? यह भी कोई बताने की बात है !

पर तुम्हारे हाथों या उँगलियों में किसी तरह के दाग तो नहीं हैं। फिर तुम्हारी पढ़ाई-लिखाई, कालेज जाना, आचार्य महाशय की देखभाल करना, यह सब करने के बाद तुम्हें समय कैसे मिलता था ? और फिर बी० ए० में तुमने अँग्रेजी में आनर्स किया था न ?

अब शिकायत के स्वर में शिवानी बोली, आप तो लज्जित कर रही हैं माँ, पिता जी के यहाँ काम ही कितना था ? इतना भी नहीं करती तो मेरे

पाँवों में जंग नहीं लग जाता। और लिखाई-पढ़ाई जो कुछ की उसमें मैंने कौन-सी वड़ी वहादुरी दिखाई माँ ? आजकल कौन-सी लड़की नहीं पढ़ती-लिखती ?

दत्तचित्त होकर माया देवी शिवानी की वातें सुन रही थीं। जव शिवानी अपनी वात खत्म कर चुकी तो उन्होंने पूछा, तुम क्या कालेज पाँव से चल कर जाती थी ?

हाँ ! या तो पाँव से चल कर या वस में ! क्यों ?

लेकिन वरसात के दिनों में जव सड़कों पर कीचड़ हो जाता था ?

शिवानी हँस कर वोली, जो हाल और सव लड़कियों का होता था वही मेरा भी होता था। धूप में जलती थी, वारिश में भीगती थी।

माया देवी ने प्रश्न किया, फिर तो कलकत्ते के सारे रास्ते तुम्हारे जाने-पहचाने होंगे ?

हाँ—

तो फिर उस दिन रामसेवक की गाड़ी में अकेली क्यों नहीं गई ? वह.... उस दिन, जव मैंने कहा था अपने पिता जी के पास हो आओ।

शिवानी वोली, इस घर के सम्मान की खातिर अकेली नहीं गई माँ।

अव तुम ठीक रास्ते पर आई रुनु। इसी का नाम है प्रेस्टिज ! इस घर से लोगों को छुट्टी नहीं दी जाती, यहाँ खर्च की वात नहीं सोची जाती—यह भी प्रेस्टिज का एक प्वाइंट है। इसी तरह सदा से चला आ रहा है। वारह साल की उम्र में जव मैं इस में आई थी तो मेरे ससुर ने मुझे लिखाया-पढ़ाया था, लेकिन मेरे लिए एक अलग गाड़ी थी, अलग आया थी और अलग ही मेरा महल था। उन्होंने कभी मुझे कुछ नहीं करने दिया। अव तुम सोचो तो रुनु, मैं अकेली विधवा औरत, दो छोटे-छोटे वच्चे, इतना वड़ा वाग-वगीचा, घर और अजस्र अपार दौलत—चारों ओर विलास-वैभव ! आज तुम जिन लोगों को निकालने के लिए कह रही हो, वही लोग तो इतने दिनों से पहरा देते आ रहे हैं। कौन सँभालता था मुझे जव हेमन्त योरोप में था ? यही लोग न ? ये वुरे वक्त के साथी हैं रुनु। आज हेमन्त की शादी के वाद यदि उन्हें तुम निकाल दोगी तो उनका आक्रोश तुम पर होगा और यह मैं सह नहीं पाऊँगी रुनु ! यह परिवार प्रतिष्ठित है, सम्भ्रान्त है, वहुत पुराना है।

तर्क ठोस था और साथ ही माया देवी की सुविवेचना का परिचायक भी। शिवानी वोली, आप ठीक कहती हैं माँ। इन सव वातों की ओर उस वक्त मेरा ध्यान नहीं गया था।

फिर से टेलीफोन की घंटी टनटना उठी। इस बार माया देवी ने स्वयं जाकर रिसीवर उठाया, हलो, कौन लावण्य ? क्यों री ?

उधर से लावण्य बोली, माँ, तुम मुझे अभी इसी वक्त बुलाओ। पंद्रह दिन हो गये, मैंने भाभी को नहीं देखा।

हँसते-हँसते माया देवी बोलीं, क्यों री मुँहजली, तुझे भी अब बुलाना पड़ेगा? बोल कब आ रही है ?

लावण्य बोली, आज शाम को हम सब तुम्हारे यहाँ आ रहे हैं।

ठीक है, मैं रुनु से कह दूँगी, तू आ जाना जरूर शाम से पहले।

हेमन्त के आफिस से लौटने का समय हो रहा था। शिवानी की दोपहर अच्छी ही कट जाती है। हेमन्त की तरफ का हिस्सा जरा अलग सा पड़ता था, अतः शिवानी वहाँ करीब-करीब अकेली रहती थी। सास रहती थी अपनी तरफ और उनके साथ परछाईं की तरह रहती यशोदा। घर काफी बड़ा था। नीचे का एक हिस्सा आसानी से किराये पर उठाया जा सकता था, किन्तु यह इस घर की रीति नहीं थी, इज़्ज़त पर बट्टा लगता था इससे ! यहाँ तो व्यय की बहुलता ही सम्मानजनक समझी जाती थी। शादी के पहले शिवानी सोचा करती थी, अपनी विद्या के बल पर वह आसानी से शिक्षिका बनकर उपार्जन कर सकती है। लेकिन शादी के बाद अब तो कभी-कभी सोचती है, क्यों मैंने बेकार दो-दो बार एम० ए० किया। विद्या की सार्थकता तो उसके वितरण में है, नहीं तो विद्या का मूल्य कुछ भी नहीं ! कुल तीन सप्ताह हुए हैं विवाह को, किन्तु इन्हीं २१ दिनों में उसे अपने भविष्य की आखिरी सीमा स्पष्ट दिखाई देने लगी है। पति में किसी प्रकार की कोई कमी नहीं है—उसका पति है रूपवान, गुणवान, योग्य और स्वस्थ। विदेश की उच्च डिग्री है हाथ में और यथेष्ट उपार्जन ! ऐसा आदर्श पति व सास, ऐसा सुखी परिवार मिलना, लड़की अपना परम सौभाग्य समझती है। लेकिन इसका मतलब है शिवानी सदा निष्क्रिय रहेगी। दासी काम करेगी, रसोइया खाना बनायेगा, नौकर हुक्म बजायेगा, गुमाश्ता खरीद-फरोख्त करेगा, ड्राइवर गाड़ी चलायेगा, दर्जी कपड़े सियेगा और सास अपने हाथों पुत्र-वधू की सेज सजायेगी—और शिवानी ? कुछ नहीं करना था तो शिवानी आधुनिक युग के अनुसार क्यों पली-पनपी ? बेकार में इतनी पढ़ाई-लिखाई क्यों की ? जिस विद्या का कहीं प्रयोग न होता हो, उस विद्या की सार्थकता ही क्या

पाँवों में जंग नहीं लग जाता। और लिखाई-पढ़ाई जो कुछ की उसमें मैंने कौन-सी बड़ी बहादुरी दिखाई माँ? आजकल कौन-सी लड़की नहीं पढ़ती-लिखती?

दत्तचित्त होकर माया देवी शिवानी की बातें सुन रही थीं। जब शिवानी अपनी बात खत्म कर चुकी तो उन्होंने पूछा, तुम क्या कालेज पाँव से चल कर जाती थी?

हाँ! या तो पाँव से चल कर या बस में! क्यों?

लेकिन बरसात के दिनों में जब सड़कों पर कीचड़ हो जाता था?

शिवानी हँस कर बोली, जो हाल और सब लड़कियों का होता था वही मेरा भी होता था। धूप में जलती थी, बारिश में भीगती थी।

माया देवी ने प्रश्न किया, फिर तो कलकत्ते के सारे रास्ते तुम्हारे जाने-पहचाने होंगे?

हाँ—

तो फिर उस दिन रामसेवक की गाड़ी में अकेली क्यों नहीं गई? वह.... उस दिन, जब मैंने कहा था अपने पिता जी के पास हो आओ।

शिवानी बोली, इस घर के सम्मान की खातिर अकेली नहीं गई माँ।

अब तुम ठीक रास्ते पर आई रुनु। इसी का नाम है प्रेस्टिज! इस घर से लोगों को छुट्टी नहीं दी जाती, यहाँ खर्च की बात नहीं सोची जाती—यह भी प्रेस्टिज का एक प्वाइंट है। इसी तरह सदा से चला आ रहा है। बारह साल की उम्र में जब मैं इस में आई थी तो मेरे ससुर ने मुझे लिखाया-पढ़ाया था, लेकिन मेरे लिए एक अलग गाड़ी थी, अलग आया थी और अलग ही मेरा महल था। उन्होंने कभी मुझे कुछ नहीं करने दिया। अब तुम सोचो तो रुनु, मैं अकेली विधवा औरत, दो छोटे-छोटे बच्चे, इतना बड़ा बाग-बगीचा, घर और अजस्र अपार दौलत—चारों ओर विलास-वैभव! आज तुम जिन लोगों को निकालने के लिए कह रही हो, वही लोग तो इतने दिनों से पहरा देते आ रहे हैं। कौन सँभालता था मुझे जब हेमन्त योरोप में था? यही लोग न? ये बुरे वक्त के साथी हैं रुनु। आज हेमन्त की शादी के बाद यदि उन्हें तुम निकाल दोगी तो उनका आक्रोश तुम पर होगा और यह मैं सह नहीं पाऊँगी रुनु! यह परिवार प्रतिष्ठित है, सम्भ्रान्त है, बहुत पुराना है।

तर्क ठोस था और साथ ही माया देवी की सुविवेचना का परिचायक भी। शिवानी बोली, आप ठीक कहती हैं माँ। इन सब बातों की ओर उस वक्त मेरा ध्यान नहीं गया था।

फिर से टेलीफोन की घंटी टनटना उठी। इस बार माया देवी ने स्वयं जाकर रिसीवर उठाया, हलो, कौन लावण्य ? क्यों री ?

उधर से लावण्य बोली, माँ, तुम मुझे अभी इसी वक्त बुलाओ। पंद्रह दिन हो गये, मैंने भाभी को नहीं देखा।

हँसते-हँसते माया देवी बोलीं, क्यों री मुंहजली, तुझे भी अब बुलाना पड़ेगा ? बोल कब आ रही है ?

लावण्य बोली, आज शाम को हम सब तुम्हारे यहाँ आ रहे हैं।

ठीक है, मैं रुनु से कह दूँगी, तू आ जाना जरूर शाम से पहले।

हेमन्त के आफिस से लौटने का समय हो रहा था। शिवानी की दोपहर अच्छी ही कट जाती है। हेमन्त की तरफ का हिस्सा जरा अलग सा पड़ता था, अतः शिवानी वहाँ करीब-करीब अकेली रहती थी। सास रहती थी अपनी तरफ और उनके साथ परछाईं की तरह रहती यशोदा। घर काफी बड़ा था। नीचे का एक हिस्सा आसानी से किराये पर उठाया जा सकता था, किन्तु यह इस घर की रीति नहीं थी, इज़्ज़त पर बट्टा लगता था इससे ! यहाँ तो व्यय की बहुलता ही सम्मानजनक समझी जाती थी। शादी के पहले शिवानी सोचा करती थी, अपनी विद्या के बल पर वह आसानी से शिक्षिका बनकर उपार्जन कर सकती है। लेकिन शादी के बाद अब तो कभी-कभी सोचती है, क्यों मैंने बेकार दो-दो बार एम० ए० किया। विद्या की सार्थकता तो उसके वितरण में है, नहीं तो विद्या का मूल्य कुछ भी नहीं ! कुल तीन सप्ताह हुए हैं विवाह को, किन्तु इन्हीं २१ दिनों में उसे अपने भविष्य की आखिरी सीमा स्पष्ट दिखाई देने लगी है। पति में किसी प्रकार की कोई कमी नहीं है—उसका पति है रूपवान, गुणवान, योग्य और स्वस्थ। विदेश की उच्च डिग्री है हाथ में और यथेष्ट उपार्जन ! ऐसा आदर्श पति व सास, ऐसा सुखी परिवार मिलना, लड़की अपना परम सौभाग्य समझती है। लेकिन इसका मतलब है शिवानी सदा निष्क्रिय रहेगी। दासी काम करेगी, रसोइया खाना बनायेगा, नौकर हुक्म बजायेगा, गुमाश्ता खरीद-फरोख्त करेगा, ड्राइवर गाड़ी चलायेगा, दर्जी कपड़े सियेगा और सास अपने हाथों पुत्र-वधू की सेज सजायेगी—और शिवानी ? कुछ नहीं करना था तो शिवानी आधुनिक युग के अनुसार क्यों पली-पनपी ? बेकार में इतनी पढ़ाई-लिखाई क्यों की ? जिस विद्या का कहीं प्रयोग न होता हो, उस विद्या की सार्थकता ही क्या

रह जाती है ! हेमन्त विदेश से ऊँची डिग्री लेकर लौटा है, अब देश की प्रगति के लिए उसका उपयोग हो रहा है इसीलिए तो उसका मूल्य है।

सुसज्जित शयन-कक्ष की खाली जगह में बड़ी-बड़ी ठीक की दो आलमारियाँ हैं जिनमें मूल्यवान पुस्तकें भरी हुई हैं, किन्तु शिवानी को जैसे उनकी उपयोगिता का कोई आभास नहीं है। यद्यपि मात्र तीन सप्ताह पहले इनमें से एक-एक किताब उसके लिए अलभ्य थी।

शिवानी बैठी यह सब सोच ही रही थी कि दरवाजे पर हँसता हुआ हेमन्त दिखाई दिया।

पलक झपकते दौड़कर दरवाजे पर जा पहुँची वह और हेमन्त के गले में दोनों हाथ डालकर बोली, ना, आज मैं कुछ न सुनूँगी, आज से तुम्हारी टाई और कमीज के बटन मैं ही खोला करूँगी।

मुस्कुरा कर हेमन्त ने शिवानी को बाँहों में भर लिया और बोला, लेकिन इतने पास आने पर यदि मेरा मन काबू में न रहे तो ?

क्यों, काबू में क्यों नहीं रहेगा ? मैं कुछ कह थोड़े ही रही हूँ।—टाई खोलते-खोलते शिवानी बोली, मुझे मालूम था तुम पौने दो बजे आओगे। डेढ़ बजे तुम्हारी छुट्टी होती है। मेरी आँखें घड़ी की सुई पर ही थीं। आज शनिवार है न !

प्यार जताता हुआ हेमन्त बोला, रुनु, आज भी तुम्हारे अंग-अंग में वही ...व बसी हुई है। वही जूही के फूलों की, जिसकी माला तुमने फूलशय्या के दिन ...नी थीं। अच्छा बताओ तो नववधू की सुगंध क्या शादी के बाद बहुत दिनों तक रहती है ?

हाँ, रहती है, बहुत दिनों तक रहती है। हमेशा रहती है।

हेमन्त हँस रहा था। जरा रुक कर शिवानी बोली, तुम्हें अच्छी तरह मालूम है कि यह गंध मेरी नहीं—तुम्हारी है।' कस्तूरी की तरह तुम मेरे अंग-अंग में बस गये हो। अब आओ न !—उठो खड़े होओ। मैं पायजामा और तौलिया लाये देती हूँ। सब तैयार है—

भाग कर शिवानी पायजामा व तौलिया ले आई और दोनों चीजें उसके हाथ से लेकर हेमन्त ड्रेसिंग रूम में चला गया।

आनन्दोल्लास से चंचल हो उठी थी शिवानी। समझ में नहीं आता था कि यह उसकी अन्तर्गूढ़ निष्क्रियता की प्रतिक्रिया थी या कुछ और। शून्य अट्टालिका की अनियंत्रित स्वाधीनता में भी कभी-कभी उसका ऐसा व्यवहार मानो किसी वन्दिनी के मनोभावों को प्रकट करता था। विस्मयकारक था उसका यह व्यवहार।

कुर्ता पहनते-पहनते हेमन्त ड्रेसिंग रूम से निकला और कोच पर बैठकर बोला—मालूम है रुनु, मैं क्या सोच रहा हूँ ?

शिवानी पास आकर बैठ गई और नजरें उठाकर बोली—क्या ?

आठ दिन होने को आये, तुमने अपने पिता जी को नहीं देखा !

सिर हिलाया शिवानी ने। ओह ! तुम शायद यही बेकार की बातें सोचते रहते हो। अरे ! पिता जी को तो चौबीस साल तक देखती रही हूँ, अब सारा जीवन पति को देखूं। अच्छा, तुम कैसे आदमी हो जी ! मुझे भला पिता जी के पास क्यों भेजना चाहते हो ? क्या किया है मैंने ?

पगली कहीं की !—हेमन्त ने अपने बलिष्ठ हाथों से पास खींचकर आलिंगन में बाँध लिया उसे। मैं तो तुम्हें कहीं भी नहीं भेजना चाहता !—अच्छा रुनु ! हमारी शादी अब होने के बजाय अगर पाँच साल पहले हो गई होती तो कितना अच्छा होता ! हम दोनों योरोप चले जाते और खूब मौज करते ! क्यों ?

गद्गद कंठ से शिवानी बोली, उस वक्त तुम्हारी उम्र थी बाईस साल और मेरी उन्नीस। जो देखता कहता नाबालिग लोग हैं।

कुछ नहीं जानती तुम, कुछ भी नहीं समझती—हेमन्त उसके गाल से गाल रगड़कर बोला, योरोप में आजकल यह खेल ग्यारह और चौदह साल की उम्र से शुरू हो जाता है—तुम कुछ भी खबर नहीं रखती।

घोर आवेश के कारण मधुर तन्द्रा छा गई शिवानी की आँखों में ! बोली—अच्छा बताओ तो तुम्हें क्या कहकर बुलाया करूँ ?

अरे, तुम्हें बुलाने का समय ही क्यों दूँगा मैं ?—मुस्कुराकर हेमन्त बोला, बिना बुलाये ही मैं दौड़ा चला आया करूँगा।

अच्छा-अच्छा वह तो सब ठीक है; पर तब भी बोलो ना, क्या कहा करूँ तुम्हें ?—'ओ जी', 'सुनते हो'—यह सब कहना तो मुझे अच्छा नहीं लगता।

तो फिर एक काम करो—हेमन्त ने उसके कान के पास मुँह ले जाकर जाने क्या तो कहा।

शिवानी बोली, क्या कहा ? नाम लेकर पुकारूँ पति का ? और तुम ... जो हो।

हेमन्त बोला, तो फिर एक काम करो, रुनु। दिन के वक्त केवल मैं तुम्हें पुकारा करूँगा और तुम मुझे रात को पुकारना—सब जब सो जायें, प्रकाश जब अपनी आँखें बंद कर ले—तब तुम मेरे कान में नाम लेकर बुलाना।

हेमन्त की छाती से लगी आनन्द-विभोर शिवानी ललित, जड़ित स्वर में बोली, ना, कान में नहीं—!

तो फिर ?

कनक चम्पा की तरह अपनी उँगलियाँ हेमन्त के अधरों पर फिराते हुए दबे स्वर में शिवानी बोली, कान में नहीं, मुख से मुख पर—

इशारा समझते ही हेमन्त शिवानी के अधरों पर अपने अधर रखने जा ही रहा था कि बाहर से माया देवी की आवाज आई, हेमन्त....कब आया तू ?

पर्दा हटाकर वे कमरे के अन्दर आ गईं। हेमन्त बोला, अभी थोड़ी देर पहले आया माँ।

शिवानी की ओर नजरें घुमाकर देखा माया देवी ने। फिर बोली, जरा लेट गई थी ! अचानक ख्याल आया कि आज तो शनिवार है। रोज अगर तेरा हाफ डे रहता तो रुनु का मन ज्यादा अच्छा रहता। क्यों रुनु ?

माँ के साथ हेमन्त भी हा-हा करके हँस उठा, किन्तु घूँघट के नीचे रुनु के मुख पर हँसी की आभा दिखाई नहीं दी। जननी के लिए इस तरह का परिहास उचित है कि नहीं, शायद यही सोच रही थी वह।

लड़के के पास अच्छी तरह जमकर बैठ गई माया देवी; फिर मुस्कुराते हुए बोली, ऐसी शर्मीली लड़की है कि क्या बताऊँ। मैं स्वयं जब इस घर में बहू बनकर आई थी तो घूँघट था मुख पर, पर रुनु को कैसे समझाऊँ कि अब वह जमाना नहीं रहा। अरे, पुत्रवधू का मतलब हो लड़की है ! क्या जरूरत है रुनु, इस घूँघट की और फिर तुम्हारी जैसी आधुनिक लड़की मेरी जान-पहचान वालों में तो कोई और है नहीं !

हेमन्त ने जवाब दिया, हाँ माँ, मैं भी यही सोचता हूँ। लेकिन फिर मेरे मन में क्या आता है बताऊँ ? तुम्हारी बहू एक दिन स्वयं ही घूँघट उलटकर सीधी खड़ी हो जायेगी; प्रतीक्षा ही क्यों न की जाय—

हँसते-हँसते माया देवी उठकर खड़ी हो गईं और बोलीं, रुनु, तुम शायद हेमन्त को खाने के लिए कहना भूल गईं ?

मृदु स्वर में शिवानी ने जवाब दिया, उन्होंने मना कर दिया !

हाँ माँ, रुनू ने तो मुझसे कई बार कहा—हेमन्त ने साफ झूठ बोलते हुए

कहा, लेकिन मैं आज लंच अपने अफसरों के साथ ही खा आया था। इसलिए अब भूख नहीं है।

हाँ, मैं भी तो कहूँ क्या बात है जो खाया नहीं। जाते-जाते माया देवी बोलीं, जानती हो रुनु, पुरुष घोड़े की तरह होता है। रास खोलते ही घास डालनी पड़ती है उसके आगे।

और पर्दा हटाकर बाहर निकल गईं माया देवी।

शिवानी हेमन्त का ट्राउजर ब्रश से झाड़कर हैंगर में टाँग आई। टेरेलीन की शर्ट मैले कपड़ों में डाल दी और मोजे भी उसी के साथ रख दिये।

हेमन्त मन ही मन हँस रहा था; बोला, किसको मालूम था माँ एकदम चरम मुहूर्त पर आ पहुँचेंगी। मैं तो....सुनो रुनु, दबे स्वर में हेमन्त बोला, मैंने लेकिन कुछ खाया नहीं है—

घूमकर खड़ी हो गई रुनु और हँसते-हँसते बोली, मुझे पता चल गया था—।

पता चल गया था ? वो कैसे ?

तुम्हारे गले की आवाज से।

आश्चर्यचकित होकर हेमन्त ने शिवानी की ओर देखा और बोला, माँ जिस चीज को नहीं पकड़ पाई, तुमने समझ ली ?

लेकिन माँ से तुम झूठ क्यों बोले ? सच में गलती तो मेरी है। मुझे पहले पूछना चाहिए था।

कहकर शिवानी कमरे से निकल गई और पाँच मिनट में एक प्लेट में दो पीस पुडिंग के, दो केक और थोड़े भुने हुए नमकीन काजू बादाम ले आई। छोटी तिपाई पर प्लेट हेमन्त के सामने रखकर बोली, पानी चढ़ा दिया है, कॉफी बनाये देती हूँ।

और पास आकर बैठ गई शिवानी।

हेमन्त बोला,'अच्छा बताओ तो, तुम जो चीजें खाने के लिए लाई हो, उसमें तुम्हारी प्रिय वस्तु कौन-सी है ?

मेरी ?—शिवानी बोली, सच बताऊँ तो कोई भी नहीं !

मतलब ?—चकित होकर देखा हेमन्त ने।

केक पुडिंग खाकर मैं बड़ी नहीं हुई। थोड़ा-बहुत कभी-कभी खाया है, पर अभ्यास नहीं है। अभी तक कॉफी हमारे घर में नहीं आई; चाय जरूर थोड़ी-बहुत आती है, वह भी इसलिए कि बुआ कभी-कभी पीती हैं।

और तुम्हारे पिता जी ?

हँसकर बोली शिवानी—वह तो छूते भी नहीं। यही क्या, हमारे यहाँ तो

अंडा, मांस, प्याज या लहसुन आदि कोई छूता तक नहीं। हाँ, मछली अवश्य खाते हैं पिता जी।

और तुम ? तुम तो आधुनिक युग की हो, कालेज की छात्रा रही हो।

हाँ, रही हूँ—इसीलिए कभी-कभी सहेलियों के जिद्द पकड़ लेने पर आधुनिकता के साथ ताल मिलाकर चलना पड़ता था, लेकिन रुचि उत्पन्न नहीं हुई अभी तक। मुस्कुरा कर शिवानी ने बात पूरी की।

एकाएक हेमन्त गम्भीर हो गया। दो मिनट बाद जैसे ही वह उठकर खड़ा हुआ, शिवानी पास आकर बोली, यह क्या ? बिना खाये तुम उठ कर खड़े हो गये ?

हेमन्त बोला, तुम नहीं खाओगी तो फिर मेरी इच्छा ही कैसे रहेगी रुनु ? मैं जाता हूँ माँ से पूछने....

क्या पूछने ?

यही कि तुम क्या खाती हो, क्या नहीं खाती हो। मुझे भी तो पता रहना चाहिए।

हेमन्त का एक हाथ पकड़कर शिवानी बोली, छि: छि:, ये बातें क्या माँ से कहने की हैं ? जानना ही चाहोगे तो मैं बताऊँगी। चलो बैठो—अब चुपचाप खाना शुरू करो। अच्छा मैं भी खाती हूँ तुम्हारे साथ। अब बैठ भी जाओ—

शिवानी ने दो-तीन बादाम उठा लिये। एक बादाम मुँह में डालकर बोली, ये सभी अच्छी चीजें हैं, बस मुझे आदत नहीं है। इतनी सी तो बात है।

हेमन्त ने खाना शुरू किया। बीच में शिवानी उठकर गई और कुछ क्षणों में ही एक ट्रे में कॉफी का सामान सजाकर ले आई। पीछे से यशोदा ने मुस्कुराते हुए झाँक कर देखा एक बार।

केक पुडिंग खतम करके बादाम मुँह में डाला हेमन्त ने और मुस्कुरा कर बोला—इसका मतलब यह निकला कि मैं पाँच साल योरोप रह आया लेकिन पत्नी अब भी मुझे बालिग नहीं समझती ! क्यों ?

एक बादाम उठाकर शिवानी ने हेमन्त के मुँह में डाला और बोली, बिलकुल !

और दोनों जने हँसते-हँसते दुहरे हो गये।

वाहर पुरुष व महिलाओं का कोलाहल जिस वक्त सुनाई दिया, दिन का तीसरा पहर वीत रहा था। लावण्य आज अकेली नहीं आई थी। शायद उसने चारों तरफ यह फैला दिया था कि मैत्र-परिवार में ऐसी लड़की पहले कभी नहीं आई और आजकल ऐसी लड़की दीया लेकर ढूंढ़ने पर भी नहीं मिलेगी। फलस्वरूप उसकी दो सहपाठिनी तो साथ में आई हीं लेकिन रिश्ते की एक ननद वयस्का कुमारी इला देवी भी उपस्थित थी। आते समय वह अपने पति सन्तोष एवं देवर सुप्रिय को भी पकड़ लाई।

वाहर के कमरे में सव को वैठा कर लावण्य दौड़ती-दौड़ती अन्दर आई— भाभी !

उधर वनावटी स्वर में हेमन्त चिल्ला कर वोला—चीख-चीख कर सारा घर सिर पर उठा लिया, उधर तेरी भाभी कितनी परेशान है, पता है ?

चौंक कर रुक गई लावण्य। पास जाकर शिवानी के गले में हाथ डाल कर वोली, क्या हुआ भाभी ? क्या तो कह रहे हैं भैया ?

शिवानी हँस कर वोली, कुछ नहीं हुआ वीवी जी, वह तुम्हें चिढ़ा रहे हैं। पुरुषों की आदत जो होती है।

आँखें निकाल कर देखा लावण्य ने भैया की तरफ। फिर गुस्से से वोली, अभी तो शादी को एक महीना भी नहीं हुआ। तुम्हारी तकदीर अच्छी है, यह पता है ? आओ भाभी—

हेमन्त हँस रहा था। दोनों कमरे से निकल आईं।

किस को नहीं मालूम कि नई वहू सव के आकर्पण का केन्द्र होती है। वगीचे के माली तक ने नववधू के सम्मान में नया कुर्ता पहना था, फिर यह तो कहना ही वेकार है कि अभ्यागत अच्छी तरह सज-धज कर आये थे। यहाँ तक कि [illegible] एडवोकेट सन्तोष भी लावण्य के गुस्से के डर से धोवी की धुली धोती और [illegible] का कुर्ता पहन कर आया था और माया देवी की तो वात ही क्या है। [illegible] हाल ही में सास की पदवी से विभूषित हुई हैं वे, किन्तु साज-सिंगार [illegible] संकोच कुछ कम ही है। लावण्य तक माँ को देख कर अवाक् रह गई [illegible]

आज आमोद-प्रमोद का दिन था, इसमें कोई सन्देह नहीं। शादी की भीड़-भाड़ जब खत्म हो जाती है तो घनिष्ठ सम्पर्कियों का आना-जाना शुरू होता है। आज जो लोग आये थे, वे बाहर के लोग नहीं हैं—यह शिवानी भी जानती थी। सन्तोष के साथ उसकी एक दूर के रिश्ते की मौसी भी आई थी जो बैरिस्टर की पत्नी हैं। उनकी छोटी लड़की भी थी, जो पाइप पैंट पहन कर आई थी—जिस पर से नजरें हटना नहीं चाहती थीं—लड़की की उम्र अठारह साल की थी। पैंट के ऊपर पहन रखा था पारदर्शक ऊँचा जैकेट-कोटनुमा ब्लाउज, जो कमर से नीचे आना ही नहीं चाहता था। लावण्य की दोनों सहपाठिनों की ओर तो देखते ही आँखें चुँधिया जाती थीं। श्रीमती इला की उम्र जरा अधिक है लेकिन साज-सिंगार अत्यन्त भड़कीला होता है उसका। माया देवी की विशेष कृपा है उस पर। और इनके अलावा जो बचीं वह वही सन्तोष की दूर के रिश्ते की मौसी थीं जो माया देवी की बहुत पुरानी अन्तरंग सहेली हैं। उनका नाम हिरण्मयी देवी है।

नववधू के साज-सिंगार के संबंध में सबको एक आशा होती है, लेकिन हँसती-खिलती शिवानी ने जैसे ही कमरे में कदम रक्खा, सब चकित रह गये। माया देवी ने उसे ओट में बुला कर कहा, रुनु, तुम दोपहर को सोने के कमरे में थी, सारी साड़ी मुस गई है। तुम्हारे पास साड़ियों की तो कमी नहीं है—क्या बदल नहीं सकती थीं ? जाओ, जरा फिटफाट हो कर आओ और सुनो जरा मेकअप-वेकअप करके आना, लोगों के साथ घुलना-मिलना है न ?

अच्छा माँ, अभी बदल आती हूँ।—कह कर शिवानी वहाँ से चली गई। हिरण्मयी ने माया देवी की ओर देखा, और नजरों में बात हो गई। दोनों एक दूसरे के मन की बात फौरन समझ लेती हैं।

दस मिनट में लौट आई शिवानी। इस बार वह पहने थी एक साफ-सुथरी सुलभ मूल्य की रंगीन सूती साड़ी। सिर पर पल्ला था; लेकिन दूसरे किसी प्रसाधन का कोई चिह्न तक नहीं था। यह नई बहू नहीं थी, यह थी घर की बहू और बहू भी नहीं बल्कि गृहिणी थी। भीत दृष्टि से माया देवी ने शिवानी की ओर देखा लेकिन उनकी दृष्टि की परवाह न करते हुए शिवानी सहज-सरल भाव से लावण्य के पास आकर बैठ गई। न उसने पाउडर लगाया और न ही कोई और प्रसाधन, केवल मुंह धोकर एवं साड़ी बदल कर चली आई। सास की बात को सुन कर उड़ा दिया।

हेमन्त अपनी माँ के स्वभाव को जानता था, अतः वह सन्तोष एवं सुप्रिय को लेकर बाहर बगीचे में चला गया। उसे मालूम है कि आधुनिक प्रसाधन रुनु को

विलकुल पसन्द नहीं है, उसका रुचि-वोध इसके प्रतिकूल है।

पीछे से आवाज आई, हेमन्त दा—

हेमन्त ने घूम कर देखा, वैरिस्टर लाहिड़ी की लड़की मिनि आ रही थी पीछे-पीछे। वोला—क्या—क्यों, क्या वात है ?

तुम ठगे गये हो। मैं वार-वार कहती हूँ कि तुम विलकुल पूरी तरह ठगे गये। कहाँ से तुम ऐसी गँवार कादम्बिनी को पकड़ लाये, वताओ तो ?

सन्तोष और सुप्रिय भी रुक गये थे, उसकी वात सुन कर हँस पड़े। हेमन्त ने पूछा—हुआ क्या आखिर ?

मिनि वोली—तुम्हारी वहू अप-टू-डेट नहीं है। कुछ भी नहीं जानती वह। मैं कव से वैठी-वैठी देख रही हूँ—उसे पता नहीं टॉयलेट किसे कहते हैं। हाँ, विलायत से लौटा पति अवश्य मिला है।—होंठ विचकाये उसने।

तीन पुरुषों के वीच में खड़े हो कर इस प्रकार का मन्तव्य प्रकट करना सुशिक्षा का परिचायक नहीं होता, इसका शायद मिनि को ज्ञान नहीं था। लेकिन उसकी इस सरल निस्संकोच उक्ति को सुन कर तरुण सुप्रिय का खून खौल गया। वह मुस्कुरा कर वोला—मिनि, तुम लड़की तो हो नहीं, लड़का हो! खाकी रंग की पैंट पहने हुए हो, लेकिन हाथ में वंदूक न लेकर इतना साज-सिंगार क्यों किया है ? शायद यह सोच कर कि तुम अप-टू-डेट लड़की हो। पर तुम लड़की नहीं, हिजड़ा हो।

क्या वक रहा है सुप्रिय ?—सन्तोष ने वीच में टोका।

क्षुब्ध स्वर में मिनि वोली, मैं क्या कुछ कह रही हूँ ? मैं तो कलचर की वात कह रही थी—

हेमन्त का हँसी के मारे वुरा हाल था। सुप्रिय ने रूखे स्वर में जवाव दिया, कलचर ? कल्चर की व्याख्या तो वदलती रहती है। तुमने अभी-अभी हायर सेकेण्डरी पास किया है, अभी कलचर की वात मत करो मिनि। अभी थोड़ा और पढ़-लिख लो, फिर तुम्हारा कलचर सुनूंगा।

आहत स्वर में मिनि वोली, मैं समझ गई सुप्रिय दा, उस दिन के गुस्से का वदला तुम आज ले रहे हो। ठीक है, मैं भी ध्यान में रक्खूंगी।

कह कर मिनि जैसे आई थी, लौट गई। पीछे हेमन्त और सन्तोष जोर-जोर से हँस रहे थे। वात किसी से छुपी नहीं थी। करीव तीन साल से हिरण्मयी की आँख सुप्रिय पर है—क्योंकि मिनि के साथ सुप्रिय के रिश्ते में कोई अड़चन नहीं है; लेकिन लड़के के रंग-ढंग कुछ दूसरी ही तरह के हैं।

मिनि किस तरह लौट कर सोफे के एक तरफ चुपचाप वैठ गई है

की दृष्टि से छुपा नहीं रहा। वह आकर उसके पास बैठ गई और मधुर स्वर में बोली, कब से देख रही हूँ, तुम्हारे ये बॉबकट बाल कितने अच्छे लगते हैं मिनि! बिलकुल जैसे रेशम के गुच्छे हों। शायद रोज शैम्पू करती हो तुम, क्यों?

अपने बालों की प्रशंसा सुन कर आँख उठाकर देखा मिनि ने; बोली, आप क्या यह सब जानती हैं?

मैं कैसे जानती भला? तुम लोगों से ही तो सीखा है!

आप टॉयलेट क्यों नहीं करतीं?

हँस पड़ी शिवानी। बोली, मुझे कुछ आता-जाता नहीं भाई। बचपन से यह सब किसी ने सिखाया ही नहीं।

क्यों, आप तो कॉलेज यूनिवर्सिटी में पढ़ी हैं। दो-दो सब्जेक्ट में एम० ए० किया है आपने! सुना था कोई थीसिस भी लिख रही हैं—

बस, बस, बस—शिवानी बोली, और शर्मिन्दा मत करो बाबा। इसी की वजह से तो सारा गोलमाल है। मैं समाज में मिल नहीं पाती। कुछ नहीं होता लिखाई-पढ़ाई से, सब जानते हैं कितनी अयोग्य हूँ मैं। अच्छा छोड़ो ये बातें! सुनो, तुम्हारे लिए समोसे ला दूँ?

ना। मिनि बोली, उसमें आलू होगा। वह खाने से फैट बढ़ता है।

तो फिर कुछ नमकीन लाऊँ?

नमकीन?—वह भी तो खालिस घी की होती है। और कुछ नहीं है?

चिकेन कटलेट हैं, लाऊँ?

हाँ—मिनि खुश होकर बोली, वह चल जायेगा।

देवानन्द, नारायण और यशोदा अभ्यागतों को नाश्ते की प्लेटें दे रहे थे। दूर से माया देवी ने क्षुब्ध होकर देखा नितान्त अशोभनीय ढंग से उसके बीच में जाकर शिवानी एक प्लेट में नाश्ता लगा लाई। यह इस घर की रीति नहीं है और फिर इससे नौकरों के मन में भी घर का कोई सम्मान नहीं रहता। काठ बनी माया देवी मलिन मुख यह सब देख ही रही थीं कि बगल से हिरण्मयी फुसफुसा कर बोलीं, यह कैसी बहू ले आई तुम माया? यह तो बिलकुल काठ का उल्लू है।

माया देवी बोलीं, उस दिन तुमने मेरी बातों का विश्वास नहीं किया था, अब देख लिया न?

हिरण्यमयी बोलीं, गलती तो तुम्हारी ही है माया। रूप, स्वास्थ्य, शिक्षा—यह सब देख कर तुम पागल हो गई, लेकिन असली चीज तो सामाजिक मैनर्स

है। यह छोकरी तो इस वारे में खाक पत्थर नहीं जानती। यह तो वस पढ़ाई-लिखाई में ऊँची है—जो किसी को आँखों से नहीं दिखती।

अपमानित होकर माया देवी चाय के प्याले का सिप लेने लगीं।

फिर से फुसफुसाई हिरण्मयी, तुम्हारा एक ही तो लड़का है माया। ऐसे चाँद से लड़के को किस गड्ढे में फेंक दिया तुमने? छोकरी को न तो वाल वनाने आते हैं और न ही मेकअप करना आता है। यही तुम्हारी सुन्दरी है? इसी के लिए तुम छह महीने तक उस आचार्य के पाँव पकड़ कर खुशामद करती रही। जो भी कहो, तुम्हारा घर इस लड़की के लिए तो नहीं था माया।

अवरुद्ध कण्ठ से माया देवी वोलीं, भूल कर वैठी हिरण दी। जुआ खेला था, लेकिन पाँसा उलटा पड़ गया।

अव लोगों को तुम मुँह मत दिखाना माया। अव कहना अच्छा तो नहीं लगता पर क्या मिनि नहीं थी तुम्हारी आँखों के सामने? देखो, आज पैंट पहन कर आई है, आँखें ठहर जाती हैं देख कर। फिगर देखो उसका?—छोड़ो, मैं तुम्हारे यहाँ किसी की निन्दा करने नहीं आई माया। लेकिन अव रोज-रोज मुझे यहाँ आने को मत कहना। भाग फूट गये वेचारे हेमन्त के।

माया देवी और पास खिसक आई हिरण्मयी के और कान में फुसफुसा कर वोलीं, जानती हो, लड़का क्यों सूखता जा रहा है, हिरण दी? जवानी तो फटी पड़ रही है। रात की वात तो छोड़ दो—दिन को भी नहीं छोड़ती उसे।

हिरण्मयी ने मुँह फिराकर देखा—क्या कह रही हो तुम? यह तो विल्कुल हद हो गई।

आज दोपहर को अचानक नजर पड़ गई वो तो मेरी। मैंने देख लिया है न, इसीलिए गुस्सा आ रहा है मुझ पर।

हिरण्मयी वोलीं, एक तो वैसे ही तुम्हारा लड़का सीधा-सादा है। लड़की के इस अनाचार से कहीं वीमार न पड़ जाय वेचारा।

उधर लावण्य, इला, शोभना, मीरा सव हुल्लड़ मचा रही थीं। इन लोगों से कुछ दूर शिवानी और मिनि वैठी थीं। लगता था, दोनों में खूव घनिष्ठता हो गई थी।

अव सवने आकर शिवानी को घेरा। शोभना वोली, आपके साथ तो कर[illegible] वातचीत नहीं हुई। वो लोग तो सर्व कर ही रहे हैं, आप वैठिए न थोड़ी[illegible] लावण्य कह रही थी, क्या पहले आप एक्सरसाइज़ किया करती थीं?

हाँ—शिवानी वोली, डम्वेल, मुद्गर, दंड, वैठक—यह सव करती[illegible] पर भी चढ़ती थी और रिंग पर भी झूलती थी।

तभी तो आपका फिगर इतना अच्छा है। लेकिन आप बिल्कुल ख्याल नहीं रखतीं अपना।

मीरा बोलीं, आपको क्या साज-सिंगार बिल्कुल अच्छा नहीं लगता ?

हँस पड़ी शिवानी। बोली, लड़की बनकर जन्म लिया है, साज-सिंगार तो करना ही पड़ता है। लेकिन हाँ, स्वाँग भरना अच्छा नहीं लगता मुझे।

ठीक कह रही हो, बिल्कुल ठीक कर रही हो भाभी। खिलकर लावण्य बोली।

भौं सिकोड़कर इला ने प्रश्न किया, आपका यह मन्तव्य हेमन्त को पसन्द है ?

मुझे तो अच्छी तरह मालूम नहीं। मुस्कुरा कर शिवानी बोली, यह तो बीबी जी बता सकती हैं !

बीबी जी ! लड़कियों ने एक दूसरे का मुंह देखा। इस बीसवीं सदी में इस तरह का सम्बोधन ? इला ने मीरा की तरफ देखा। मिनि बोली, बीबी जी माने पति की बहन। याने लावण्य दी—इतना भी नहीं समझती ?

शोभना बोली, मौसी बड़ा अफसोस प्रकट कर रही थीं कि आप टेरियन हैं ?

कौन, मैं ?—शिवानी ने जवाब दिया—कहीं भी नहीं ! मैं तो मछली खूब ती हूँ, हाँ, मांस इत्यादि की ओर मेरा रुझान अवश्य नहीं है !

सब हँसने लगीं यह सुनकर ! इला बोली, इसका मतलब है कि आज आपके ाँ खाने की जो चीजें बनी हैं, उनमें से आप कुछ नहीं खायेंगी ?

यह सब खाने की मुझे आदत नहीं है, इला दी।

मनपसन्द ससुराल मिलने पर बहुत सी आदतें बदल जाती हैं, मिसेज़ मैत्र ! —सांकेतिक विद्रूप किया इला ने।

सहसा सचेतन हो गई शिवानी। सीधी होकर बैठ गई और मुस्कुरा बोली, आपने तो अभी तक शादी नहीं की इला दी। आप कैसे जानेंगी—मनपसन्द ससुराल किसे कहते हैं ?

लावण्य ने इला की ओर देखा। इला बोली, अच्छा, आप अपनी ससुराल को ही ले लीजिए, यह क्या आपकी मनपसन्द नहीं है ?

हँस पड़ी शिवानी। इस तरह हँसकर जैसे उसने स्वयं अपना परिहास किया। बोली, मेरी बात उठाकर खूब अच्छा किया आपने इला दी। जानती हैं, गाय को कोई भी ग्वाला क्यों न रक्खे, लेकिन वह स्वयं कभी उसका दूध-दही नहीं खाता। मैं यदि छोटी लड़की होती तो आदतें बदल भी जातीं, लेकिन मैं तो ठहरी ऊँट

की ऊँट—आदतें मेरे स्वभाव के साथ मिल गई हैं, अब मेरे बदलने की आशा करना बेकार है।

अपना परिहास करना शिवानी अच्छी तरह जानती है, क्योंकि उसके पाँवों के नीचे की धरती बहुत नरम नहीं है! इला भी ग्रैजुएट है, सेन्ट्रल टेलीग्राफ में अच्छी नौकरी पर है, वेतन भी कम नहीं है—स्त्रियों की आधुनिक अवस्था से वह भली-भाँति परिचित है। लेकिन यहाँ! नववधू होते हुए भी शिवानी का अपना विशिष्ट प्रभावशाली व्यक्तित्व साफ नज़र आता है। माया देवी का अपनी धनाढ्यता का अभिमान किसी से छुपा नहीं है। बहुमूल्य परिच्छद-परिधानों से घर भरा पड़ा है। हेमन्त के पाकस्पर्श की रात कोई भी नहीं भूला है। परन्तु, इस लड़की ने आकर तो जैसे प्रलोभन के इस मायाजाल को बिल्कुल छिन्न-भिन्न कर दिया। हाथों में पतली-पतली दो-दो चूड़ियाँ और ढाका में निर्मित शंख की चूड़ी, बायें हाथ में सुहाग-चिह्न नोया, उँगली में रूबी की एक अँगूठी, कानों में हीरे की छोटी-छोटी लौंग और गले में चमकता सोने का हलका हार। न तो कहीं थी विलास की प्रचुरता और न ही दिखाई देती थी अलंकार-बहुलता। लेकिन इस सीधी-सादी साज-सज्जा के कारण शिवानी के चेहरे पर आभिजात्य एवं रुचिबोध की जो छाप दिखाई दे रही थी उसे भी इला ने आत्माभिमान तथा अहं का दूसरा रूप समझा।

झट से मिनि बीच में बोल पड़ी, अच्छा! आपके पास तो इतने क़ीमती-क़ीमती गहने हैं—आज पहने क्यों नहीं आपने?

हँस पड़ी शिवानी। बोली, मेरा शरीर क्या एक्जीबिशन का स्टाल है, जो सजाकर दिखाती?

तो फिर बहू-भात के दिन क्यों पहने थे?

पहने नहीं थे, पहनाये थे,—यही तुम्हारी लावण्य दी वगैरह ने! और फिर इसके अलावा उस दिन तो सब लोग आये ही 'एक्जीबिशन' में थे मिनि!—यह कहकर शिवानी पास झुककर मिनि के कान में बोली, तुम जरा पाँव सिकोड़ कर सावधानी से बैठो—पैंट पहने हो न—!

यह सुनते ही मिनि किसी की नज़र पड़ने से पहले पाँव पर पाँव रखकर सीधी होकर बैठ गई। किन्तु शिवानी की यह चेतावनी उसे ऐसी लगी जैसे किसी ने पीठ पर सड़ाक् से चाबुक मार दिया हो। उबलते दूध पर पानी पड़ गया, लड़की ठंडी होकर बैठ गई।

जैसे ही सबने विदा लेनी चाही, बगीचे में फिर से हो-हुल्लड़ सुनाई दिया।

वहाँ हेमन्त, सन्तोष व सुप्रिय जमे हुए थे कि दीनू डाक्टर और दीपेन—हेमन्त का घनिष्ठ मित्र, आ पहुँचे।

बिन-बुलाये दोनों अतिथियों का अप्रत्याशित आगमन देख कर तीनों खुशी से झूम उठे और अभ्यर्थना के लिए गाड़ी की ओर दौड़े। दीनू डाक्टर का जिस प्रकार इस घर से पुराना घनिष्ठ सम्वन्ध है, उसी प्रकार रुनु के घर में भी उनका पूर्ण प्रभाव है। विशेषतया रुनु तो उन्हीं के संरक्षण में पली है, यह क़रीव-करीव सभी लोग जानते हैं। उधर दीनू डाक्टर ने शिवानी के पिता आचार्य महाशय के पास रह कर अपनी शिक्षा-दीक्षा व डाक्टरी पास की है। लेकिन यह वहुत पुरानी वात है।

माया देवी ने आगे वढ़ कर दोनों का स्वागत किया। दीपेन हेमन्त की कौली भर कर वोला, इसी वीच शादी भी कर ली! यह वहुत अच्छा किया तुमने! तुम्हारी वहू को भला कौन नहीं जानता! ज्वेल है ज्वेल! वड़े भाग्यवान हो तुम! भवेश आचार्य, तुम्हारे श्वसुर विख्यात आदमी हैं।

दीनू डाक्टर वोले, गाड़ी लेकर तुम्हारे यहाँ ही आ रहा था माया दी, कि नजर पड़ी, लड़का चप्पलें फटकारता न जाने कहाँ जा रहा था, वस पकड़ लाया!

माया देवी वोलीं, वहुत अच्छा किया तुमने। आओ वैठो। दीपेन, कितने दिन वाद देखा है तुम्हें! हेमन्त की शादी में भी तुम नहीं आये।

उस वक्त मैं वम्वई था माया मौसी। घूमते-घूमते तुम्हारी चिट्ठी पहुँची थी, लेकिन मैंने सोचा, चलो, अव कलकत्ता जाने पर ही मिलेंगे!

दीपेन का चेहरा प्रभावशाली है; यद्यपि वह सफेद मोटी धोती और हलके गुलावी रंग का कुर्ता पहने था—पाँव में चप्पल तो थी पर धूल से भरी। वदन पर एक पतली चादर थी! दाढ़ी वनाये न जाने कितने दिन हो गये थे। आँखों पर मोटे काँच का चश्मा था। दीपेन हेमन्त से करीव दो साल वड़ा था किन्तु उसके चेहरे पर की कमनीयता ने सवकी दृष्टि आकर्षित कर ली।

दीपेन वोला, अरे, यहाँ तो वहुत लोग हैं! मीरा, वाह वड़ी अच्छी लड़की हो तुम! भागलपुर में मिली फिर पता ही नहीं चला तुम्हारा! कहाँ है हेमन्त की वहू?

अभी आ रही हैं, ऊपर गई हैं।

हिरण्मयी ने माया देवी की तरफ देखा। पति का मित्र आया है न, इसलिए शायद रुनु अव साज-शृंगार करने गई है। छोकरी ऊपर से तो मीठी है, पर अन्दर जहर भरा है।

अरे, इला दी, तुम भी हो !—मुस्कुरा कर दीपेन बोला—सुना था, तुम नौकरी करने लगी हो, जमा किया कुछ ?

'हाँ किया क्यों नहीं—इला ने भी मुस्कुरा कर जवाब दिया—अच्छी तरह जमा कर लूँ फिर एक दिन सब तुम्हें सौंप दूँगी !

शोभना बोली, दीपेन दा, तुम क्या आजकल यों ही छुट्टे घूम रहे हो ? लोग कहते हैं, तुम शादी-वादी नहीं करोगे ?

बिल्कुल झूठी बात है ! जब तक दीनू डाक्टर जिन्दा हैं, किसी में भागने की हिम्मत है भला ?—दीपेन ने सबको हँसा दिया।—अरे लावण्य तू ? इतनी बड़ी हो गई तू ? तू जरूर अब भी फ्राक पहन कर क्रिकेट खेलती होगी, क्यों ?

छि: छि:—लावण्य चिल्लाई, जो मुँह में आता है, बक देते हो—उसे पहचानते हो, वह, मिनि को ?

उधर से हिरण्मयी बोल पड़ीं, याद है दीपेन ? जरा सी थी, जब तूने इसे देखा था।

कौन, वह गंजी बुढ़िया !

हाँ, हाँ, तूने ही तो यह नाम रक्खा था !

ओ मुँहजली—दीपेन ने मिनि के बाल मुट्ठी में लेकर उसका सिर हिलाते हुए कहा, तू इतनी बड़ी हो गई ? बहुत ही रोतड़ी थी तू, याद है ? यह देखो, फिर पैंट पहनी है तूने। चल मेरे साथ लंदन, किसी ब्रिटनिक के हाथ में सौंप आऊँ तुझे।

मिनि खूब हँस रही थी।

दीनू डाक्टर बोले, माया दी, इस बार घटकी की दक्षिणा लिये बिना नहीं टलूंगा। कहो, बहू के साथ गृहस्थी कैसी चल रही है ?

माया देवी हँस कर बोलो, स्वयं देख-सुन कर बहू लाई हूँ, अब लोगों के सामने बुरा कहूँगी क्या दीनू ?

बिल्कुल ठीक बात है !—हिरण्मयी ने भी योग दिया।

दीनू डाक्टर बोले, घुमा-फिरा कर जवाब दिया तुमने माया दी ! साफ-साफ कहो। बड़े भैया के मन में भी थोड़ा संशय है !

क्यों, संशय किस बात का ?

लड़की के बाप का मन ठहरा ! चिंता तो रहती ही है।

झट से हिरण्मयी बोलीं, लेकिन तुम्हारी घटकी दाद देने के क़ाबिल है [illegible]

तेल पानी अच्छी तरह मिलाते हो !

मुस्कुरा कर दीनू डाक्टर बोले, औरत होकर भी तुम लोग क्या [illegible]

नहीं समझ पाई कि तेल और पानी जितनी अच्छी तरह मिलेगा, खाना उतना ही अच्छा बनेगा ?

माया देवी और हिरण्मयी ने बात को आगे बढ़ाना उचित नहीं समझा।

हेमन्त आकर दीपेन को ऊपर ले गया। सीढ़ियों पर ही प्रतीक्षा कर रही थी शिवानी। सिर पर पल्ला खींच कर, हाथ जोड़ते हुए शिवानी बोली—छह साल बाद देख रही हूँ आपको।

दीपेन बोला, तुम बहुत बदल गई हो रुनु। मैंने तो कभी स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि हेमन्त के साथ तुम्हारा विवाह हो सकता है! पर हुआ बहुत अच्छा।

आप बैठिए, मैं कुछ खाने के लिए ले आऊँ।—कहकर शिवानी नीचे चली गई।

हेमन्त बोला, मेरे लन्दन छोड़ने के बाद तुम वहाँ कितने दिन रहे ?

दीपेन ने जवाब दिया, करीब तीन महीने! मेरी समझ में अच्छी तरह आ गया था कि उस यात्रा में वहाँ बैठ कर डाक्टरेट मिलना मुश्किल था। इसलिए भाग आया।

यह तुम गलत कह रहे हो दीपेन। मैं तुम्हें जानता हूँ। तुम पर तो स्पिरिचुअलिज़्म का भूत सवार था। रेवरेंड टॉमस ने तुम्हारा दिमाग खराब कर दिया था। टाइम्स में जिस दिन तुम्हारा लेख 'भारतीय योग साधना' निकला, मैं पढ़ते ही समझ गया था कि तुम्हारे बारह बज गये हैं, तुम भगवत् तत्त्व में डूब गये हो, अब तुम्हारी आशा बेकार है।

दीपेन मुस्कुरा कर बोला—जानते हो हेमन्त, मेरे मन में न जाने कितने विचार उठते हैं। मुझे लगता है, मैं इस आधुनिक युग में मिसफिट हूँ! बाहर के वातावरण के साथ मेरा अन्तर मिल ही नहीं पाता। चलो, छोड़ो ये बातें। सुनो, टॉमस तो लंदन से मुझे आने ही नहीं देना चाहते थे। तुम्हें तो मालूम ही है कि टॉमस पुराने रोमन हैं—अभी हाल ही में अँगरेज बने हैं। अच्छा, तुम्हें एक मजेदार किस्सा सुनाऊँ, जो मेरे आने के दिन सुबह हुआ!

बताओ—बताओ।

सारा किस्सा तुम्हीं को लेकर है।—दीपेन बोला, तुम टॉमस की लड़की के साथ हँसी-मजाक किया करते थे न—अरे वही स्टेला की बात कर रहा हूँ। देखता क्या हूँ कि सुबह वह मेरे फ्लैट पर हाजिर—!

आश्चर्यचकित होकर हेमन्त ने दीपेन की ओर देख कर कहा—अच्छा, फिर—?

दीपेन वोला, हाँ, तो लड़की रोऊँ-रोऊँ हो रही थी ! मेरे से वोली, हेमन्त डर क्यों गया, मैं तो पोस्ट ग्राफिस में अच्छी नौकरी पर हूँ—लेवर यूनियन में भी काम करती हूँ। मुझसे शादी करने में हेमन्त को क्या अड़चन थी ! तुम जाकर जरा उसे समझाना। मैं भी लिखूंगी उसे।

हेमन्त हँस पड़ा—कहाँ, मुझे तो कुछ लिखा नहीं उसने ! अच्छा, फिर तुमने क्या कहा ?

मैं क्या कहता ? वोला, स्टेला, तुम वहुत सीधी लड़की हो ! भारतीय परिहास समझने में तुम लोगों को जरा देर लगती है। हेमन्त विलकुल दूसरी तरह का आदमी है। माँ के कहने पर वह उठता-वैठता है। पहले तुम उसकी माँ की अनुमति माँग लो ! मेरी वात सुनकर पहले तो वह चौंकी, फिर वड़वड़ा कर न जाने क्या कहा और आँखें पोंछ कर चली गई।—दीपेन वोला, अरे, तुम इन लोगों को नहीं जानते, ये लोग इसी तरह अपने चंगुल में फँसाने की कोशिश करती हैं। अच्छा हुआ तुम वच कर निकल आये।

इसी समय नाश्ते की प्लेट हाथ में लिये शिवानी ने कमरे में पैर रखा। स्वयं तिपाई खींचकर उसने प्लेट दीपेन के सामने रक्खी और लाइट जलाई। फिर वोली, आपके लिए चाय वनाऊँ या कॉफी ?

पीछे-पीछे नारायण नाश्ते की एक और प्लेट लेकर आ रहा था। उसके हाथ से प्लेट लेकर शिवानी ने हेमन्त के सामने रख दी। नारायण चाय लेने चला गया।

खाते-खाते दीपेन वोला, क्यों रुनु, मुझे मांस के वड़े या तली मछली नहीं दी ? वाह ! मेरे लिए सव सात्त्विक सन्देश, मलाई, वादाम, समोसा, लड्डू—ये तो सव निरामिष हैं।

शिवानी हँस रही थी। वोली, आपके चेहरे के साथ आमिष का मेल नहीं वैठता। आपको वह सव खाने की जरूरत नहीं हैं।

दीपेन वोला, देख रहे हो हेमन्त ! तुम्हारी गृहिणी तक मुझे साधू फ़कीर बना कर छोड़ेगी।

हेमन्त वोला, तुम्हारी तकदीर ही खराव हैं ! इसके पीछे तुम्हारी नियति का हाथ है, दीपेन।

शिवानी वोली, सव कह रहे थे, वड़े-वड़े कार्य आपकी प्रतीक्षा कर रहे है, पर आपने कोई भी हाथ में नहीं लिया ! वताइए तो, क्यों नही लिया ?

ठहरो—दीपेन वोला, अभी तो मैंने लड्डू के मधुर स्वाद में डुवकी लगाई है कोई आधिभौतिक प्रश्न सुनाई नहीं दे रहा है। तुम्हारी तरह एक और व्यक्ति

ठीक यही प्रश्न किया था—जिनकी मैं सबसे अधिक श्रद्धा करता हूँ अर्थात् तुम्हारे पिता जी—भवेश काका !

शिवानी ने पूछा, तो क्या जवाब दिया आपने ?

जवाब ? कुछ भी नहीं ! यह कहकर दीपेन ने मलाई का चम्मच मुँह में डाला। फिर बोला, अच्छा हेमन्त, तुम्हीं बताओ; सब मिल कर यदि एक आदमी को पागल कहकर चिढ़ायें तो क्या अच्छा-भला आदमी सचमुच पागल नहीं हो जायेगा या फिर देश छोड़ कर नहीं भाग जायेगा। भवेश काका मेरा जवाब सुन कर मुस्कुरा दिये बस !

हेमन्त बोला, तुम आजकल हो कहाँ ?

यह सुनो रुनु, अपने पतिदेव का कौतूहल देखो जरा ! अरे, कच्चा लोहा इस्पात बनने से पहले कहाँ रहता है ? जितना छुपकर रहूँगा, उतना ही ज्यादा काम होगा। ना भाई ना, मुझसे कोई मेरा ठिकाना मत पूछो—माँ-बाप नहीं हैं इसीलिए इस यात्रा में बच गया। छोटे भाई को मद्रास में नौकरी मिल गई है—अब मैं बिलकुल मुक्त हूँ।

मुस्कुराकर शिवानी बोली, मुक्त पुरुष भी मुक्त नहीं हो पाते—जब तक वे शरीरधारी हैं। तो फिर हम सब प्रतीक्षा करें कि इस्पात बनने के बाद एक दिन आप दिखाई देंगे ?

हेमन्त बोला, मैं समझ गया ! फादर टामस तुम्हें आसानी से नहीं छोड़ेंगे।

नारायण चाय की ट्रे लेकर ऊपर आया। शिवानी जैसे ही उसके हाथ से ट्रे लेने के लिए कमरे से बाहर निकली, सीढ़ियों पर दीनू डाक्टर दिखाई दिये। बरामदे में उस वक्त कोई नहीं था। शिवानी बोली, दीनू काका, तुम उस दिन बहूभात के दिन आये सो आये, फिर बिल्कुल ही गायब हो गये।

जरा भारी आवाज में डाक्टर बोले, क्यों ऐसी कोई बात थी क्या कि तुम्हारी शादी के बाद भी तुम्हारी ससुराल में आकर दरबानी करनी पड़ेगी ? अरे ये छोकरे कहाँ चले गये ? मुझे मरीज़ देखने भी तो जाना है।

वे लोग उस कमरे में बैठे हैं। पहले तुम मेरी बात का जवाब दो दीनू काका। पिता जी कैसे हैं ? बुआ की तबियत कैसी है ? उधर की खबर बताओ।

हँसकर डाक्टर बोले, खबर जनाना चाहती हो ? या मजा देखना चाहती हो ? लड़की का जन्म दूसरे के लिए होता है, यह पता है तुझे ? चौबीस साल तक तो बाप को जलाया है तूने ! भद्र पुरुष अब अखंड शांति से विराजमान हैं और रही बात छोटी दीदी की, तो उनके आँचल का कोना कभी-कभी आँख के पानी से गीला हो जाता है, बस ! लेकिन एक बात याद रखना, पत्थर तो फट सकता है

सुबह का प्रकाश अभी तक पूरा नहीं फैला था, लेकिन पेड़ों की डाल पर बैठे पक्षियों में सूर्यवन्दना की संगीत सूची को लेकर अलाप शुरू हो गया था। दूर राजपथ पर अभी भी सरकारी बत्ती जल रही थी।

दबे पाँव यशोदा माया देवी के पलंग के पास आकर खड़ी हुई और फुसफुसाई, तुमने ठीक ही कहा था मालकिन। देख कर आ रही हूँ, आज भी बिस्तर पर नहीं है। दरवाजा खुला है।

माया देवी उठकर बैठ गईं, तेरा क्या ख्याल है ?

यशोदा ने पीछे की तरफ घूमकर देखा फिर बोली, तुम्हीं बताओ न, तुम्हारा सन्देह किस तरफ है ?

मैं जुबान पर कैसे लाऊँ, यशोदा।

तो फिर पाप-कथा मेरे ही मुंह से क्यों कहलवाना चाहती हो ?

माया देवी पलंग से नीचे उतरीं। कमरे में उस वक्त भी धुंधलका-सा था। हँसी दबाकर यशोदा ने माया देवी की साड़ी का पल्ला ठीक करके उनकी कमर में खोंसा। माया बोलीं, तूने अच्छी तरह देखा है न ?

लो और सुनो !—यशोदा बोली, पलंग पर रांगा भाई अकेले सो रहे हैं, मसहरी का किनारा खुला हुआ है और दरवाजा उड़का हुआ—तुम खुद क्यों नहीं देख आतीं ?

माया देवी निःशब्द पाँव दबाती हुई इधर आईं। सर्दियों की सुबह, ठंड हड्डियों तक घुसी जा रही थी। फिर मार्बल के फ्लोर पर नंगे पाँव चलने की आदत नहीं थी। लेकिन तब भी चुपचाप आगे जाकर माया देवी ने बहुत धीरे से हेमन्त के कमरे का दरवाजा ठेलकर खोला और अन्दर जाकर खड़ी हो गईं। यशोदा की बात बिल्कुल ठीक थी। उसी क्षण न जाने क्या सोचकर माया देवी सावधानी से पाँव रखती कमरे से संलग्न बाथरूम के दरवाजे पर गईं। बाथरूम खुला हुआ था, अन्दर कोई नहीं था। इसी तरह पाँव दबाती माया देवी कमरे से निकल आईं और सीधे नीचे के जीने पर पहुँचीं। नीचे माधव, मनोहर, नारायण आदि सब लोग रहते हैं। वह इस घर की मालकिन हैं; यह बात अच्छी

तरह जानती हैं कि एक घृणित सन्देह मन में लेकर नीचे जाकर छानबीन करना अपनी मर्यादा नष्ट करना होगा। लेकिन इधर मन में प्रतिशोध की भावना भी तो चैन नहीं लेने दे रही थी। इस घर में इस तरह के नैतिक अपराधों की घटना कोई नई बात नहीं है—वह स्वयं न जाने कितनी घटनाओं से संलग्न थीं। लेकिन आज उनके लड़के की बहू उन्हीं की आँख बचाकर दूध और तमाखू एक साथ पिये—और वह चुपचाप सहन कर लें ? असम्भव !

नीचे जाकर जब नौकरों के कमरों के हर बन्द दरवाजे पर कान लगाकर अन्दर की बात जानने की कोशिश कर रही थीं, यशोदा जीने पर खड़ी प्रेतिनी की तरह पहरा दे रही थी। वह बहुत पुरानी नौकरानी है, सब जानती है। अपनी स्वामिनी की प्रकृति के अनुरूप ही उसने स्वयं को ढाल लिया है। फलस्वरूप जिस प्रकार हर साल उसका वेतन बढ़ता जाता है, उसी प्रकार प्रतिष्ठा भी बढ़ती जाती है। घर-गृहस्थी के काम-काज नहीं करने पड़ते उसे, वह तो स्वामिनी के साथ-साथ रहती है बस—परछाईं बनकर। सबकी आँख बचाकर वह उनको न जाने क्या-क्या बनाकर खिलाया करती है।

उत्तेजित, भयार्त, अशक्त माया देवी सीढ़ियों के पास आकर हाँफती हुई बोलीं, यशोदा, भागकर एक बार सुनील का कमरा तो देख आ ! यह तो सर्वनाश शुरू हो गया है ! हे भगवान, यह किस काली नागिन को ले आई मैं !

दबे स्वर में यशोदा बोली, ना बगीचा पार करके बाहर जाने की जरूरत नहीं है। मैं ऊपर छत से ही नजर रखूँगी, तुम ऊपर आ जाओ मालकिन !

मन ही मन माया देवी तलवार को शान पर चढ़ा रही थीं कि नहीं, यह तो पता नहीं चल पाया। लेकिन ऊपर आकर यशोदा से बोलीं, तू जा, बरामदे में खड़ी होकर बाहर नजर रखना, एक सेकेण्ड को भी मत हटना। बहुत दिन हो गये यह सब अनाचार सहते-सहते, आज मैं इसका फैसला करके ही छोड़ूँगी। इधर या उधर।

उस अंधकार में ही यशोदा मुँह दबाकर हँसी। बोली, तुम्हारे मुँह पर ऐसी बातें शोभा नहीं देतीं, मालकिन। असली बात तो यह है कि तुम रँगे हाथों पकड़ना चाहती हो। इतनी-सी तो बात है। मैं क्या जानती नहीं ?

अच्छा, चुप हो जा अब तू ! जो कह रही हूँ कर। जा—

यशोदा द्रुत कदमों से बरामदे की तरफ चली गई।

न जाने कैसी तो एक यन्त्रणा ने माया देवी को चंचल कर दिया था। मित्रों में उनके स्वास्थ्य व सुन्दरता की ख्याति कम नहीं थी। चालीस पार करने के बाद भी उनका अक्षुण्ण यौवन बहुतों के लिए ईर्ष्या का कारण था। कोई-कोई

अभ्यागत तो यहाँ तक कह गया था कि शिवानी और माया देवी एक साथ खड़ी हों तो वे सास-बहू-सी नहीं लगतीं—बहनें मालूम पड़ती हैं।

ऊपर छत पर जाने वाले जीने पर वह कम ही जाती थीं, कभी जरूरत ही नहीं पड़ती। काम पड़ने पर नौकर-चाकर ही जाया करते थे। लेकिन उनके उद्वेग ने उन्हें स्थिर नहीं रहने दिया। आखिर सीढ़ियाँ चढ़ कर वह पहुँच ही गईं ऊपर। प्रभात का प्रकाश फैल गया था उस वक्त तक। पूर्व दिशा से कुहासा हटा कर लाल सूर्य झाँक रहा था।

दुछत्ती के छोटे कमरे के सामने आकर वह चौंकी। बढ़ते कदम रुक गये। कमरे के पूर्व की बड़ी खिड़की खुली हुई थी। उसी ओर मुँह करके शिवानी पूजा पर बैठी हुई थी। यह छोटा कमरा कब शिवानी के हाथों पूजा के कमरे में परिणत हो गया, माया देवी को पता ही नहीं लगा। दरवाजे पर खड़े होकर देखा—शिवानी नहा-धोकर बैठी थी, भीगे बाल पीठ पर फैले हुए थे, लाल किनारी की रेशमी साड़ी व लाल रेशमी ब्लाउज पहने कुशासन पर बैठी थी। आसपास ताँबे व पीतल के छोटे-छोटे पात्र थे—ताँबे की थाली में दूर्वा, फूल आदि पूजा की सामग्री रक्खी थी, आचमन पात्र में आचमनी थी। सामने चौकी पर पीतल के सिंहासन पर काले पत्थर की शालग्राम शिला रक्खी थी, आसपास दो-तीन तस्वीरें तथा छोटी-छोटी मूर्तियाँ थीं। शिवानी के हाथ के पास तीन-चार किताबें रक्खी थीं। न जाने क्या तो पढ़ रही थी वह!

बड़ी सूक्ष्म दृष्टि से निरीक्षण किया माया देवी ने। जिस प्रकार वह चौंककर सहसा खड़ी हो गई थीं, ठीक उसी प्रकार निःशब्द पीछे घूम कर नीचे उतर आई। मैत्र वंश के इतिहास में बार-बार चरित्रहीन नारी के दर्शन होते हैं। लेकिन यह लड़की अपराध के साथ-साथ पूजा भी करती है। अर्थात् यह और भी विपद्जनक है।

उनके चेहरे पर अनिद्रा का अवसाद घिर आया था। रात को वह बहुत देर से लौटी थीं। रात अधिक हो जाने पर वह अपनी गाड़ी में नहीं लौटतीं—हिरण्मयी का ड्राइवर पहुँचा जाता है। वह आधुनिक युग की नारी हैं। उनकी और पति की उम्र में बहुत अन्तर था, लेकिन वृद्ध ससुर के अतिशय लाड़-प्यार में वह किशोरी से तरुणी बनी और फिर चारों ओर थे विलास के उपकरण। दुर्भाग्य ने पति और ससुर दोनों को छीन लिया। दूसरा दुर्भाग्य—दोनों सन्तानों में से एक भी माँ के हाथों बड़ी नहीं हुई, माँ की गोद में वे कभी नहीं सोये, माँ के हाथ से कभी खाकर नहीं जाना—वे बड़े हुए आयाओं के हाथों—जो इस घर की पुरानी रीति थी। अर्थात् विवाह होने के बाद से ही माया देवी सदा

निसंग रहीं। प्राकृतिक नियमानुसार उन्होंने सन्तान धारण अवश्य की, लेकिन पति या पुरुप केवल उपलक्ष्य मात्र था। उनके चारों श्र[illegible]ो था विलास-वैभव का एक हुजूम। पटपरिवर्तन के बाद देखा तो पाया—हृदय सूख गया है, असन्तुष्ट मन में एक अतृप्त प्यास रह गई है। सारा वैभव, सारी सम्पत्ति भी इस प्यास को नहीं मिटा पाई। अचानक आया वैधव्य अपने साथ नारी जीवन का पूर्ण अधिकार भी ले आया जो दिन प्रतिदिन बढ़ता गया, पैना होता गया—आज वही अधिकार मानों फन फैलाये अंधकार से निकल कर उन्हें ही डराने आ रहा हो। आज सुबह-सुबह फिर से उसे देख कर भय से पसीने-पसीने हो गईं माया देवी और पलंग पर कटे पेड़ की तरह गिर पड़ीं। आक्रोश व रुदन से कलेजा मुँह को आ रहा था।

कुछ देर बाद यशोदा कमरे में आई और यह सोचकर लौट गई कि शायद मालकिन फिर से सो गई हैं।

इधर पूजा खत्म करके शिवानी हाथ में दो फूल लिये नीचे उतरी और कमरे में आ गई। हेमन्त नींद में बेहोश अभी तक सो रहा था। उसे इस तरह सोते देख शिवानी को हँसी आ गई। छह बजने में पाँच मिनट बाकी थे। शिवानी ने ड्रेसिंगरूम में जाकर जल्दी से पूजा की साड़ी उतारी और इस्तरी की हुई सूती साड़ी पहन ली। पूजा की साड़ी तह करके दराज में रक्खी और बालों में कंघी करके ढीला सा जूड़ा बाँध लिया। तभी दीवाल पर टँगी घड़ी ने मधुर स्वर में छह के घंटे बजाये। फूल हाथ में लेकर पलंग के पास आई शिवानी। मसहरी हटा कर हेमन्त के माथे से फूल छुआये और पास रक्खी टेबिल पर रख दिये, फिर मसहरी उठाकर ऊपर टाँग दी।

इतना सब करने के बाद भी जब हेमन्त की नींद नहीं टूटी तो शिवानी नीचे झुक कर हेमन्त के कान पर मुँह ले जाकर मधुर स्वर में बोली, 'गत रजनीते झड़हये गेछे रजनीगंधार बने' (गत रात रजनीगंधा के बगीचे में शायद तूफान आया था)—इसीलिए अभी तक आँख नहीं खुली ? सुन रहे हो हेमन्त, उठो अब।

आँखें खोल कर करवट बदली हेमन्त ने और मुस्कुरा कर बोला, मैं भी कुछ कह दूँ, 'प्रभाते उठिया ओ-मुख देखिनु दिन जावे आजि भालो।' (सुबह उठते ही आज उसका मुंह देखा है, दिन अच्छा बीतेगा।)—और हाथ बढ़ाकर उसने शिवानी को अपनी तरफ खींचा।

यह क्या कर रहे हो ? छिः-छिः—देख नहीं रहे हो, सुबह हो गई है। उठ बैठो अब—

कम्बल उतार कर हेमन्त उठ कर बैठ गया। हेमन्त के कुर्ते की ओर नजर पड़ते ही शिवानी सिहर उठी। सिंदूर के दाग लग गये थे उस पर—हाय राम! यह क्या हो गया? जल्दी से जाकर कुर्ता उतार आओ, मैं धो दूँगी। जाओ न जल्दी से! जरा भी शरम लिहाज नहीं है तुम्हें—ऊपर से हँस रहे हो?—कौन?

मैं हूँ, यशोदा।

तुरन्त शिवानी दरवाजे पर आ गई। बोली, क्यों?

यशोदा बोली, बिस्तर उठा दूँ, धोने वाले कपड़े ले जाऊँ—इसलिए आई थी भाभी!

हेमन्त बाथरूम चला गया। शिवानी सीधी खड़ी होकर बोली, यशोदा दी, तुमसे कई बार कह चुकी हूँ, कि अपना काम मैं खुद करूँगी, कपड़े भी मैं खुद ही धोऊँगी—तुम्हें क्या याद नहीं रहता?

कमरे में झाड़ू भी नहीं लगवाओगी?

नहीं, नहीं लगवाऊँगी—शिवानी बोली, यह काम मेरा है। इस कमरे में तुम्हारे आने की कोई जरूरत नहीं है यशोदा दी।

आहत स्वर में यशोदा बोली, तुम्हारी ये बातें कोई अच्छी नहीं हैं, भाभी। मैं तो मालकिन जैसा कहती हैं, करती हूँ। इतने बड़े घर की बहू होकर तुम यह सब काम करोगी तो क्या मालकिन का सिर शर्म से नहीं झुक जायेगा?

शिवानी बोली, मालकिन से मैं अपने आप निपट लूंगी, तुम जाओ।

गुस्से में भनभनाती यशोदा वापस लौट गई। शिवानी को इधर कुछ दिनों से आकाश के एक छोर पर तूफान के आसार नजर आ रहे हैं! होंठों पर हँसी आ गई उसके।

कुछ देर बाद हेमन्त बाहर आकर टेबिल पर बैठ गया। शिवाजी ने उसके सामने गरम नीबू के पानी का प्याला रक्खा। हेमन्त की दिनचर्या का आरम्भ होता है। नारायण को देखकर शिवानी ने पूछा, दूध दुहा गया नारायण? मैंने चाय का पानी चढ़ा दिया है।

हाँ, भाभी—लाता हूँ अभी—

नीबू के पानी का घूंट भरकर हेमन्त बोला, जानती हो रुनु, औरत पुरुष को पालतू जानवर कब बनाती है?

रुनु ने मुस्कुरा कर नजरें उठाईं।

जब पुरुष एक दिनचर्या में बँध जाता है!—देख रहा हूँ कि मैं तुम्हारे हाथ का खिलौना बन गया हूँ।

शिवानी बोली, बातें खूब बनाते हो ! लेकिन मैं इतनी बेवकूफ नहीं हूँ कि तुम्हारी बातों में आ जाऊँ। दिनचर्या तो तुम्हारी बनाई हुई है—तुम्हारी गृहस्थी का साँचा है, मैं तो बस इसके लिए सामान जुटा देती हूँ ! तुम तो केवल खिलौना बने हो, पर मैं तो तुम्हारे हाथ का चाबी वाला खिलौना बन गई हूँ।

नारायण नीचे से औंटा हुआ दूध ले आया। ऊपर शिवानी की अलग पैन्ट्रि है—वहाँ से वह चाय की केटली में पानी ले आई और बिस्कुट निकाल लिये। सामान टेबिल पर रखते-रखते बोली—आज मुझे सामान खरीदने बाजार जाना है—समझे ?

हेमन्त बोला, ठीक है, चली जाना—अब तो तुमने ड्राइव करना सीख ही है, फिर क्या दिक्कत है ?

नहीं, भरोसा नहीं है।—शिवानी बोली, सुबह ट्रैफिक बहुत होता है। और जब-तब पुलिस के ट्रैफिक रूल्स इतने बदलते रहते हैं कि पता ही नहीं ।। मैं सुनील को साथ लेकर जाऊँगी।

हेमन्त के प्याले में चाय ढालते-ढालते शिवानी ने पूछा, आज दोपहर को क्या गे ? मांस या मछली ?

मांस मैंने छोड़ दिया है।

मज़ाक छोड़ो !—आज तुम्हारे लिए रोस्टेड चिकन भेजूंगी, क्यों ?

हेमन्त बोला, हाँ इसमें कोई बुराई नहीं है—यह भी मछली जैसा ही है।

दोनों जने चाय पीते हुए बातों में मशगूल थे। इसी समय यशोदा आई और ....I, मालकिन उठ गई हैं। तुम्हें बुला रही हैं रांगा भाई।

कहो, आ रहा हूँ—हेमन्त ने जवाब दिया।

कमरे की हवा बदल गई। अचानक गम्भीर हो गई शिवानी, और फिर किसी तरह जल्दी-जल्दी बिस्कुट निगल कर एक घूंट में चाय पी और खड़ी हो गई। उसके इस आकस्मिक परिवर्तन का कोई कारण न समझ कर हेमन्त पूछ बैठा, इतनी जल्दी उठ गई रुनु ? अच्छा, यशोदा को देखकर तुम्हें कुछ गुस्सा आ जाता है, क्यों, है न ?

शिवानी बोली, वह है तुम लोगों की बहुत पुरानी नौकरानी और मुझे आये हुए कुल एक साल हुआ है। उसके ऊपर गुस्सा करूँगी तो मेरी ही निन्दा होगी।

चाय खत्म करके हेमन्त माया देवी की तरफ चला और शिवानी देखती रही पीछे से एकटक। छह महीने होने को आये, बीच-बीच में इस घर का वातावरण जाने कैसे एक द्वन्द्व से भारी हो उठता है। हवा उलटी है। घर की दीवालें तक जैसे दबे स्वर में एक दूसरे के कान में कुछ फुसफुसाती रहती हैं—मानों शिवानी

के हर कदम को अन्तराल से देख रही हों। आजकल शिवानी को सोचना पड़ता है कि कहीं यह आवहवा धीरे-धीरे उसका दम तो नहीं घोंट देगी।

उसी समय देवानन्द और मनोहर वावू ऊपर आकर खड़े हुए। मनोहर वाजार जाने को तैयार होकर आया था। वोला, भाभी, कल आपने हिसाव माँगा था, लेकिन वाजार के भाव हर रोज इतने चढ़ते-उतरते रहते हैं कि हिसाव रक्खा ही नहीं जा सकता।

शिवानी वोली, मैंने खर्चे का हिसाव माँगा था। आप एक काम करिए मनोहर वावू, वाजार से क्या-क्या खरीदा और उसके भाव क्या हैं, रोज एक कागज पर लिख लिया करिए, नहीं तो मेरी समझ में कुछ नहीं आयेगा।

थोड़ी देर चुप रहकर मनोहर वोला, इस घर में आज तक तो यह किया नहीं।

सिर पर पल्ला खींचकर मुस्कुराते हुए शिवानी वोलीं, थोड़ा कष्ट तो अवश्य होगा, पर अव शुरू कर दीजिए!—ठाकुर, दूध के वर्तन में ताला लग गया?

आगे आकर देवानन्द टेविल पर चावी रखते हुए वोला, हाँ, यह रही चावी। मैं क्या दाल चढ़ा दूँ? चूल्हा जल गया है।

मनोहर थोड़ी देर तो नीचा मुंह किये खड़ा रहा, फिर नीचे उतर गया। उसकी ओर देखते हुए शिवानी ने जवाव दिया, हाँ ठाकुर, तुम दाल चढ़ा दो—मैं आती हूँ।

देवानन्द भी चला गया। थोड़ी देर वाद नारायण दूध की वाल्टी लेकर आया और शिवानी की ओर देखकर हँसते हुए वोला, भाभी, दूध के वर्तन में ताला लगाकर आपने वहुत अच्छा किया। अव देखिए, आजकल हमारे यहाँ छह सेर दूध होता है। वर्तन खुला रहता है तो एकदम दो सेर दूध कम हो जाता है! और अगर मैं चिल्ल-पों करूँ तो तुरंत चार सेर दूध का आठ सेर हो जाता है। समझीं भाभी, इसीलिए गुस्से से जल-भुन रहे हैं वे लोग आप पर।

तुझे कैसे पता चला?

पता नहीं चलेगा?—नारायण ने जवाव दिया, क्या कह रही हैं आप भाभी? वह आपकी यशोदा क्या करती है, जानती हैं? गोशाला से ही एक वड़ी लुटिया दूध की भरकर वह सीधे माधव के कमरे मे चली जाती है। दोनों वक्त पेट भर कर असली दूध पिलाती है वह माधव को—वह उसके गाँव का आदमी है न!

वड़ी मुश्किल से अपनी हँसी को रोका शिवानी ने। वोली, अच्छा, वस

कर ! जा वर्तन पैन्ट्रि में रख आ। खाने की चीज ही तो खाती है !—तो क्या हो गया !

शिवानी की आखिरी वात पर ध्यान न देकर नारायण दूध का वर्तन लेकर पैन्ट्रि की तरफ चला गया। उसका कहना है, इस घर में एक सुनील को छोड़कर वाकी पाँचों में से कोई भी विश्वास योग्य नहीं है।

करीव पन्द्रह मिनट वाद हेमन्त लौटा। शिवानी नाश्ते की तैयारी कर रही थी। मुँह घुमाकर वोली, नारायण तुम्हारे नहाने का गरम पानी रख गया है, नहाओगे न ?

हूँ !—कहकर हेमन्त वाथरूम की तरफ चला गया। दूसरी एक वात भी नहीं कही।

चुपचाप शिवानी ने उसकी तरफ देखा।

उसी समय माया देवी की तरफ से यशोदा निकली और सामने आकर वोली, भाभी, दूध के वर्तन में तुमने ताला लगा दिया, इधर मालकिन कव से चाय के लिए वैठी हैं।

मुँह उठाकर शिवानी वोली, वर्तन तुम माँ के पास ले जाओ। उसमें नीचे टोंटी लगी है, जितना दूध चाहिए ले लो।

ताला देखकर मालकिन गुस्सा होंगी।

शिवानी ने एक वार यशोदा की तरफ देखा और फिर स्वयं दूध का वर्तन उठाकर उसके सामने से माया देवी की तरफ चली गई। सास के सामने वर्तन रखकर वोली, माँ, दूध के वर्तन में ताला मैंने ही कहकर लगावाया है। रोज-रोज दूध का अपव्यय देखकर मैंने यह व्यवस्था की है।

शान्त स्वर में माया देवी ने पूछा, यशोदा से पूछ लिया था पहले ?

यशोदा से !—जरा चौंक कर शिवानी वोली।

इन सव चीजों का भार यशोदा पर ही रहता है। उसको वताये विना मैं भी कुछ नहीं करती, वहू !

आजकल माया देवी जव-तव शिवानी को वहू कहकर वुलाने लगी हैं। शिवानी वोली, तो फिर अव मुझे क्या करना है, वता दीजिए माँ ?

एक साल हो गया तुम्हें इस घर में आये।—माया देवी वोलीं, निश्चय ही तुमने अपना कर्तव्य स्थिर कर लिया है।

यशोदा पीछे ही खड़ी थी। यह कितनी अपमानजनक परिस्थिति है, इसका अनुमान शायद माया देवी को नहीं है, सोचकर ही शिवानी नतमुख चुप खड़ी रही।

माया देवी ने पुनः शुरू किया, तुम्हारी पोजीशन यहाँ कुछ और ही है। घर-गृहस्थी की इन छोटी-छोटी बातों में पड़कर घर में अशांति फैलाना तुम्हारे लिए उचित नहीं है। तुमने यशोदा को अपने कमरे में घुसने को भी मना कर दिया है ?—क्यों, जवाब नहीं दे रही हो ?

बासी बिस्तर पर बैठी थीं माया देवी प्रधान विचारक की तरह। मुंह उठाकर मुस्कुराते हुए शिवानी ने कहा—समय आने पर जवाब अवश्य दूँगी, माँ ! और धीर कदमों से कमरे से निकल गई।

अपने कमरे में आकर शान्त भाव से टेबिल पर नास्ता लगाने लगी शिवानी। कुछ क्षण पश्चात् यशोदा दूध का वर्तन ले आई और बोली, इसे कहाँ रक्खूं, भाभी ?

अपने पास ही रहने दो ना, यशोदा ?

यशोदा बोली, इस वक्त का तुम खर्च कर लो, शाम से दूध की जिम्मेदारी मेरी होगी।

नारायण टेबिल पर कप-प्लेट लगा रहा था। यह सुनते ही झट से बोला, तुम लोगी दूध की जिम्मेदारी ? चोट्टी कुतिया जलेबियों की रखवाली करेगी ?

हँस पड़ी शिवानी और बोली, नारायण तू बड़ा मुँहफट हो गया है। जा फ्लेक का डब्बा ले आ।

दूध का वर्तन वहीं पटककर जाते-जाते यशोदा बोली, नारायण, तुझे एक दिन छठी का दूध याद नहीं दिला दिया तो मेरा भी नाम यशोदा नहीं।

नारायण ने प्रतिवाद में जो कुछ कहा, तकदीर से कोई सुन नहीं पाया।

चार-छह टोस्ट, दो अंडों का पोच आदि नाश्ते की चीजें लेकर जैसे ही शिवानी पैन्ट्रि से निकली, देखा हेमन्त पहले ही टेबिल पर बैठ गया है। शिवानी ने जल्दी से एक प्लेट में गरम दूध और फ्लेक डालकर दो चम्मच चीनी डाली। टोस्ट एवं पोच दूसरी प्लेट में रखकर हेमन्त के हाथ के पास वह सरका दी। घुगनी और दूध का वर्तन भी सामने रख दिया और बोली, चाय या कॉफी, हेमन्त।

शिवानी का कंठस्वर इतना नम्र एवं मधुर था तथा नाश्ता देने का ढंग इतना आंतरिक था कि हेमन्त को अपनी गम्भीरता पर खुद ही शर्म आ गई। बोला, तुम नहीं बैठीं खाने को ?

तुम्हारे कहे विना कैसे बैठती ?

अचानक हाथ रोककर कुर्सी का सहारा लिया पीछे को हेमन्त ने। बोला, मतलब ? मैं हुक्म दूँगा तभी तुम खाओगी ? अवाक् कर दिया तुमने तो रनु !

हँसकर शिवानी बोली, तुम अधिकार दो तभी मेरा अधिकार है !

क्या हो गया है आज सुबह-सुबह यह तुम्हें ?—हेमन्त अस्थिर होकर बोला, अरे, तुम्हारा अधिकार तो नैतिक, सामाजिक हर तरह से है। याद रक्खो रुनु, संसार के हर देश के हर तरह के कानून द्वारा जिस बात का समर्थन अवश्य किया जायेगा—वह है इस घर में तुम्हारा पूर्ण अधिकार; और केवल अधिकार ही नहीं—मैं तो तुम्हारा अखंड प्रभुत्व मानने के लिए बाध्य हूँ ! छिः, तुम ऐसी बात मुँह पर क्यों लाती हो, रुनु ?

रंचमात्र भी चंचलता दिखाये बिना उसी प्रकार शान्त स्वर में वह बोली, तुम्हारा नाश्ता ठंडा हुआ जा रहा है।

टोस्ट, मक्खन की प्लेट एवं फ्लेक का डब्बा शिवानी के सामने सरका कर अपने हाथ से शिवानी की प्लेट में ढेर सारी घुगनी डाल कर हेमन्त बोला, बैठ जाओ।

कॉर्नफ्लेक पर दूध डालकर चीनी मिलाई शिवानी ने। हेमन्त को मालूम है कि अण्डा वह नहीं खाती। शिवानी बोली, आज तुम्हें देर हो गई, साढ़े नौ बजने को हैं।

हेमन्त के मुँह पर अब तक गांभीर्य की छाया क्यों पड़ी हुई थी और सहसा क्यों हट गई यह समझने के लिए शब्दकोश खोलने की जरूरत नहीं थी। शिवानी मुस्कुरा भर दी—ठीक उसी तरह जैसे वह एक साल से हँसती आ रही है। आज तक कभी उसे जरा भी चांचल्य बोध नहीं हुआ यह लक्ष्य की बात थी। हमेशा वह स्थिर व अकम्प रही है। जिस प्रकार वह चटुल नहीं है, उसी प्रकार भावुक भी नहीं है। जैसे हेमन्त के गाम्भीर्य की उसे दुश्चिंता नहीं है, वैसे ही उसके प्रबल आवेगोच्छ्वास से उसे अपने पर गर्व भी नहीं होता। उसे मालूम है, उसका अधिकार कितना है—संसार के हर कानून से वह परिचित है, अपने छोटे से छोटे कर्तव्य का उसे पूरा ज्ञान है। तिलमात्र भी भयभीत होने के लिए वह इस घर में नहीं आई। अपने स्वभाव को नहीं जानती क्या वह !

चुपचाप दोनों जने खा रहे थे। हेमन्त ने चुप्पी तोड़ी, आज आधा घण्टा देर भी हो जायेगी तो कोई बात नहीं। अच्छा रुनु—?

हेमन्त हँसा ! शिवानी ने मुँह उठाकर देखा।

एक बात पूछूँ, गुस्सा तो नहीं होओगी ?

हँसकर शिवानी बोली—अपनी किसी बात पर आज तक कभी मुझे गुस्सा होते देखा है ?

आज देर हो गई थी कुछ। नीचे खाना तो बन रहा था पर वह मामूली खाना था। हेमन्त का खाना शिवानी खुद बनाती थी। वह खाना होता था देशी और विदेशी का सम्मिश्रण। ठीक एक बजे सुनील हेमन्त का खाना उसके आफिस में पहुँचाया करता था।

: : ४ : :

मनोहर हिसाव किसी तरह मिला ही नहीं पा रहा था, मन में खटका लगा हुआ था, माथे पर पसीने की बूंदें चमक आई थीं। तीस साल से वह यहाँ गुमाश्तागीरी करता आ रहा है, लेकिन आज तक किसी ने उससे हिसाव नहीं माँगा! वह तो केवल खर्च करता आया है, हिसाव रखने की वात ही नहीं उठी इससे पहले।

रुपये-पैसे की सारी व्यवस्था शिवानी के ही हाथ में थी। मूल हिसाव उसे ही रखना पड़ता था—माया देवी इन चीजों को लेकर अपना दिमाग खराव नहीं करतीं। अतः हारकर एक दिन उसे हेमन्त से इस विषय में कहने के लिए मजबूर होना पड़ा।

हेमन्त बोला, लेकिन रुनु, इसके कारण झगड़ा उठ खड़ा होगा।

झगड़ा? किसके साथ?

मुस्कुराकर हेमन्त ने जवाव दिया, मनोहर माँ का विशेष प्रियपात्र है।

तो इसलिए हिसाव नहीं देगा तुम्हारा मनोहर? दुकानदार को रुपया देगा लेकिन रसीद नहीं लेगा? यह खूव अन्धेर है?—शिवानी हँसी।

हेमन्त बोला, वीच में पाँच साल वाहर रहा मैं। लेकिन वरावर देखता आ रहा हूँ, मनोहर दा के हाथ में ही सव कुछ है। मेरा काम तो वैंक को हिदायत देकर खत्म हो गया था। रुपया-पैसा वही निकालता है वैंक से।

क्या कह रहे हो तुम?—चौंक कर शिवानी वोली—और तुम्हारी वह हिदायत अभी तक चली आ रही है? इससे तो झगडा और वढेगा हेमन्त।

इसीलिए तो मुझे डर लगता है, समझी?

अनाचार का विरोध करने में डर किस वात का?

मैं माँ की वात कह रहा था।

मनोहर यदि माँ के पास रुपया-पैसा रखता होता तो फिर कहने की कोई वात नहीं थी।—लेकिन मैं तो वरावर देखती आ रही हूँ, माँ कभी भी रुपये-पैसे के झंझट में नहीं पड़तीं। यदि वे ही सव सँभालतीं तो रोना ही किस वात का था। दीर्घश्वास छोड़ा शिवानी ने—

हेमन्त बोला, तुम्हीं ने मुझे चेताया है, रुनु—नहीं तो मुझे आज भी पता नहीं कि इनमें से किस-किस को कितनी तनख्वाह मिलती है। सुना है, आजकल गाय-भैंस का खर्च बहुत बढ़ गया है। सब चीजों के दाम आसमान को छू रहे हैं।

हँसकर शिवानी बोली, सुनो हेमन्त, मेरे पिता जी विष्णुपुर के दीवान थे। हमेशा अच्छी हालत रही है उनकी। जमींदारी खत्म होने पर अपनी जमीन छोड़ने की एवज में रुपया भी कम नहीं मिला था। सारा हिसाब-किताब मेरे ही हाथ में रहता था—एक साल पहले तक था। लेकिन एक बात बता दूँ हेमन्त, मुझे आज भी हर चीज के भाव का पता है। रोज दो अखबार पढ़ती हूँ। किस चीज के दाम कितने बढ़े या कितने घटे—इसकी पूरी जानकारी है मुझे। तुम कभी भी आजमा सकते हो मुझे।

क्या कह रही हो तुम? आश्चर्य से हेमन्त का मुँह खुला का खुला रह गया।

हँसते हुए हाथ से उसका मुँह बन्द करके शिवानी बोली—इसमें चौंकने की क्या बात है? अच्छा, अब मेरी बहादुरी की बात छोड़ो। आज तो रविवार है, लेकिन तुम कल ही बैंक से अपनी सब हिदायतें वापस ले लो, समझे?

समझ लो, तूफान उठ खड़ा होगा रुनु।

दोपहर का वक्त था। हेमन्त पलंग पर लेटा था और शिवानी उससे सट कर बगल में बैठी थी। उसकी ठोड़ी हिलाते हुए हँस कर शिवानी ने कहा, स्त्री को बात-बात में डर नहीं दिखाना चाहिए! तुम्हें तो बताया है कई बार कि मैं डरती नहीं किसी बात से!

मनोमालिन्य का भी डर नहीं है तुम्हें?

जहाँ युक्ति बड़ी है, वहाँ मनोमालिन्य का सवाल ही नहीं उठता।

लेकिन मनोहर दा के विरुद्ध खड़ा होने का अर्थ जानती हो?

शिवानी बोली—फिर वही डर दिखाने लगे? मैंने तो सब सोच-समझ कर ही कहा है।

कुछ क्षण चुप रहा हेमन्त। जैसे किसी सोच में पड़ गया हो। फिर बोला, ठीक है, कल ही मैं बैंक में नये इन्स्ट्रक्शन भेज दूँगा। लेकिन सोच लो, इसके बाद की सारी जिम्मेदारी तुम्हारी।

बिल्कुल नहीं।—बात बीच में ही काट कर शिवानी ने कहा—जो कुछ भी हो माँ और तुम हो! सारी जिम्मेदारी तुम दोनों की है। माँ जो कहेंगी, वही होगा।

पर यह भी समझ रक्खो कि माँ को रुपये-पैसे की कोई खबर नहीं रहती।

कर्ता-धर्ता यशोदा ही हैं। उसी के पास माँ के हाथ-खर्च के रुपये रहते हैं।

कान लगाये ध्यान से सुन रही थी शिवानी सब कुछ। ये बातें उसके लिए कुछ विचित्र सी हैं। ये लोग पुराने जमींदार हैं। जमींदारी तो चली गई लेकिन उसकी बू दिमाग से अभी तक नहीं गई। कुछ देर बाद भीरु कंठ से शिवानी ने कहा, यदि बुरा न मानो तो एक बात पूछूं? तुम्हे आज तक कभी अपनी तनख्वाह घर लाते हुए नहीं देखा?

हेमन्त बोला, मेरी तनख्वाह के कट-कुट कर करीब डेढ़ हजार रुपये बचते हैं। आफिस से उसका चेक सीधे बैंक में चला जाता है। तुम्हे शायद अभी तक पता नहीं कि जरूरत पड़ने पर मैं भी मनोहर दा से ही मांगता हूँ। दो साल से ऐसे ही चलता आ रहा है।

हेमन्त की छाती पर रक्खा शिवानी का हाथ जैसे कुछ कांपा और स्थिर हो गया। हतबुद्धि की तरह शिवानी की आँखें जैसे फटी की फटी रह गई।

कुछ देर के लिए निस्तब्धता छा गई कमरे में। फिर करवट बदल कर हेमन्त जैसे स्वयं से कहने लगा—इस बेकार की चर्चा से दिमाग़ खराब हो जाता है। अब छोड़ो इसे। सारी दोपहर मिट्टी हो गई। छुट्टी के दिन तो बस मैं दो बातें जानता हूँ—या तो पत्नी से प्यार करना या फिर आराम से पाँव फैला कर सोना। रुनु, तुम्हारी बुद्धि जरा प्रखर है। यदि तुम वेदान्तवादिनी होती तो मेरे लिए अच्छा था।

पलंग से उतर कर शिवानी कुर्सी पर बैठ गई। करवट बदल कर हेमन्त बोला, यह क्या, गुस्सा हो गई?

ना।

अच्छा, तो उठो एक काम किया जाये। चलो गाड़ी लेकर घूमने चलें दोनों, डायमण्ड हार्बर की तरफ घूमेंगे।

क्यों? शिवानी ने पूछा।

हेमन्त बोला—क्यों क्या! नये वसन्त की हवा है। और फिर वहां से सूर्यास्त बड़ा अच्छा लगता है।

शिवानी बोली, और अगर अनावश्यक पेट्रोल खर्च करने के लिए तुम्हारे मनोहर दा पैसे न दें तो?

लेटा हुआ हेमन्त यह सुनते ही उठ बैठा और शिवानी की तरफ देखने लगा—एकटक, बिना पलक झपकाये।

जैसे व्यंग से हँसी शिवानी। बोली, वेदान्तवाद पुरुष को अच्छा लगता है, लेकिन जिन्हें घर-गृहस्थी चलानी पड़ती है, वे अगर वेदान्तवादिनी हो जायें तो

आदमी सारा वेदान्त भूल जाये। तुम अगर वास्तव में प्रकृत पुरुष होते तो तुमसे कहती भी—।

निर्बोध की तरह बात का ओर-छोर न समझकर हेमन्त ने पूछा—तुम्हें ा क्या है ?

वताती हूँ, पर गुस्सा मत करना, हेमन्त ! आज सात दिन से बराबर माँ से ़ती आ रही हूँ पर उन्होंने कान तक नहीं दिये मेरी बात पर। मनोहर दा के स बार-बार कहलाया लेकिन उसने भी सुनी अनसुनी कर दी। अब तुम ही ाओ, अपनी बात किससे कहूँ जाकर ?

क्यों, मुझसे क्यों नहीं कहा ?

तुमसे ? कौन हो तुम ? पति के अलावा तुम और क्या हो—जरा दबे स्वर शिवानी बोली, तुम तो बस वही बन सकते हो ! न तो तुम रक्षक हो, न भिभावक और न ही परिपालक—कुछ भी नहीं हो तुम। आज यदि सुनील या ारायण नहीं होता तो तुम्हे भी मुँह दिखाने लायक न रहती मैं।

पलंग से उठकर पास आ गया हेमन्त और उसकी पीठ पर हाथ रखकर ोला, बात क्या है रुनु ?

कुछ देर चुप रहकर बोली शिवानी, मेरी अवस्था में किसी दूसरे घर की हू होती तो पति के सामने अपने सुहाग का रोना रोती ! लेकिन मैं हूँ आचार्यों ी लड़की। इस घर में रोने नहीं आई। अगर कभी भी मेरी आँख से एक आँसू ी गिरते देखो तो नाम बदल देना मेरा।

एक कुर्सी खींचकर उसके बिल्कुल सामने बैठ गया हेमन्त; फिर बोला, अब ताओ क्या हुआ ?

शिवानी बोली, मेरी बात की क्या कीमत है तुम्हारे लिए हेमन्त ? उधर जाओ माँ के पास। वहाँ बैठकर मनोहर और यशोदा के साथ मीटिंग करो। पूछो जाकर, कि मेरे घर खाने की कोई चीज नहीं है इसका उत्तरदायी कौन है ? इतने बड़े घर की बहू होकर बार-बार नौकर-चाकर के सामने हाथ फैलाना पड़ता है मुझे, क्यों ? पूछ कर आओ जाकर !

मुझसे पहले कहा तुमने ?

तुमसे ?—व्यंग से मुस्कुराई शिवानी—डेढ़ साल हो गया, तुम्हें देखती आ रही हूँ। तुम्हारे जैसे भद्र पति को पहचानने में तो दो दिन नहीं लगते। तुम रूपवान हो, स्वास्थ्यवान हो, वित्तवान हो—लेकिन सब कुछ होते हुए भी तुम कितने अयोग्य हो, यह मेरे अलावा कोई नहीं जानता। विलायत से लौटना तुम्हारे लिए उचित नहीं हुआ हेमन्त ! वहाँ होटल में आराम से थे और रुपये-पैसे

की कोई दिक्कत नहीं थी। घर-गृहस्थी तुम्हारे जैसों के लिए नहीं होती।

हेमन्त कुछ कहने जा ही रहा था कि शिवानी निःशब्द दवे पांव उठकर आई और फटाक से दरवाजा खोल दिया। सामने खड़ी थी यशोदा! दरवाजे से कान लगाये न जाने कव से खड़ी सव सुन रही थी वह।

यहाँ क्या कर रही हो तुम?

इसके लिए शायद तैयार नहीं थी यशोदा! जरा सकुचा कर वोली, चाय का पानी चढ़ा दूँ क्या, यह पूछने आई थी!

विल्कुल झूठ!—शिवानी ने हेमन्त को वुलाया—सुन रहे हो, जरा आना वाहर। नहीं, हिलना मत, खड़ी रहो चुपचाप—

वाहर आकर हेमन्त ने पूछा, तुम यहाँ किसलिए आई यशोदा दी?

शिवानी वोली, आज ही नहीं, डेढ़ साल से वरावर इसी तरह कान लगाये जाते रहे हैं इस दरवाजे पर! सिर्फ यशोदा नहीं, और लोग भी हैं।

सिर नीचा किये चुपचाप खड़ी थी यशोदा! हेमन्त वोला, किसलिए तुम यह करती हो यशोदा दी? जवाव दो।

सारा दोष मेरा अकेले का नहीं है।—कहकर उलटे पाँव जान छुड़ाकर भागी यशोदा।

शिवानी वोली, इन्हीं सव वातों की वजह से बीबी जी ने यहाँ आना छोड़ दिया। मेरे पिता जी ने आज तक इस घर में पैर नहीं रक्खा, जानते हो क्यों? मेरे वारे में अत्यन्त घृणित वातें इस घर में आकर सुनी हैं दीनू काका ने और मजवूर होकर उन्हें पिता जी को वह सव वताना पड़ा है। मिनि से तुमने शादी नहीं की, इस आक्रोश से हिरणमयी ने आठ-दस वेनामी चिट्ठियाँ पिता जी के पास डाली हैं। तुम्हारी इला दी ने मेरे वारे में न जाने क्या-क्या जघन्य वातें फैलाई हैं वीवी जी की ससुराल में। दीनू काका को लेकर वुआ पर कलंक लगाया है तुम्हारे घरवालों ने। और सुनना चाहते हो कुछ?

विस्मय से मुंह फाड़े स्तब्ध खड़ा सव सुन रहा था हेमन्त। बोला, तुम्हारे वारे में क्या कहा है इला दी ने?

गुस्से से भरी दवे स्वर में वोली शिवानी, जाओ और जाकर अपनी गर्भ-धारिणी माँ से पूछो! यदि उनसे डर लगता हो तो इसी वक्त चले जाओ अपनी वहन की ससुराल और माँ के प्रति घृणा देख आओ अपनी वहन की।

डरता तो मैं किसी से भी नहीं! ठीक है, माँ से ही पूछता हूँ जाकर—लेकिन तुम भी चलो मेरे साथ, आज आमने-सामने खुलकर वात हो जाये।

शिवानी ने जवाव दिया, नहीं, मैं नहीं, जाऊँगी हेमन्त। उन्होंने मुझे अपनी

तरफ आने के लिए मना किया है। वह नहीं चाहती कि आचार्यों की लड़की होकर मैं उनके खान-पान का रंग-ढंग देखूं और फिर इसके अलावा एक दिन यशोदा के सामने ही उन्होंने मेरा अपमान किया था। इस घर में मेरा कोई सम्मान नहीं है, हेमन्त !

खिन्न होकर फिर से कुर्सी पर बैठ गया हेमन्त। गृहस्थी की इस नई जटिल समस्या ने मानो चारों ओर विभीषिका फैला कर ऑक्टोपस की तरह उसे अपनी हिंस्र बाँहों में घेर लिया हो। वह जैसे किसी शैतान के जाल में फँस गया हो। हिंसा, विद्वेष, ईर्ष्या आदि सबने मिलकर एक बड़े भारी दानव का रूप ले लिया हो और अब उसके विवाहित जीवन को ग्रास करने को कमर कस ली हो। विश्वास ही नहीं होता सारी बात पर।

शुष्क स्वर में हेमन्त बोला, मैं फिर कहता हूँ रुनु, डर मुझे किसी का नहीं है, बस परिणाम के बारे में सोचकर ही चुप रह जाता हूँ। लेकिन इस घर के सम्मान की रक्षा करना मेरा पहला कर्तव्य है, रुनु। तुम निश्चिन्त रहो, श्वसुर महाशय के पास मैं स्वयं जाऊँगा। अच्छा, तुम बता सकती हो कि रोज शाम को गाड़ी लेकर माँ कहाँ जाती हैं ? और इतनी रात गये क्यों लौटती हैं ?

शिवानी बोली, मुझे इन सब बातों का क्या पता ? अपनी हिरण्मयी मौसी से पूछना या फिर रामसेवक को बुला कर उससे कैफियत ले सकते हो।

थोड़ी देर बाद न जाने क्या सोचकर हेमन्त उठा और बिना कुछ कहे कमरे से निकलकर सीधे माँ की तरफ चला गया।

बरामदा पार करके जैसे ही हेमन्त पश्चिम वाले हिस्से में पहुँचा, यशोदा सामने पड़ गई। हेमन्त को देखकर बोली, मैंने बिल्कुल बुरा नहीं माना रांगा भाई। इस तरह की बातें कान में पड़ने पर आदमी को गुस्सा आ ही जाता है।

हटो रास्ते से—कहकर उसकी बगल से चला गया हेमन्त और सीधे माँ के कमरे में पहुँचा। माया देवी बैठीं अँगरेजी फैशन की मैगज़ीन के पन्ने उलट रही थीं। लड़के को देखकर मुँह उठाया ऊपर उन्होंने !

माँ, यह सब क्या हो रहा है, बताओ तो ?

भौंहें सिकोड़कर माया देवी ने कहा, बहू ने अकेला छोड़ दिया तुझे ?

इधर-उधर देखकर पलंग के एक कोने पर बैठ गया हेमन्त। माँ की बात का जवाब नहीं दिया कुछ। लेकिन ठीक उसी समय कमरे में आकर यशोदा बिना मतलब उठा-धरी करने लगी।

हेमन्त बोला यशोदा दी; तुम इस वक्त जाओ यहाँ से।

माया बोलीं, तुम लोग नौकर-चाकरों के पीछे इस तरह हाथ धोकर क्यों पड़

गये हो भला ? इतने बड़े घर की देख-भाल, साफ-सफाई कौन करता है ? तेरी बहू ? अच्छा बोल, क्या कहने आया था ?

गला साफ करके हेमन्त बोला, इस तरह की अशांति बर्दाश्त करना मेरे लिए सम्भव नहीं है, यह मैं आज कहे देता हूँ। यह किस देश की सभ्यता है जो यशोदा हर वक्त मेरे कमरे के दरवाजे पर कान लगाये बैठी रहती है ?

घूम कर खड़ी हो गई यशोदा—सुन लिया मालकिन ? मैंने तो तभी तुमसे कहा था ? नारायण खर्राटे भर रहा था, मैं तो पूछने गई थी कि चाय का पानी चढ़ा दूँ क्या—

चुप रहो !—हेमन्त ने धमकाते हुए कहा—इससे तो अच्छा था, मैं यूरोप में ही रह जाता। रोज-रोज की मुसीबत से तो जान बची रहती।

मैं भी अपनी भूल स्वीकार करती हूँ हेमन्त। उस लड़की को घर में लाकर मैंने ही तेरे जीवन में आग लगाई है !—फट पड़ीं माया देवी। हाथ के पास ही मिनि थी, लेकिन घर आई लक्ष्मी को ठोकर मार दी मैंने—!

अब यह सब कहने से क्या फायदा माँ ? तुमने उसे अपने घर की बहू माना है।—और फिर मैं कोई अन्धा नहीं हूँ, डेढ़ साल से उसे बिल्कुल नजदीक से देखता आ रहा हूँ—

हर वक्त चिपटे रहने से देखा नहीं जाता हेमन्त, समझा ?

हेमन्त दबा नहीं, बोला, लेकिन मैंने तो उसमें कोई कमी नहीं देखी।

माया देवी बोलीं, अच्छा तू बैठ यहाँ। यशोदा, अपनी भाभी को बुला तो ला जाकर।

यशोदा गई और दो मिनट बाद शिवानी को साथ लेकर लौट आई।

माया देवी आराम से ईज़ीचेयर पर बैठी थीं। शिवानी को देख कर सीधी होकर बैठ गई और बोलीं, बहू मेरे हर प्रश्न का ठीक-ठीक जवाब देना।

बोलिए। खड़े-खड़े शिवानी ने जवाब दिया।

शादी के दूसरे दिन से ही मेरे बार-बार कहने पर भी इस घर की रुचि, शिक्षा व सम्मान के अनुरूप अपने चाल-चलन को बदलने की तुमने कोई कोशिश नहीं की। मेरा पहला प्रश्न यह है—

शान्त व स्पष्ट स्वर में शिवानी ने जवाब दिया—इस घर की रुचि व शिक्षा इतनी गन्दी है कि उससे कदम मिला कर मैंने बड़ाई नहीं लेनी चाही।

स्तब्ध रह गया हेमन्त। उसकी ओर देख कर माया देवी बोलीं, सुनता जा हेमन्त। अच्छा अब मेरे दूसरे प्रश्न का जवाब दो। जिस दिन यहाँ पार्टी दी थी

मैंने, तुम्हारा अहंकार देख कर सब चकित रह गये थे। घृणा से तुमने बात तक नहीं की थी किसी से।

शिवानी ने जवाब दिया—उन लोगों में केवल बीबी जी ही ऐसी थीं जो बात करने योग्य एक भद्र महिला कही जा सकती थीं।

और बाकी ?

व्यंग से मुस्कुराई शिवानी। बोली, अभद्र, नीच, निर्लज्ज ! यदि अभी और सुनना चाहती हैं तो साफ-साफ कह दूँ कि वह आपकी सहेली—वह बैरिस्टर की पत्नी हिरण्मयी—भद्र समाज में बिल्कुल बैठने लायक नहीं हैं। चरित्रहीन तो हैं ही पर साथ ही साथ दूसरे के धन की लोभी एवं ईर्ष्यालु भी हैं। मेरा तो कहना है कि आप उस नर्क में जाना-आना बन्द कर दीजिए।

माया देवी बोलीं, तो फिर इसका मतलब है कि मेरे सम्बन्ध में भी तुम्हारी यही धारणा है।

शिवानी ने नजर उठा कर एक बार हेमन्त की ओर देखा। इधर यशोदा काठ बनी खड़ी थी। उत्तेजित होकर हेमन्त बोला, रुक क्यों गई ? मेरे सामने ही कहो।

हेमन्त का मनोभाव न समझ कर माया देवी बोलीं, गुस्सा मत कर हेमन्त। जो मुँह में आये कहने दे।—हाँ, तो फिर आगे सुनूं !

जरा भी विचलित हुए बिना उसी प्रकार शांत स्वर में शिवानी ने शुरू किया, गुस्सा मत करियेगा मेरी बात सुन कर। आप सही-सही उत्तर चाहती हैं न ? शादी के दो-चार दिन बाद से आपने मेरे पीछे जासूस लगा रक्खे हैं। कभी यशोदा, कभी मनोहर और कभी देवानन्द तो कभी वह माधव—जिनके कमरे में आप जब तब आधी रात को यशोदा को भेजा करती हैं—

मैं ?—विस्मित होकर बोली माया देवी।

मुस्कुरा कर शिवानी बोली, हाँ, यशोदा पहले से ही बत्ती अवश्य बुझा देती है। अन्धकार में आप लोगों का चलना-फिरना कुछ ज्यादा ही होता है।

अब यशोदा चुप नहीं रह सकी। चिल्ला कर प्रतिवाद करने जा ही रही थी कि अचानक आग-बबूला बन गया हेमन्त—फिर मालिक के मुँह पर जवाब ? निकलो कमरे से, नहीं तो अभी जूते मार-मार कर—।

हेमन्त को उठकर धक्का देकर बाहर निकालने का अवसर दिये बिना यशोदा जल्दी से बाहर निकल गई।

लेकिन शिवानी रंचमात्र भी अस्थिर नहीं हुई। वह शायद जानती है कि

मानसिक दुर्बलता से ही भयानक उत्तेजना का जन्म होता है। हेमन्त की ओर देखकर बोली, तुम क्यों छोटों से मुंह लगाकर छोटे बनते हो ?

फिर से बैठ गया हेमन्त। शिवानी ने फिर शुरू किया—ऐसी गंदगी में चलने-फिरने की मुझे आदत नहीं है, माँ। शायद मेरे पिता जी आधुनिक नहीं हैं, इसीलिए मैं एक दूसरी तरह की रुचि व संस्कृति लेकर इस घर में आई थी।

विरक्त होकर माया देवी बोलीं, बड़ी-बड़ी बातें रहने दो, बहू। मुझे भाषण दे रही थी, वही खत्म करो पहले।

शिवानी-बोली, मेरी बातें आपकी समझ में नहीं आयेंगी माँ।

जानती हो, कहाँ खड़ी होकर तुम मेरी आलोचना कर रही हो ?

जानती क्यों नहीं।—शिवानी ने प्रत्युत्तर दिया, मेरे श्वसुर की अट्टालिका में आप बैठी हैं और मैं अपने पति के घर में खड़ी हूँ।

माया देवी बोलीं, ठीक है, हेमन्त के सामने ही जवाब दो कि आधी-आधी रात तक तो तुम मेरी जासूसी करती हो, लेकिन रात के अंतिम प्रहर में खुद पति का बिस्तर छोड़ कर कहाँ जाती हो ?

जोर से हँस पड़ी शिवानी—मेरे पति ही बतायें कि कहाँ जाती हूँ ? रात को चार बजे स्नान करके मैं पूजा के कमरे में बैठकर पूजा करती हूँ—यह कहने में मुझे बिल्कुल शरम नहीं आती। मैं तो वही पुराने जमाने की लड़की हूँ।

हूँ—मुँह बिचकाया माया देवी ने—और बीच-बीच में छुपकर सुनील के कमरे में किसलिए जाती हो ?

आपका इशारा बहुत ही घृणित व अभद्र है। पति का मनपसन्द खाना मैं उनके आफिस में भेजती हूँ, यह आपको पसन्द नहीं है। इसलिए आपने मनोहर को खर्च के लिए मुझे रुपये देने को मना कर दिया है। आप ही के संकेत पर देवानन्द मेरी कोई बात नहीं सुनता। हार कर आपका सम्मान बचाये रखने की खातिर सुनील के पास छुपकर रुपये उधार माँगने जाती हूँ।

आहा, हा, पति के सामने सती सावित्री बनने का क्या ढंग है ? तुम सोचती हो कि तुम्हारी इस क़ैफियत से मैं बहल जाऊँगी ? तुम्हे कैसे समझाऊँ कि जल में रहकर मगर से बैर करने पर कभी न कभी विपत्ति का सामना करना ही पड़ता है ? उस छोकरे नारायण के अलावा क्या इस घर में कोई तुम्हारा मित्र नहीं है ?

ना, नहीं है, बार-बार कहती हूँ, नहीं है। केवल वही दोनों मेरे बुरे वक्त के साथी हैं। गुस्सा मत करियेगा, और सुनिए माँ—सुनील या नारायण से रुपये उधार लेने से पहले मैं इनके कान में बात डाल सकती थी, लेकिन नहीं डाली, तो

केवल इसलिए कि ये कान के जरा कच्चे हैं, इनका मेरुदंड जरा दुर्बल है। इनको यदि पता लगता कि माँ होकर आप घर की वहू को भूखों मारना चाहती हैं या उस वहू को मजबूर होकर चाकर के सामने हाथ फैलाकर भीख माँगनी पड़ी है, तो आप मुश्किल में पड़ जातीं। जो कुछ भी हुआ, पर आपसे एक भीख माँगती हूँ माँ। मैं आपके अपने लड़के की वहू हूँ, सौत के लड़के की नहीं—आप मेरी निन्दा-कुत्सा छोड़ दीजिए, इसी से आपका व मेरी ससुराल का सम्मान बच सकता है।

शिवानी जाने को मुड़ी ही थी कि पीछे से माया देवी का क्रुद्ध स्वर सुनाई दिया—अहंकार की भी एक सीमा होती है, वहू। लड़के को सामने बैठा कर माँ होने के कारण आज तुम्हारी गुणगाथा नहीं सुना पाई।

चौंक कर रुक गई शिवानी।

माया देवी ने वात पूरी की, ध्यान रक्खो, मेरे हाथ में पाशुपत अस्त्र है, इस अस्त्र के केवल एक वार प्रयोग से तुम्हें हमेशा के लिए शिक्षा मिल सकती है।

घूम कर खड़ी हो गई शिवानी और हँसकर वोली, आचार्यों की लड़की किसी चीज से नहीं डरती, माँ। इतना और कह जाऊँ कि आपकी वात मैंने अभी पूरी नहीं की; यह सोचकर कि सव सुनकर लड़के के सामने कहीं आप आंतकित न हो उठें।

चेयर छोड़कर सीधी खड़ी हो गई माया देवी और दाँत किटकटा कर आँखों से अग्नि वरसाते हुए वोलीं, मेरे मुंह पर मेरी निन्दा की तो मैं वर्दाश्त नहीं करूँगी—

हेमन्त ने पलंग से उतरकर जल्दी से दरवाजा वन्द किया और दोनों के वीच में आकर खड़ा हो गया। देखने की वात थी कि शिवानी के चेहरे पर आक्रोश या उत्तेजना का चिह्न तक नहीं था। वह मुस्कुराकर धीरे से वोली, मेरे ख्याल से जो मैं कहना नहीं चाहती थी वह आप स्वयं समझ गईं। डरिए मत, जितने दिन हो सकेगा, चुप ही रहूँगी।

और दरवाजा खोलकर वाहर निकल गई शिवानी।

कमरे में रह गये माया देवी और हेमन्त। पाँच मिनट तक ऐसी चुप्पी छाई रही वहाँ जैसे किसी की मृत्यु हो गई हो। सुई भी गिरे तो आवाज़ सुनाई दे जाय। लगता था, दोनों वहुत कुछ कहना चाहते थे पर समझ नहीं पा रहे थे कि कैसे शुरू करें। आखिर माया देवी ने ही चुप्पी तोड़ी—क्यों रे हेमन्त, तू क्या मुझे यह सव सहन करने को कहता है?

ना।—जवाव दिया हेमन्त ने।

तेरी वहू इतने दिनों से केवल अपमान करती आ रही है मेरा। मेरे सामने

मुंह उसने आज पहली वार खोला है! लेकिन आज पहली वार ही वह अपना भयानक रूप दिखा गई!—शिवानी के प्रति अपनी असीम घृणा को छुपाये रखकर माया देवी ने कहा, अब मैं अगर अन्तिम फैसला करके इस वात को खत्म कर दूं तो तुझे क्या वहुत दुःख होगा?

ना।—वही छोटा-सा उत्तर दोहरा दिया हेमन्त ने।

माया देवी वोलीं, डेढ़ साल से रुनु के जो रंग-ढंग देख रही हूं—उससे क्या तेरे ख्याल से वह कभी इस घर की रुचि, शिक्षा या सामाजिकता के अनुरूप अपने को ढाल पायेगी? तू क्या समझता है कि मेरी उसकी आपस में कभी पटरी वैठेगी?

नतशिर हेमन्त वोला, ना, मुझे तो नहीं लगता।

तो फिर सुन ले कान खोल कर, मैं भी चुप नहीं वैठूंगी! एक औरत को दूसरी औरत को पहचानने में कितनी देर लगती है रे? पुरानी, सड़ी-गली कितावों के दो मन्त्र, सात फेरों का वन्धन और कालीघाट की उस नंगी मूर्ति की तरह सिंदूर से रँगा माथा—इनकी कीमत मेरे लिए दो कौड़ी भी नहीं है। इस वहू की खातिर मैं कहीं नहीं जा पाती, लोगों को मुंह दिखाना मुश्किल हो गया है। वस, अब जव तूने सख्त होने को कह दिया है तो मुझे कोई चिंता नहीं रही! जा, एक वार फिर ले आ उसे वुलाकर, तेरे सामने ही फैसला हो जाय।—गुस्से से कांप रही थीं माया देवी।

हेमन्त उठकर वाहर चला गया। करीव दो-तीन मिनट वाद शिवानी आकर वोली—

मुझे वुलाया था आपने?

हाँ, हेमन्त कहाँ है?

गुमसुम होकर वैठे हैं—आये नहीं!

हूँ—जरूर तुमने मना किया होगा आने को?

शिवानी वोली, आप वड़ी हैं, वार-वार आपके सामने आकर वाद-विवाद करने में मुझे शर्म आती है। प्यार जहाँ कम होता है वहाँ श्रद्धा और विश्वास भी नहीं के वरावर रह जाता है।

विल्कुल ठीक कह रही हो तुम—मैं थोड़ा सा और जोड़ दूं उसमें—अश्रद्धा व अविश्वास को लेकर जीवन भर तुम—हाँ, तुम और हम साथ-साथ नहीं रह सकते! मैं इसका प्रतिकार करूँगी। और—उस प्रतिकार की व्यवस्था मेरे तथा हेमन्त के हाथ में ही है।

शिवानी हँसी तो नहीं पर मुस्कुरा कर सास की ओर देखा। वड़ी-वड़ी काली

आँखों में जैसे ज्योति की किरणें फूट पड़ी थीं ! नम्र मधुर स्वर में बोली, आपने अपनी बात स्पष्ट नहीं की माँ। जरा खोलकर उस प्रतिकार के बारे में बताइए। मैं नाबालिग़ नहीं हूँ।

जरा शान्त व संयत बनने की चेष्टा करते हुए माया देवी बोलीं, तुम्हारा और हेमन्त का रिश्ता मैं स्वीकार नहीं करती, समझी ? मैं इस शादी को रद्द करना चाहती हूँ।

ओह, यह बात है !—निर्भय की तरह जोर से हँसी शिवानी और बोली, यह छोटी सी बात आप पहले ही बता देतीं तो बात ही नहीं बढ़ती।

माया देवी बोलीं, हाँ, मैं आधुनिक औरत हूँ, इस काल की हवा में श्वास लेकर जीती हूँ। मेरी धारणा है, पति-पत्नी का सम्बन्ध अटूट या अच्छेद्य नहीं होता। शादी एक साधारण घटना मात्र होती है, रोज हजारों विवाह होते और टूटते हैं। विवाह से मनुष्य का जीवन कहीं बड़ी चीज है। अतः जीवन की विभिन्न परिस्थितियों के अनुसार विवाह भी जब चाहे तोड़कर दूसरा किया जा सकता है। मेरा ख्याल है अब तुम लोगों का यह विवाह किसी भी तरह टिका नहीं रह सकता।

शिवानी ने पूछा, आप किस प्रकार इस विवाह को रद्द करेंगी ?

बहुत आसान है ! बस, एक दरख्वास्त देनी पड़ेगी केवल !

दरख्वास्त में कोई कारण तो दिखाना ही पड़ेगा।

कारण !—वह भी सोच कर ठीक कर लेंगे।

शिवानी बोली, नहीं माँ, ऐसे काम नहीं चलता। वह दरख्वास्त आप ही को पेश करनी पड़ेगी ! आपको लिखना पड़ेगा कि मुझे अपनी पुत्रवधू पसन्द नहीं है, क्योंकि उसका चाल-चलन पुराने जमाने का है ! वह भारतीय आचार व निष्ठा में विश्वास करती है, भारतीय सभ्यता, संस्कृति व शिक्षा के प्रति उसकी अंध श्रद्धा है, हिन्दू विवाह को वह अच्छेद्य व अटूट मानती है तथा हर दूसरे दिन पति बदलना उसकी रुचि-बोध व नीति-बोध के खिलाफ है।—यह सब लिख कर नीचे अपने साइन करके आप दरख्वास्त दीजियेगा। और फिर जज इसका क्या जवाब देता है, यह भी मुझे बताइयेगा।

सब सुनकर माया देवी के धैर्य का बाँध टूट गया। ज्वालामुखी की तरह फट पड़ीं वह—तुम क्या मुझे बन्दर का नाच नचाने आई हो ?

मुस्कुरा कर शिवानी बोली, मैं क्यों नचाऊँगी माँ, आप खुद ही नाच रही हैं।—इतना कह कर उसने दरवाजा बन्द किया और उनके बिल्कुल पास आकर

बोली, माँ, कमरे में कोई नहीं है, आज आपको अकेले में पाया है। मेरी अपनी माँ नहीं हैं, आपको ही माँ समझा है मैंने !

बेकार की बातें छोड़ो रुनु—जो कहना है, झटपट कह डालो।

शिवानी ने कहना शुरू किया, चाहे कोई कुछ भी कहे, लेकिन मैं आपको अच्छी तरह जानती हूँ। आप बहुत सीधी व सरल हैं, लेकिन अन्ध आक्रोश व ईर्ष्या आपको बेचैन किये हुए हैं। मुझे आप घर से निकाल देना चाहती हैं, लेकिन आपने एक बार भी नहीं सोचा कि मुझे आप कैसे निकाल सकती हैं? मेरी मालिक आप सहीं हैं। आप कह रही थीं कि प्रतिकार की व्यवस्था आप दोनों के हाथ में है, तो क्या यह सही है? मुझे सब पता है माँ, कि आप कहाँ-कहाँ बेनामी चिट्ठियाँ लिखती हैं, आपकी सहेली हिरण्मयी देवी मेरे नाम से किसको चिट्ठियाँ भेजती हैं, मुझको बदनाम कर घर से निकाल कर किस लड़की को घर में लाना चाहती हैं, कहाँ की रहने वाली वह लड़की है—मुझे सब पता चल गया है माँ।

यह सब तुम्हारी चालाकी है, मेरे पेट से बात निकालना चाहती हो तुम!—घबरा कर माया देवी बोलीं।

शिवानी ने एक बार पीछे मुड़कर देखा। ना, यशोदा नहीं थी। फिर बोली, मैं कुछ नहीं चाहती। पर एक बात कहती हूँ। आपके लड़के को पाला-पोसा है आया ने, घूमा-फिरा है वह नौकर-चाकरों के साथ, खेला-कूदा है दोस्तों के साथ और फिर चला गया यूरोप। न तो लड़का माँ को पहचानता है और न ही माँ लड़के को पहचानती है। पुत्रवधू बना कर जिस लड़की को घर में लाई, उसे एक दिन के लिए भी सास का स्नेह नहीं देना चाहा आपने। सन्तान को आपने अपने से दूर रक्खा, लेकिन पुत्रवधू को रात के आमोद-प्रमोद की संगिनी बनाना चाहा। मुझे मालूम है आप शाम के बाद कहाँ जाती हैं, मैं यह भी जानती हूँ कि सरकार साहब कैसे आदमी हैं। मुझसे यह भी नहीं छुपा है कि अधिक रात होने पर यशोदा आपको किसकी गाड़ी से उतार कर लाती है। सिर्फ इतना ही नहीं, आगे और भी कहने के लिए क्षमा करियेगा माँ—दिन के समय आप जो कुछ खाती-पीती हैं शायद हिन्दू आचार-विचार के अनुरूप होता है, किन्तु मैं जानती हूँ कि आपका रात का होटल का बिल मनोहर जाकर चुकाता है।

माया देवी के सिर पर जैसे पहाड़ टूट पड़ा यह सब सुनकर। चुप बैठी रहीं वह।

शिवानी रुकी नहीं, आप लड़के के कल्याण के लिए मुझे भगाना चाहती हैं, यह सच नहीं है। आप मुझे भगाना चाहती हैं ईर्ष्या के कारण। आपने शायद

फ्रायड, युंग, हैवलॉक, एलिस को नहीं पढ़ा है। मैंने पढ़ा है इन सबको! आप अकारण एक लड़की का जीवन बर्बाद करना चाहती हैं, लेकिन असली कारण क्या है, मैं जानती हूँ। मैं फिर आपसे अनुरोध करती हूँ कि औरत होकर औरत से शत्रुता मत करिए।

शिवानी जैसे आई थी, वैसे ही दरवाजा खोल कर चली गई।

साँझ हो गई थी, लेकिन कमरे में अभी तक लाइट नहीं जली थी। स्तब्ध, निश्चल बैठी थीं माया देवी। नवयौवन मानों विगत यौवन को प्रताड़ित कर गया था। यशोदा ने आकर बत्ती जलाई। माया देवी को चुप देखकर बिना मतलब उठा-धरी की। फिर भी माया देवी नहीं बोलीं तो मौन तोड़ते हुए यशोदा ने कहा, तुम्हारे टॉनिक का वक्त हो गया है मालकिन।

यशोदा की बात जैसे माया देवी के कान तक पहुँची ही नहीं। जाने कैसे तो भर्राये स्वर में जैसे उन्होंने स्वयं से कहा—जब इतनी दूर तक बात बढ़ गई है तो मैं भी देख लूँगी!

:: ५ ::

नहा-धोकर आफिस के कपड़े पहन कर हेमन्त जब नाश्ते की टेबिल पर आकर बैठा तो नौ भी नहीं बजे थे। घर के वातावरण में अभी भी घुटन सी थी। यद्यपि आजकल प्रत्यक्ष रूप से अशान्ति दिखाई नहीं देती, किन्तु जो है, उसे पूर्ण शांति भी नहीं कहा जा सकता। शान्ति का मतलब दमघोंटू स्तब्धता तो नहीं होता। उल्लास व आनन्द का अतिरेक शान्ति का ही दूसरा रूप है, जिसका यहाँ अभाव है।

नारायण का टेबिल लगाने का उत्साह देख कर बिल्कुल उलटी बात मन में आती है। यशोदा की धमकी, रसोइए की भर्त्सना, मनोहर की ताड़ना, माधव की कटूक्तियाँ, आजकल कुछ दिनों से दब सी गई है, इसीलिए नारायण खुशी से पागल है। हेमन्त अखबार के पन्ने उलटने में व्यस्त था और नारायण एक-एक करके नाश्ते की चीजें लाकर टेबिल पर सजा रहा था।

शिवानी कमरे के अन्दर कुछ कागज-पत्र व हिसाब वगैरह को लेकर व्यस्त थी। लेकिन उस व्यस्तता में भी उसकी एक आँख थी बाहर की तरफ—जहाँ हेमन्त अखबार लिये बैठा था। थोडी देर बाद नारायण बोला, आइए भाभी।

कागज-पत्र सँभाल कर रख दिये और बाहर आ गई। प्लेट में फ्लेक डाल कर हेमन्त से पूछा, दूध डालूं ?

मुंह के सामने से अखबार हटा कर हेमन्त बोला—डालो।

मानो यन्त्रचालित दैनिक कार्यक्रम हो। इसके बाद जब दोनों खाने बैठ गये तो नारायण आकर चुपचाप अखबार उठा ले गया। यह भी दिनचर्या का एक प्रमुख कार्य है जो शिवानी ने शुरू किया था। नाश्ते के बीच मिलने वाले [illegible] में नारायण घर की झाड़-पोंछ कर लेता है। कपड़े धोना, आयरन करना, [illegible] माँजना आदि कार्य वह दोपहर को निपटा लेता है। शाम को उसकी छुट्टी [illegible] है। आजकल कभी-कभी उसे हेमन्त के आफिस में लंच पहुँचाने भी [illegible] है। हेमन्त और शिवानी—दोनों जिस दिन बाहर घूमने-फिरने [illegible] में अपनी तरफ का ताला लगा जाते हैं। चाबी नारायण के पास

दोनों नाश्ता कर ही रहे थे कि सहसा मनोहर विक्षिप्त गति से जल्दी-जल्दी सीढ़ियाँ लाँघता ऊपर आया। तैंतालिस के करीव उम्र है उसकी। छोटे-छोटे खिचड़ी वाल, कच्ची-पक्की कैंची से वनाई हुई मूँछ, और चेहरे पर अभिभावकता की छाप। दोनों ने सिर उठा कर देखा उसकी ओर।

तीव्र उत्तेजना से काँप रहा था मनोहर। जल्दी-जल्दी जीना चढ़ने से हाँफनी चढ़ गई थी। एक क्षण के लिए रुककर जैसे दम लिया उसने और वोला, यह क्या कर डाला तुमने, रांगा भाई? मेरा हाथ तो विल्कुल ही वन्द हो गया। लेनदारों को देना है, घर का खर्च है, वाजार का चुकाना है, नौकर-चाकरों को तनख्वाह देनी है—और तुमने मेरे हाथ काट कर मुझे लूला वना दिया? तीस साल से इस घर में नौकरी कर रहा हूँ, पर ऐसा तो कभी नहीं हुआ!

आमलेट का टुकड़ा मुँह में डालकर हेमन्त वोला, जमींदारी के वक्त और मेहनत करके कमा कर खाने के आज के वक्त में वहुत अधिक फर्क है, मनोहर दा। अव वह जमाना नहीं है।

गुस्सा आ गया मनोहर को, वोला—तुम्हारी पंडिताई इस वक्त मेरे मगज में नहीं घुस रही है। लेनदारों के सारे विलों पर मुझे अपने नाम के दस्तखत करने पड़ते हैं, अपने रुपये के लिए वे मेरा गला दवायेंगे आकर और तुमने एक नहीं तीनों वैंकों में नोटिस दे दिया है कि मैं रुपया न निकाल सकूँ?

शान्त स्वर में जवाव दिया हेमन्त ने, मजवूर होकर देना पड़ा है मनोहर दा। तुम पहले क्या करते रहे हो उसके वारे में मैं कुछ नहीं कहता, लेकिन गत दो वर्षों में तुमने जितना रुपया निकाला है और जो कुछ खर्च किया है, उसका प्रत्येक विल, वाउचर, रसीद और तुम्हारी एकाउण्ट वुक मुझे अवश्य चाहिए।

जरा चौंका मनोहर।

हेमन्त ने अपनी वात को जारी रखते हुए कहा, याद रक्खो मनोहर दा, मैं केवल दो सालों का हिसाव माँग रहा हूँ—मुझे नौकरी मिलने के कुछ दिन वाद से लेकर आज तक का। यह वात मत भूल जाना कि इन्कम टैक्स, सुपर टैक्स—आदि सव सूद में से चुकाये जाते हैं। यह भी मत भूलना कि स्थायी मूलधन के रूप में जो वारह लाख रुपया जमा है, प्रति सैकड़े के हिसाव से उसका कितना सूद आता है, यह मैं जानता हूँ। सारे सूद का हिसाव चाहिए मुझे। इसके अलावा खिदिरपुर वाले मकान के किराये का हिसाव भी मुझे दो साल से नहीं मिला है—यद्यपि तुम्हारे पास पैसे-पैसे का हिसाव है—

नतमुख सव कुछ सुन रही थी शिवानी। वीच में अचानक वोली, तुम्हें आफिस भी जाना है टाइम पर।

हेमन्त ने हाथ उठाकर घड़ी देखी। शिवानी ने कॉफी बनानी शुरू की।

मनोहर बोला, इतने दिन बाद अब आकर तुम लोगों को हिसाब देना पड़ेगा, यह मालूम होता तो बहीखाते ठीक करके रखता मैं।

शिवानी ने मुंह उठाकर मनोहर के मुंह की ओर देखा और फिर आँखें नीची कर लीं।

जरा गुस्से से हेमन्त बोला, इसका क्या मतलब है? रुपया तुम्हारा नहीं था, पर खर्च तुमने किया है। अब हिसाब माँगा तो गुस्सा क्यों आ रहा है। हर सप्ताह तुम बैंक से एक या दो बार रुपया निकालते हो, उस रुपये का हिसाब माँगना क्या अपराध है? अगर सच्चे हो तो आय और व्यय का हिसाब मिला क्यों नहीं देते?

मनोहर बोला, आजकल की बात अगर उठाते हो तो आजकल के खर्च के बारे में भी जानते होगे। लेनदार चारों तरफ से मेरी छीछालेदर कर रहे हैं—दर्जी, धोबी, बनिया, हलवाई, कपड़े वाला, बिजली वाला, गैरेज वाला—कितने हैं, एक हो तो गिनाऊँ? घर में सात नौकरों की तनख्वाह, रोज का बाजार-हाट का छोटा-मोटा खर्च, मेहतर-जमादार कौन नहीं है?—आज तुम मुझसे हिसाब माँग रहे हो? तुम्हें पता है कि इस घर में केवल तुम्हारी माँ का ही खर्च साढ़े सात सौ रुपये महीने का है? आज तुमने पागल बना दिया मुझे। मेरी ही गोद में खेले-कूदे, बड़े हुए तुम और आज मुझी को कटघरे में खड़ा करके हिसाब माँग रहे हो?

इसी समय जीने के दूसरी तरफ दालान में रक्खे टेलीफोन की घंटी बजी। शिवानी उठकर टेलीफोन सुनने चली गई। बड़ी मुश्किल से अपनी हँसी को रोक रक्खा था उसने।

हेमन्त बोला, सुनो मनोहर दा, तुम चाहे कितना भी रोओ-पीटो पर मुझे इन दो सालों का हिसाब हर हालत में चाहिए! नहीं तो तुम मुश्किल में पड़ जाओगे। और यह भी सुन लो कि जब तक मुझे पाई-पाई का हिसाब नहीं मिल जायेगा, मैं कोई खर्च मंजूर नहीं करूँगा—न घर का और न लेनदारों का!—फिर से घडी देखी हेमन्त ने।

लेकिन नौकर-चाकरों की तनख्वाह? मालकिन का खर्च? मनोहर ने पूछा।

कुछ नहीं दूँगा।

तुम्हें पता है, तीन महीने होने को आये, मैंने अपनी तनख्वाह तक नहीं ली।

यह सुनते ही जोर से हँस पड़ा हेमन्त—इसका मतलब है कि तनख्वाह लिये बिना भी तुम्हारा काम चल जाता है।—पर दूसरे ही क्षण गम्भीर होकर मनोहर

की तरफ मुँह घुमाया उसने और बोला, मुझे ठीक पता नहीं आजकल तुम कितनी तनख्वाह लेते हो। शायद तीन सौ। सुना है पिता जी के जमाने में तुम्हारी तनख्वाह पन्द्रह रुपये महीना थी। खैर, पत्नी, चार बच्चे और उनकी पढ़ाई-लिखाई मकान का किराया—यह सब देखते हुए आजकल के इस महँगाई के जमाने में तीन सौ रुपये ज्यादा नहीं हैं लेकिन क्या यह सच है कि तुमने पत्नी के नाम से जो तिमंजिला मकान बनवाया है उसमें कम से कम डेढ़ लाख रुपया लगा है।

मनोहर बोला, तुम लोगों के आशीर्वाद से छोटे-छोटे बच्चों के लिए सिर छुपाने की जगह हो गई है।

इसी समय दोनों के बीच से निकल कर शिवानी कमरे के अन्दर चली गई।

हेमन्त बोला, हमारे आशीर्वाद की अपेक्षा नहीं रक्खी तुमने मनोहर दा। रुपया आशीर्वाद से नहीं आता, वह आता है दूसरे तरीके से। ठीक है, अब तो सरकारी कमीशन ही इस बात का फैसला करेगा कि तीन सौ रुपये में घर-गृहस्थी चलाने के बाद मकान बनाने के लिए रुपया कहाँ से आया! मुझे मत दो, वहाँ तो देना ही पड़ेगा हिसाब।

अब उठकर खड़ा हो गया हेमन्त। उसके आफिस जाने का समय हो गया था।

गुस्से में बड़बड़ करता धड़ाधड़ सीढ़ियाँ उतर गया मनोहर। नीचे यशोदा, माधव, देवानन्द और रामसेवक इकट्ठे बैठे हुए आपस में काना-फूसी कर रहे थे। मनोहर को उतरते देख उत्सुकता से आगे खिसक आये सब। दाँत किटकिटाकर लाल-लाल आँखों से घूरता हुआ मनोहर बोला, हटो, भागो यहाँ से सब। यदि जेल नहीं जाना चाहते तो सब छोड़कर चले जाओ आज ही। बहुत मौज कर ली, अब शिकारी के जाल में फँसना सब।

आगे बढ़कर यशोदा ने पूछा—क्यों, हुआ क्या?

घृणा से नाक-भौं सिकोड़ कर मनोहर ने कहा, होता क्या! सर्वनाशिनी आकर घुस गई है हमारे बीच में। अब सब तहस-नहस करे बिना थोड़े ही छोड़ेगी। लक्ष्मी चंचल हो उठी है।

और द्रुत कदमों से न जाने क्या बड़बड़ाता बाहर चला गया मनोहर।

जीने पर जूतों की आवाज सुनकर जिसको जहाँ जगह मिली, भागकर जान बचाई सबने। हेमन्त के साथ-साथ शिवानी भी उतरी और बगीचा पार कर के गाड़ी में बैठ गये दोनों। सुनील गाड़ी निकालकर तैयार खड़ा था। जैसे ही सुनील ने अन्दर बैठने के लिए दरवाजा खोला, शिवानी बोली, आज तुम रहने दो सुनील, गाड़ी मैं ही लिये जाती हूँ, तुम यहीं घर पर रहना।

गाड़ी में शिवानी के पास आगे की सीट पर ही बैठा था हेमन्त। आजकल भीड़भाड़ में ड्राइव करने में घबराहट नहीं होती शिवानी को। गाड़ी जब फाटक से बाहर निकल कर मेन रोड पर आ गई तो अचानक जैसे कुछ याद आ गया हेमन्त को, बोला—अरे हाँ, मैं तो पूछना ही भूल गया। उस वक्त किसका फोन आया था ?

शिवानी ने जवाब दिया—दीपेन दा का।

दीपेन का ? अच्छा ! अचानक इतने दिन बाद ? ठीक-ठाक तो है ? अभी भी उसी तरह आवारा घूम रहा है या किसी काम-काज से लग गया है ?

यह सब मैंने पूछा ही नहीं।—शिवानी ने मोड़ पर गाड़ी घुमाई।

हेमन्त ने पूछा, क्या कह रहा था दीपेन ?

यही सब—सब ठीक तो है, तुम्हारे बारे में पूछ रहे थे, तुम्हारी माँ के बारे में पूछ रहे थे, कह रहे दीनू काका बहुत दिन से दिखाई नहीं दिये, मेरे पिता जी के बारे में भी पूछ रहे थे—बस और क्या।

ध्यान से सुन रहा था हेमन्त। इस बात को यहीं छोड़ कर गम्भीर स्वर में दूसरी बात शुरू की—तुम देख लेना, इस बार मैं मनोहर को किसी तरह नहीं छोड़ूँगा। चोरी की भी हद्द होती है कोई, यह तो उसे भी पार कर गया। सबसे ज्यादा तो मुझे यह चुभा कि उसने मेरी तनख्वाह के रुपये भी निकाल लिये बैंक से। अब बताओ तो वह रुपया मैं उससे कैसे वसूल करूँ ?

दोनों हाथों से स्टीयरिंग पकड़े हुए थी शिवानी। बाँया हाथ उठाकर घड़ी देखी उसने अन्यमनस्क सी बोली, तुम्हारा रुपया है, तुम्हें पता होना चाहिए।

हेमन्त चुप रह गया। बात यद्यपि युक्तिसंगत थी, लेकिन वह शिवानी का परामर्श चाहता था। और फिर उसका रुपया क्या शिवानी का रुपया नहीं है। शिवानी ही उदासीन हो जायेगी तो काम कैसे चलेगा ?

काफी देर तक शिवानी चुपचाप चौरंगी के चौड़े रास्ते पर ट्रैफिक सिगनल के अनुसार गाड़ी चलाती रही। अचानक वह हँसकर बोली, शकुन्तला की कहानी तो अवश्य तुम्हें याद होगी। अँगूठी खो जाने के कारण दुष्यन्त उसे पहचान ही नहीं पाया, अर्थात् पति का परिचय उस अँगूठी से था। अँगूठी खो जाये तो सब स्त्रियाँ रास्ता चलती दूसरी स्त्रियों के समान अपरिचित हो जाती हैं।

हेमन्त मुस्करा कर बोला, यदि लड़की होता तो शायद तुम्हारी बात का जवाब दे पाता। लेकिन बहुत से पुरुष ऐसे भी हैं जो केवल स्त्री के परिचय से ही टिके रहते हैं।

इस वात पर भी हँसी नहीं आई शिवानी को। आजकल वह कम ही हँसती है जरा। पहले वाहर आघात मिलने पर भी वह घर आकर सव भूल जाती थी, आनन्द से, उल्लास से अधीर रहती थी सदा, लेकिन इधर जब से माया देवी के साथ खुल्लमखुल्ला झगड़ा हुआ है जैसे वह किसी दूसरी ही दुनिया में पहुँच गई है। जो कभी नहीं हुआ वह आजकल रोजमर्रा की वात हो गई है अर्थात् आजकल उसे पूजा के कमरे से निकलने में देर हो जाती है। उसके आने तक हेमन्त उठ कर नारायण से चाय बनवा कर पी लेता है। शिवानी के चेहरे पर गाम्भीर्य की न जाने कैसी तो एक दुर्भेद्य छाया रहने लगी है, लेकिन सव होते हुए भी उसकी वड़ी-वड़ी आँखें अभी भी विल्कुल शांत व स्थिर रहती हैं।

हेमन्त के आफिस के नीचे आकर गाड़ी रोकी शिवानी ने। उतरने की तैयारी करते हुए हेमन्त वोला, घर जाओगी, या वाजार का काम है? नारायण को साथ ले आती तो सौदा-सुलुफ लेने में आसानी रहती न?

गाड़ी स्टार्ट करते-करते शिवानी वोली, फिक्र मत करो, मैं अकेली कर लूंगी, कोई दिक्कत नहीं पड़ेगी।

हेमन्त आफिस में चला गया। ठीक दस वजे थे। कुछ दूर जाकर शिवानी ने वायें हाथ को गाड़ी मोड़ी और फिर एक परिचित चौराहे के आसपास जगह देख कर एक फुटपाथ के किनारे गाड़ी खड़ी कर दी। आँखों पर धूप का चश्मा चढ़ाया, और गाड़ी से उतर कर नीचे खड़ी हो गई। इधर-उधर नज़र दौड़ाई। द्रुत कदमों से आफिस की ओर लपकते हुए लोग क्यों देख रहे हैं उसे मुड़-मुड़ कर? शायद उसका लंवा छरहरा वदन उनके लिए आकर्षण का केन्द्र वन गया है। किसी की नज़र उसकी लम्वी सुडौल वाँहों पर है तो कोई ढीले जूड़े से निकलकर हवा से उड़ कर वार-वार मुँह पर आते वालों को देख रहा है। किसी को उसके चेहरे की गम्भीरता आकर्षित कर रही है तो किसी की सलज्ज एवं छुपी नजर उसकी उभरी कठोर छातियों पर है। उसे देख कर कोई अप्सरा की कल्पना करता चला जा रहा है तो कोई राजहंसिनी की। लेकिन सनग्लास के अन्दर शिवानी स्वयं किस ओर देख रही थी यह वताना मुश्किल था।

फुटपाथ पर खड़ी वह सोच रही थी कि उसके प्रति इस प्रकार के आकर्षण का दूसरा कारण भी तो हो सकता है। उसका पहनावा-ओढ़ावा आजकल की आधुनिकता के विल्कुल विपरीत है। उसके अंग-अंग पर लावण्य का एक अद्भुत निखार तो है लेकिन वहाँ प्रसाधन का चिह्न तक नहीं है। न पाउडर, न क्रीम, न तेल, न आँखों में काजल। न तो गालों पर रूज़ की रक्तिम आभा है और न भौंहों पर पेंसिल से वनाया तिरछापन। न तो साड़ी पहनने का ढंग आधुनिक

ना-ना—प्रतिवाद किया शिवानी ने—मैं तो कुछ खरीद-फरोख्त करने निकली थी ! आप बेकार उलटा-सीधा सोचने लगीं, इला दी !

इला दी हँसकर बोली, आजकल दीपेन भी तो बेकार है। बाजार के बहाने थोड़ी देर एकान्त में बात करने का मौका मिल जाये तो बुरा क्या है। हमें तो भाई, नौकरी करके पेट भरना पड़ता है। अच्छा चलूँ—

जैसे जहर भरा डंक मार गई इला। पीछे मुड़कर उसकी ओर एक बार देखा दीपेन ने और हँसकर शिवानी से बोला, लगता है गुस्सा आ गया ! क्यों रुनु ?

मन ही मन काँप उठी थी शिवानी, लेकिन मन की बात मन में छुपाकर बोली, यह भला मैं कैसे जान सकती हूँ। पर एक बात जरूर है कि उसका इस तरह हम लोगों को देखना अच्छा नहीं हुआ !—अच्छा आइए अब, गाड़ी लाई हूँ मैं आपके लिए।

दीपेन बोला, यहाँ से कोई बहुत दूर तो नहीं है, लेकिन चलो ठीक है, गाड़ी में ही चला जाय।

दोनों जने गाड़ी में बैठ गये। शिवानी ने गाड़ी स्टार्ट की। गाड़ी ने जब रफ्तार पकड़ ली तो दीपेन बोला, बेचारी इलू ! मेरी वजह से बहुत दुख उठाया है उसने। इसी बात का तो उसे गुस्सा है। पर मैं क्या करूँ ?

संयत कंठ से शिवानी ने जवाब दिया, आपके दोस्त से इला दी की पूरी कहानी मैंने सुनी है। लेकिन आप तो संन्यासी बनना चाहते हैं, दीपेन दा !

मुस्कुरा कर दीपेन ने कहा, सभी तो संन्यासी नहीं बन सकते ? वह तो एक विशेष मानसिक अवस्था में ही संन्यास सम्भव होता है, केवल भेष बदलने से नहीं होता।—हाँ, अब बायें को घुमाओ !

गाड़ी के घूम जाने के बाद अपनी बात जारी रखते हुए दीपेन ने कहा, देखो रुनु, मैंने ये सारी चीजें अभी तक जो बिलकुल गोपनीय रक्खी हैं, वह केवल तुम्हारी भलाई के खातिर ! लेकिन तुम क्या डर रही हो ?....हाँ, बस आ ही गये—फिर बायें—हाँ, गाड़ी अन्दर ही ले चलो।

फाटक से होकर गाड़ी एक ईंटों के बने विशाल प्रांगण में आ गई—उसके तीन तरफ बड़े-बड़े मकान थे और दक्षिण की तरफ बहुत बड़ा लॉन था। वहीं जगह देखकर एक किनारे गाड़ी लगा दी शिवानी ने और दोनों जने नीचे उतर आये। दीपेन ने फिर पूछा, तुम शायद डर गई हो रुनु !

शिवानी का स्वर जैसे काँप उठा, बोली—मैं अपने मन के जोर पर आई हूँ, दीपेन दा !

जरा लम्बी साँस लेकर छोड़ी दीपेन ने, बोला, अच्छा ही है रुनु ! ईश्वर करे तुम्हारा यह मजबूत दिल हमेशा निर्भय रहे। भय मनुष्य को नीतिभ्रष्ट करता है। भय से ही पाप व दुराचार का जन्म होता है, भय मनुष्य को पतन की ओर ले जाता है। छुटपन से तुम्हें देखता आ रहा हूँ। तुम्हारी असाधारण बुद्धि, शक्ति व स्वभाव की मैंने हमेशा प्रशंसा की है। फिर आज तुम्हारे उद्दीस मन पर भय की छाया क्यों रुनु ? आओ।

दोनों लिफ्ट की तरफ बढ़े। पाँचवीं मंजिल पर जाना था। दरवाजे पर पहुँचकर दीपेन ने बेल दबाई।

दीपेन दा, आप मेरे साथ-साथ रहियेगा।

जरूर रहूँगा रुनु। लेकिन उस दिन भी मोड़ पर खड़े होकर मैंने तुमसे कहा था, उसके बाद दो-तीन बार फिर संकेत दिया था कि तुम डरना मत बिल्कुल ! मनुष्य को यह बात कभी नहीं भूलनी चाहिए कि उसकी परीक्षा विपत्ति, संकट व संघर्ष के समय पर ही होती है।

लिफ्ट नीचे आ गई थी। दोनों के अन्दर जाकर खड़े होते ही फिर से ऊपर की ओर चली। उसी अवकाश में दीपेन ने कहा, याद रखना, जल्दी से अपना परिचय मत दे देना ! पहले सुनना सब कुछ। तुम्हारा परिचय मैं खुद करा दूँगा।

अच्छा—मन को मजबूत बनाते हुए शिवानी ने जवाब दिया।

पाँचवीं मंजिल पर आकर लिफ्ट रुक गई। दीपेन ने पूछा, रुनु, देखो तो क्या बजा है ?

पौने ग्यारह।—घड़ी देख कर शिवानी ने कहा।

अरे वाह ! बिल्कुल ठीक वक्त पर पहुँचे हैं हम लोग। यह कह कर [illegible] ने आगे बढ़ कर एक हाल ही में पालिश किये गये, चमकते दरवाजे पर [illegible] दी। दूसरे ही क्षण दरवाजा खुला और अन्दर से पादरी रेवरेंड फादर [illegible] निकले और शिवानी को देख कर जैसे विस्मय में चौंक कर खड़े हो गये। [illegible] ने परिचय कराया—ये हैं शिवानी, मेरी बहन। फादर, मैं इन्हीं के [illegible] कह रहा था।

वृद्ध फादर ने आगे बढ़ कर स्नेह से हाथ फेरा शिवानी [illegible] पुत्री कह कर पास खींच लिया। फिर बोले, मैं पहली बार [illegible] छोकरा दीपेन मेरा शिक्षक स्थानीय है। इसने बताया है [illegible] माता या पुत्री कह कर बुलाना, इसलिए मैं तुम्हें [illegible] बँगला तो आती नहीं, मैं तो आइरिश हूँ मुलत।

विशुद्ध सुन्दर अँगरेजी में तुरन्त जवाब दिया शिवानी ने, फादर, उसकी वजह से आपको कोई मुश्किल नहीं पड़ेगी।

प्यार से दोनों को बैठाया फादर ने। उनकी प्रसन्न, शुभ्र मुखमुद्रा को देख कर शिवानी को ऐसा प्रतीत हो रहा था, जैसे बहुत दिन बाद उसे एक और पिता का आश्रय मिल गया हो। दोनों के सामने बैठते हुए फादर ने कहा, बेटी, तुम्हारे इस सुन्दर देश में कदम रक्खे अभी चौबीस घंटे भी पूरे नहीं हुए। कल से कलकत्ते की सड़कों पर न जाने कितने बच्चों को आते-जाते देखा है, लेकिन भारतीय नारी के रूप में पहले पहल आज तुम्हें देखा। जो कुछ भी दीपेन ने कहा था, अक्षरशः सत्य निकला! आजकल संसार भर के लोग एक ही ढर्रे पर चल रहे हैं। चेहरे में पार्थक्य अवश्य होता है पर आजकल की स्त्रियों की रुचि, उनका लक्ष्य, वेशभूषा आदि प्रायः एक जैसा ही होता है। लेकिन तुम्हारे अन्दर मैंने जैसे भारत का वह अनन्य वैशिष्ट्य पा लिया; जिसके बारे में मैं न जाने कब से सुनता आ रहा था। संसार में किसी दूसरी जगह तुम्हें नहीं देखा जा सकता, बेटी!

नम्र, विनीत स्वर में शिवानी ने कहा, आशीर्वाद दीजिए फादर, भारत की स्त्रियाँ अपने को आपकी श्रद्धा के योग्य बना सकें।

फादर हँसकर बोले—जानती हो बेटी? यह छोकरा मेरा शिक्षक कैसे बन गया? तुम्हें तो पता है कि दीपेन विज्ञान पढ़ने के लिए लंदन गया था, लेकिन विज्ञान के साथ उसने दूसरी रसायन और मिला दी—जिसका नाम था अध्यात्मवाद! इस लड़के से ही मैंने सर्वप्रथम भारतीय संस्कृति का मूल भाष्य पढ़ा, योग की नई व्याख्या सीखी। दीपेन मेरा गुरु है।

दीपेन बोला, फादर, बहन के सामने तो कम से कम मुझे लज्जित मत करिये।

इस विषय को वहीं छोड़ कर जरा संजीदा स्वर में फादर बोले—सुनो बेटी, तुम्हारी समस्या के बारे में मैंने सब सुन लिया है। डरो मत। अपने ऊपर विश्वास रक्खो। ये सामाजिक व पारिवारिक समस्याएँ हैं।

कुछ न समझ कर शिवानी ने दीपेन की तरफ देखा। दीपेन बोला, जरा भी चिंता मत करो रुनु! मैंने फादर से सब कुछ कह दिया है। फादर शुरू से आखिर तक सब जानते हैं।

मधुर स्वर में शिवानी ने पूछा—तो फिर बताइए फादर, कि अब मुझे क्या करना चाहिए?

बताता हूँ बेटी—फादर बोले, तुम अपना पथ अपने आप पहचान जाओगी।

देखो, देश, जाति, समाज, परिवार या व्यक्ति को लेकर जितनी भी समस्याएँ सामने दिखाई देती हैं, सबका जन्म अज्ञानता से होता है ! परिणाम क्या होता है, जानती हो ? शठता, दुराचार, सन्देह, दुर्व्यवहार—ये जीवन को जीर्ण-शीर्ण बना देते हैं। अज्ञान मानवता का शत्रु है, यह सिद्धान्त संसार के हर कोने में, हर समाज द्वारा स्वीकृत है। और फिर इस तरह की समस्या मन को, प्यार को, भावना को विपन्न बना देती है। तुम तो औरत हो, और औरतें मन की इस समस्या से अच्छी तरह परिचित होती हैं। मन के ही जोर से कोई औरत एक छलांग में कुल छह मील पार कर पाती है तो कोई एकदम छह हजार मील उड़ आती है।

बात का ओर-छोर कुछ भी समझ में नहीं आया शिवानी के। फिर से नजरें उठाई उसने दीपेन की ओर। दीपेन बोला, मैंने फादर को बताया था कि तुम्हारी ससुराल यहाँ से करीब छह मील है।

अब उन दोनों को लेकर उठ खड़े हुए फादर और बोले, आओ बेटी, तुम बुद्धिमती हो, सुशिक्षित हो—दीपेन के मुँह से सुना है कि विद्यार्थी जीवन में बार-बार तुम्हें स्कॉलरशिप मिली है, दो-दो बार एम० ए० पास किया है तुमने। तुम्हारी प्रतिभा ही तुम्हें सफल बनायेगी बेटी !

कमरे से निकल कर फादर के साथ-साथ एक लम्बी कॉरिडोर पार की दोनों ने। एक बन्द दरवाजे के सामने रुक कर नॉक किया फादर ने। कुछ ही क्षणों में एक विदेशी लड़की ने आकर दरवाजा खोला। फादर बोले, स्टेला, इन महिला के साथ बातचीत करो—समझी शिवानी, यह मेरी लड़की स्टेला है लेकिन मेरी पत्नी का स्वर्गवास हुए करीब पन्द्रह साल हो गए। अच्छा, तुम लोग बातचीत करो, मैं अपने कमरे में हूँ।

हाथ जोड़ कर स्वागत किया स्टेला ने और दोनों को अपने सुसज्जित कमरे में बैठाया। परिचय कराते हुए दीपेन ने कहा—स्टेला, ये मेरी बहन शिवानी हैं, तुम्हारे पिता जी को ये बहुत पसन्द आई हैं।

स्टेला की उम्र तेईस-चौबीस के करीब थी। जितनी देखने में सुन्दर थी उतनी मधुरभाषी भी थी। मुस्कुरा कर वह बोली—तुम दोनों भाई-बहन ही कितने सुन्दर हो ! कल से मेरी न जाने कितनी गलतफहमियां दूर हुई हैं !

हँसते हुए शिवानी ने पूछा, गलतफहमियां कैसी ?

अच्छा ! बता ही दूँ ! तो सुनो फिर—हम हैं आइरिश। अँगरेजों से कभी हमारा मेल नहीं बैठा, हालांकि बचपन में हमें अँगरेजों की लिखी किताबें ही पढ़नी पड़ती थीं। उनमें लिखा रहता था कि तुम भारतीय ब्लैक निगर्स हो ! राजा, हाथी, साँप और संन्यासी के अलावा तुम्हारे देश में कुछ नहीं है। तुम

लोग एवॉरिजिनल तथा असभ्य हो। पिक्चरों में भी हम लोगों ने यही देखा है। अब यहाँ आकर देखा तो पता चला कि कितनी गलत धारणाएँ थीं हमारे मन में इस देश को लेकर। अच्छा शिवानी, तुमने माथे पर यह लाल दाग क्यों लगा रक्खा है ?

दीपेन बोला—वह हिन्दू विवाहित स्त्री का चिह्न है।

ओ आइ सी ! तुम्हारे गहने कितने अच्छे हैं शिवानी, कानों में कितने सुन्दर फूल झिलमिला रहे हैं।

मुस्कुरा कर शिवानी बोली—और यह देखो शाँखा और नोया ! बंगाल की हर विवाहित औरत के लिए ये दोनों गर्व की चीजें हैं। तुम्हारी शादी नहीं हुई अभी ?

शादी !—सिर झुका कर स्टेला ने जवाब दिया, ना, अभी नहीं की ! लेकिन मेरे श्रद्धेय मित्र दीपेन को पता है कि पिता जी के साथ मैं कलकत्ता क्यों आई हूँ।

बात का मतलब न समझ कर शिवानी ने प्रश्न-सूचक दृष्टि से दीपेन की ओर देखा। दीपेन बोला, स्टेला तुम जो कांड कर बैठी हो, उसके बारे में मेरी बहन कुछ नहीं जानती। रुनु, मैंने तुमसे भी कभी स्टेला का जिक्र नहीं किया ! हाँ, एक बार दूसरी तरह का आभास अवश्य दिया था—मेरा ख्याल है, तुम्हें याद होगा। मैंने सोचा कि स्टेला आ तो रही ही है, तुम स्वयं उससे बात कर लोगी।

स्टेला ने पूछा, ये क्या हेमन्त को जानती हैं ?

उसके मुँह से हेमन्त का नाम सुन कर हठात् चौंक उठी शिवानी।

दीपेन ने हँसकर जवाब दिया—खूब कहा तुमने ! भला हेमन्त जैसे हीरे के टुकड़े को कौन नहीं पहचानता ? और फिर इसके अलावा हमारे यहाँ संयुक्त परिवार प्रथा अभी खत्म नहीं हुई है। एक दूसरे का कोई न कोई आपसी रिश्ता निकल ही आता है, नहीं तो हेमन्त मेरा मित्र कैसे बन जाता ? अच्छा, अब इस बात को छोड़ो, सुनो स्टेला, हेमन्त की माँ व सगे-सम्बन्धियों की तरफ से शिवानी तुमसे पूरी बात सुनने आई है। इनको तुम कॉन्फिडेन्स में ले सकती हो !

थैंक यू मि० चौधरी।

दीपेन बोला, तो फिर मेरा काम अब खत्म हो गया स्टेला। अब तुम लोग आपस में बातचीत कर लो। अपने देश की प्रथा के सम्बन्ध में मैंने तुम्हें बता ही दिया था। हमारे यहाँ लड़के वाला पहले लड़की वालों से बातचीत करता है, एंगेजमेंट उसके बाद होती है। लेकिन लड़के-लड़की में साक्षात् शादी के दिन ही होता है, उससे पहले नहीं।

उत्सुक कंठ से स्टेला ने पूछा, तो क्या हेमन्त इस बीच मुझसे एक बार भी नहीं मिल सकता ? मैं तो छह हजार मील दूर से उसके लिए भागी आई हूँ ?

वह इनके साथ तय कर लो। अच्छा मैं चलता हूँ—फादर के पास बैठता हूँ जाकर।

अचानक उठ कर खड़ी हो गई शिवानी और दीपेन से बोली, यहाँ फोन है ?

है क्यों नहीं—लाउंज में जाना पड़ेगा।

माफ करना स्टेला, मैं अभी आई—यह कहकर दीपेन के साथ-साथ शिवानी भी लाउंज में आ गई।

दीपेन बोला—अब सब कुछ तुम पर निर्भर करता है रुनु। हाँ, एक बात के लिए अवश्य मैं तुमसे क्षमा चाहूँगा। वह यह कि स्टेला के बारे में मैंने पहले से तुम्हें कुछ नहीं बताया। और उधर स्टेला को भी अभी तक यह नहीं बताया कि हेमन्त का विवाह हो गया है।

क्यों नहीं बताया ?

मैंने कभी स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि अचानक इस तरह स्टेला इस दूर देश में अपने बाप के साथ आ पहुँचेगी। दूसरी बात यह है कि अन्दर की बात जाने बिना बिल्कुल बेवकूफों की तरह बेचारी केवल हेमन्त के लिए दौड़ी आई है! हठात् सब सुनकर इसके दिल को कहीं गहरा सदमा न पहुँचे, बस इसी डर से नहीं कह पाया। और फोन पर तुमसे उसके बारे में कुछ कहने की यों इच्छा नहीं हुई कि कहीं इस बात को लेकर हेमन्त से तुम्हारी कहासुनी न हो जाय।

सब सुनकर शिवानी बोली, लेकिन मुझे पहले से ही इस घटना के बारे में जानकारी थी दीपेन दा।

चकित होकर दीपेन ने पूछा, पता था ? कैसे ?

मुझे लावण्य ने ही खबर दी थी सर्वप्रथम। शायद इसी के साथ आपकी हिरण्मयी मासी की बेनामी चिट्ठी-पत्री चल रही थी। ठीक है—लेकिन पहले मैं स्टेला के मुंह से पूरी बात सुन लूं, फिर आपको बताऊँगी।

कुछ पल के लिए जैसे दीपेन के मुंह से बोल नहीं निकला—फिर बोला, रुनु, उम्र में मैं तुमसे कहीं बड़ा हूँ, तुम्हारे पति से भी बड़ा हूँ। तुम दोनों की भलाई के लिए निःस्वार्थ भाव से कुछ चीजें छुपाई थीं मैंने, हालांकि स्टेला उनकी लड़की है जिन पर मेरी अपार श्रद्धा है और इधर तुम हो—मेरे परम श्रद्धेय भवेश काका की लड़की, अपनी सगी बहन से भी अधिक प्रिय! मैं तुम्हें आशीर्वाद देता हूँ रुनु! मुझे विश्वास है—तुम अपने हाथों में कस कर पतवार संभाले रहोगी—कैसा भी भयंकर आंधी-तूफान हो, तुम्हारी नौका डूबेगी नहीं!

नीचे झुककर दीपेन के पाँव छुए शिवानी ने। और आशीर्वाद में उसके सिर पर स्नेह से हाथ फेर कर दीपेन फादर के कमरे की ओर चला गया।

वहीं पास में रक्खे फोन का रिसीवर उठा कर डायल घुमाया शिवानी ने। उधर से हेमन्त वोला—हलो—शिवानी वोली—सुनो मुझे अभी कुछ देर और लगेगी वाजार में। आज तुम ऑफिस में ही लंच खा लेना, अच्छा ?

उधर से आवाज आई, तथास्तु, जैसी आज्ञा देवी ! इस वीच फोन के माध्यम से मेरा प्रणय-चुम्वन ग्रहण करो !

मुस्कुराकर शिवानी ने फोन रक्खा और स्टेला के कमरे में चली गई।

उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रही थी स्टेला !. उसको देखते ही हाथ पकड़ कर ा स्टेला ने और स्वयं भी पास वैठ गई। शिवानी ने पूछा, तुम यहाँ कव तक टेला ?

पिता जी तो दो सप्ताह के लिए आये हैं, लेकिन तुम्हें पता है कि मैं यहाँ विशेष मिशन लेकर आई हूँ।

मुस्कुरा कर शिवानी ने कहा—तुम्हारे देश की किसी लड़की को इतने पास खने का अवसर मुझे इससे पहले कभी नहीं मिला स्टेला। यह मानना पड़ता क तुम वास्तव में सुन्दर हो ! ऐसा प्रतीत होता है जैसे तुम अपनी दोनों आँखों ातों समुद्रों का नीला रंग भर लाई हो। तुम्हारी नासिका, कपाल, ओठ, ये ल वाँहें, ये लंवी उँगलियाँ—हर चीज अद्भुत सुन्दर हैं।

नतमुख सविनय धन्यवाद देते हुए स्टेला ने कहा, मैं तुम्हारे प्रति कृतज्ञ हूँ ानी।

तुम्हारी उम्र कितनी है स्टेला ?

मेरी ? इस नवम्बर में मैं तेईस की हो जाऊँगी।

शिवानी ने दूसरा प्रश्न किया—तुम क्या काम करती हो लन्दन में ?

डवलिन यूनिवर्सिटी से पढ़ाई खत्म करके लंदन आने पर मुझे सेन्ट्रल टेली-फ में नौकरी मिल गई थी। और फिर इसके अलावा आइरिश लेवर यूनियन थोड़ा-वहुत काम कर लेती हूँ।

रहती तो तुम अपने पिता जी के ही पास होगी ?

ना मैं तो वर्कर्स होस्टल में रहती हूँ। पिता जी को चर्च में रहना अधिक पसन्द है।

कुछ देर चुप रहकर शिवानी ने पूछा—लंदन में हेमन्त के साथ तुम्हारा परिचय कैसे हुआ, उसके वारे में वताओगी कुछ ?

किंकर्तव्यविमूढ़ सी हो गई स्टेला। हँसकर शिवानी ने कहा—संकोच मत

करो स्टेला, भारतीय सामाजिक आचार-व्यवहार जरा दूसरी तरह के हैं। लेकिन मैं तुम्हारे सम्बन्ध में पहले से ही काफी जानती हूँ। तुम मुझ पर विश्वास करके अपने मन की बात कह सकती हो।

स्टेला बोली, प्यार के बारे में कुछ कहा नहीं जाता शिवानी।

कहा जाता है स्टेला—सस्नेह उसका हाथ अपने हाथ में लेकर शिवानी ने कहा—अवश्य कहा जाता है। रोमान्स का इतिहास एक तरह का होता है, लेकिन अन्तर के प्यार की कहानी दूसरी ही तरह की होती है।

मुँह उठाकर देखा स्टेला ने, ऐसा लगा जैसे शिवानी की आँखों में दो प्रदीपों ने अपनी शान्त शुभ्र लौ की ज्वाला फैला दी हो। मृदु स्वर में स्टेला ने कहा—मैं तुम्हारी बात समझ नहीं पाई शिवानी।

समझना बहुत आसान है स्टेला। प्यार के एक अंश में होती है चंचलता, अस्थिरता और दूसरे अंश में होती है, मधुरता, तन्मयता और आनन्द की कल्पना। तुम्हारे यहाँ योरोप और अमेरिका का सामाजिक जीवन जीर्ण-शीर्ण होता जा रहा है, क्योंकि वहाँ प्यार में अन्तरंगता, तन्मयता नहीं रहती। भारत में प्यार की अनेकों व्यंजनाएँ हैं। लेकिन मैं इन सब बातों पर बहस करने के लिए तुम्हारे पास नहीं आई स्टेला। मैं तो केवल सारी बात जानने के लिए आई हूँ।

शिवानी के व्यक्तित्व के सामने स्वयं को कुंठित सी महसूस कर रही थी जैसे स्टेला। वह आइरिश थी शायद इसीलिए इतनी अच्छी इंगलिश नहीं बोल पाती थी लेकिन शिवानी धारा-प्रवाह विशुद्ध इंगलिश बोल रही थी। जरा संकुचित स्वर में स्टेला ने कहा, हेमन्त के साथ मेरा पहला परिचय पिता जी के यहाँ हुआ था। मि० चौधरी के साथ आया करता था कभी-कभी वह। उसके नम्र व भद्र स्वभाव ने मुझे अत्यन्त प्रभावित किया। बहुत अच्छा लगता था मुझे उसका स्वभाव।

मुस्कुराकर शिवानी ने पूछा, मि० चौधरी के प्रति तुम्हारा मन आकर्षित क्यों नहीं हुआ?

स्टेला ने जवाब दिया, यह एक विचित्र अनुभूति होती है शिवानी। चौधरी का पिता जी से बहुत मेल बैठता था, उसकी अपूर्व दृष्टि अपने अन्दर ही खोई रहती थी, बाहर की कोई चीज नहीं देख पाती थी। लेकिन मैं स्वयं को हेमन्त के आसपास पाती थी। उसमें जैसे एक चुम्बक की शक्ति थी। जब तक उसके साथ रहती मेरा मन खुशी से नाचता रहता।

बस, यहीं तक रहा यह मामला, इससे आगे नहीं बढ़े तुम लोग?—सुनो स्टेला, हम दोनों ही औरत हैं। हमारी एक ही जात है, एक ही चाह है और

मेरा ख्याल अगर गलत नहीं है तो हमारी एक ही समस्या है।—तुम्हारी बात पूरी तरह से जान लेने पर ही तो अपनी बात अच्छी तरह समझा पाऊँगी। मेरे सामने शर्म मत करो—सच बताओ, तुम कहाँ तक बढ़ गई थी ?

सिर झुकाकर स्टेला ने जवाब दिया, मेरा पालन-पोषण पुराने ढंग से ही हुआ है। पिता जी को यह पसन्द नहीं था कि मैं अचानक किसी विदेशी से सम्बन्ध जोड़ बैठूं। लेकिन हेमन्त मुझे बहुत ही अच्छा लगता था। उसके हास-परिहास व भद्र आचरण के प्रति मैं विशेष रूप से अनुरक्त थी।

क्या तुम्हारा प्रथम पुरुष हेमन्त ही था ?

हाँ—

शिवानी जरा आगे बढ़ी, तुम दोनों क्या कभी एक साथ रहे हो वहाँ ?

नजर उठाई स्टेला ने—एक संग ? छिः, मैं ऐसी लड़की नहीं हूँ। मेरे तो मन में भी कभी यह बात नहीं आई। हाँ, एक दिन मैंने उसे पकड़ अवश्य लिया था। मैंने कहा था कि बताओ तुम राजी हो ? मेरी इच्छा है कि पिता जी से तुम्हारे बारे में बात करूँ।—तुमसे सच कहती हूँ शिवानी, हेमन्त के मन की बात मैं कभी ठीक से नहीं समझ पाई। मुझे ऐसा लगता था जैसे उसके अन्दर कहीं एक भीरुता, दुर्बलता है। वह स्वयं कोई फैसला नहीं ले पाता, जबर्दस्ती ठेलठाल कर काम कराना पड़ता है उससे।

तुम्हारे प्रस्ताव का हेमन्त ने क्या जवाब दिया ?

कोई जवाब ही नहीं देना चाहा उसने ! कभी कोई उत्तर नहीं मिला उससे। हालाँकि उसका मन बहुत कोमल था। लेकिन तब भी मैं उसके अलावा जैसे कुछ सोच ही नहीं पाती थी।

शिवानी बोली, फिर उसके बाद ?

अब की बार जरा खिन्न स्वर में जवाब दिया स्टेला ने—इसलिए जिस दिन हेमन्त के पास जाने पर अचानक सुना कि वह वापस भारत लौट रहा है, तो स्वयं को रोक नहीं पाई। भावावेग से आकुल होकर उसका हाथ पकड़ कर रो पड़ी। हेमन्त ने सिर्फ इतना कहा इस पर—मुझे कुछ दिन और सोचने दो स्टेला।

तुम्हें अपना पता नहीं दिया ?

दिया था। अपने हाथ से लिखकर दिया था। उसके हाथ का लिखा वह कागज मैं साथ लाई हूँ।

तुमने चिट्ठी डाली थी हेमन्त को ?

एक नहीं, अनेक। लेकिन यह शायद मेरे ही भाग्य का दोष है कि मेरी चिट्ठियों का जवाब हेमन्त ने नहीं बल्कि उसकी माँ ने दिया।—और सिर्फ यही

नहीं—मैं अभी तुम्हें सब चिट्ठियाँ दिखाऊँगी—कौन तो एक हिरण्मयी नाम की औरत बार-बार मिसेज माया मैत्र के बिहाफ़ पर चिट्ठी का जवाब देती रही हैं। यह हिरण्मयी कौन हैं ?

हँस कर शिवानी ने कहा—बताती हूँ। लेकिन हेमन्त ने तुम्हें एक भी चिट्ठी क्यों नहीं डाली ?

प्रसन्नवदन स्टेला बोली—अब इतने दिन बाद—हाँ, ठीक दो साल सात महीने बाद एक चिट्ठी हेमन्त ने मुझे लिखी।

चिट्ठी कब मिली तुमको ?

यही कोई दस दिन हुए होंगे। पिता जी इस 'विश्वधर्म सम्मेलन' में भाग लेने के लिए भारत आ रहे थे। मैंने भी साथ आने की जिद्द पकड़ ली। तुम अवश्य दाद दोगी शिवानी, कि इतने दिनों बाद शायद मेरी प्रतीक्षा सार्थक हुई है! हेमन्त ने स्वयं मुझसे विवाह करने की इच्छा प्रकट की है। मेरा बड़ा मन हो रहा है आज एक बार उससे मिलने का। कितने दिनों से नहीं देखा उसे। शिवानी, तुम मेरी थोड़ी सहायता करो न। उसकी चिट्ठी मिलने के बाद से ही मेरा दिल बल्लियों उछल रहा है; धुकड़-पुकड़ मची हुई है मन में !

स्टेला के आनन्द का आवेग देखकर, उसकी प्रार्थना सुनकर शिवानी का मन जैसे यन्त्रणा-वेदना के तीव्र झोंके से डावाँडोल हो उठा। जिस विश्वास, जिस श्रद्धा एवं प्रथम प्यार के जिस आवेग को लेकर यह लड़की सात समुद्र पार करके आकाश में उड़कर आई थी, उसे देखकर शिवानी का मन भी जैसे अपरिसीम श्रद्धा से भर उठा। उसकी अंतरंगता ने अभिभूत कर दिया शिवानी को। लेकिन जिस कुत्सित दुरभिसंधि एवं घृणित षड्यन्त्र ने इस लड़की को इस [illegible] प्रतारणा में ला पटका है, उसका भंडाफोड़ जिस दिन इसके सामने होगा तो इसकी आँखें समग्र भारतवर्ष एवं इस प्राच्यभूमि के प्रति किस प्रकार धिक्कार व घृणा से भर उठेंगी—इसकी कल्पना मात्र से शिवानी सिहर उठी।

विगत कुछ दिनों की बातें मन ही मन सोचकर कुछ देर बाद फिर शिवानी ने प्रश्न किया, हेमन्त ने क्या स्वयं अपने हाथ से तुम्हें चिट्ठी लिखी थी ? साथ लाई हो वह चिट्ठी ?

शिवानी की ओर देखकर स्टेला बोली—तुम विश्वास क्यों नहीं कर रही हो शिवानी ? अच्छा ठहरो, मैं अभी निकाल कर दिखाती हूँ तुम्हें—

वहाँ से उठकर जब स्टेला सूटकेस से चिट्ठियाँ निकालने के लिए [illegible] शिवानी की नजरों में उसके शरीर का पृष्ठांग पड़ा। जैसे अनवद्य [illegible] मूर्तिमान प्राचुर्य हो। स्टेला अभी भी फ्रॉक ही पहने थी—उसके [illegible]

ऊपर ही थे। नीचे झुक कर वह सूटकेस में उलट-पलट कर रही थी। इसीलिए शिवानी को उसके सुकुमार व कोमल उरोजों का आभास मिल रहा था। आपाद-मस्तक उसके शरीर का अंग-अंग मानों किसी बलवान पुरुष के निर्मम निपीड़न व कठोर आलिंगन की प्रतीक्षा कर रहा था। इसमें कोई सन्देह नहीं कि हेमन्त हर तरह इसके योग्य था। पुरुष के निर्वाचन में मुँहजली ने कोई गलती नहीं की थी।

चिट्ठियाँ लेकर जब स्टेला शिवानी के पास आकर बैठ गई तब भी शिवानी के मुँह पर मुस्कुराहट थी। स्टेला बोली, ठहरो, तुम्हें एक-एक करके दिखाती हूँ। यह देखो सबसे पहली चिट्ठी—नीचे हस्ताक्षर हैं माया मैत्र के। शिवानी ने चिट्ठी पढ़ी : प्रिय स्टेला, मेरा लड़का हेमन्त कुछ दिनों के लिए दिल्ली गया है। नौकरी के सिलसिले में जाना पड़ा है उसे। उसका कहना है कि तुम्हारी चिट्ठियों का जवाब मैं ही दे दिया करूँ। तुम उससे प्यार करती हो, यह बड़ी खुशी की बात है। अपनी राय तुम्हें फिर बताऊँगी। आगे से तुम इस नये पते पर ही मुझे या हेमन्त को पत्र डालना।

शिवानी ने चिट्ठी की तारीख मिला कर देखी, हाल ही में हेमन्त की शादी हुई थी! उस समय तक वह ब्याहती बहू ही थी। पता हिरण्मयी के घर का था।

इसके बाद की चिट्ठी लिखी थी हिरण्मयी लाहिड़ी ने। तारीख शिवानी के विवाह के चार महीने बाद की थी—प्रिय स्टेला, माया मैत्र बहुत बीमार हैं, इसलिए उनकी तरफ से मैं ही तुम्हें पत्र लिख रही हूँ। एक के बाद एक दोनों चिट्ठियाँ मिल गई थीं तुम्हारी। इस देश में लड़के या लड़की की शादी माँ-बाप ही तय करते हैं। हम लोग तुम्हारे ही बारे में सोच रहे हैं। अपना एक फोटो भेजना अच्छा सा। देख रही हूँ, हेमन्त तुम्हारी वजह से ही बुझा-बुझा-सा रहता है, किन्तु तुम दोनों में सामाजिक पार्थक्य होने के कारण कई प्रकार बाधाएँ हैं सामने। समय आने पर यहाँ हुए फैसले के बारे में लिखूँगी तुम्हें। पत्र डालने में देर हो जाय तो ख्याल मत करना।

करीब पन्द्रह-सोलह चिट्ठियाँ थीं सब मिला कर। शिवानी प्रत्येक चिट्ठी की तारीख देख कर उस दिन घर में हुई अशान्ति के बारे में याद करने की चेष्टा कर रही थी। हिरण्मयी की प्रत्येक चिट्ठी से क्रूरता व कुटिलता टपक रही थी। कुछ चिट्ठियाँ टाइप की हुई हेमन्त के शब्दों में थीं। जैसे—स्टेला, डार्लिंग, हर हफ्ते तुम्हारी चिट्ठी का इन्तजार करता हूँ। जिस दिन भी तुम्हारा फोटो देख लेता हूँ, काम-काज में मन ही नहीं लगता। मैं खुद जाकर तुम्हें गोद में उठाकर

अपने घर लाऊँगा, वस उस दिन की कल्पना करता रहता हूँ लेकिन न जाने कितनी वाधाएँ हैं बीच में ! मेरी माँ तुम्हें देखने के लिए बहुत उत्सुक है और मैं तो वस दिन-रात तुम्हारे ही स्वप्नों में विभोर रहता हूँ। यथासमय माँ तुम्हें चिट्ठी डालेंगी। इति—तुम्हारा ही चिरपरिचित हेमन्त।

इसके वाद दो चिट्ठियाँ और थीं वस, जिनमें से एक स्टेला ने शिवानी के हाथ में पकड़ा दी! चिट्ठी लिखी थी हिरण्मयी ने—स्टेला, तुम्हारी सब चिट्ठियाँ मिल गई थीं। इतने दिनों वाद अब हम लोगों ने तुम्हारे ही साथ हेमन्त का विवाह करना निश्चित किया है। तुम भारत आने को तैयार रहना। शीघ्र ही हेमन्त स्वयं तुम्हें यहाँ आने की तारीख लिखेगा।

शिवानी ने तारीख देखी। इसके पहले दिन ही माया देवी से उसका प्रत्यक्ष झगड़ा हुआ था।

आखिर चिट्ठी देख कर शिवानी को हँसी आ रही थी। पर वड़ी मुश्किल से वह स्वयं को रोक कर पूर्ववत् गम्भीर वनी रही। चिट्ठी हेमन्त ने लिखी थी, लेकिन नीचे हस्ताक्षर किसी और के थे। कैफियत स्वरूप लिखा था—

स्टेला, स्वीट डार्लिंग, तुम्हें पता है कि मैं एक मैकेनिकल इंजीनियर हूँ पर कई वार मुझे स्ट्रक्चरल वर्क भी करना पड़ता है। इसी तरह काम करते-करते मेरे दाहिने हाथ में चोट लग गई। अस्पताल में रहना पड़ा। अभी भी पूरे हाथ में ऊपर से लेकर उँगलियों तक पट्टी वँधी हुई है। इसीलिए यह चिट्ठी मैं अपने एक वहुत ही घनिष्ठ मित्र से लिखवा रहा हूँ। अब मेरी माँ ने तुम्हारे जैसी सुन्दर व भद्र लड़की से मेरा विवाह करने का फैसला कर लिया है। थोड़ी-बहुत जो भी सामाजिक या नैतिक बाधाएँ थीं वह मैंने पार कर ली हैं। आजकल मेरे आफिस में प्लानिंग के मामले को लेकर काम वहुत वढ़ गया है, इसलिये मुझे छुट्टी नहीं मिलेगी। इस चिट्ठी के मिलने पर खबर देना कि तुम कब आ रही हो। तुम्हारे आने की तारीख पता लगने पर निश्चित दिन जाकर तुम्हें सीधे घर ले आऊँगा—माँ की यही इच्छा है। मेरी माँ यंग एण्ड वेरी हैंडसम होते हुए भी एक समाज-सेविका है। उन्हें देखते ही मुग्ध हो जाओगी तुम। जो भी हो, अब तो तुम आ ही रही हो, तुम्हें सामने देख कर, चैन मिलेगा। मुझे और तुम्हें शादी करने में अगर कोई वाधा, विपत्ति उठी तो साहसपूर्वक उसे दूर करूँगा।

इति—तुम्हारा चिरसंगी हेमन्त।

शिवानी ने जैसे ही चिट्ठी पूरी की, बड़ी उत्तेजना व उत्सुकता से स्टेला ने पूछा—हेमन्त का हाथ अब कैसा है?

शिवानी वोली, अब तो ठीक है।—अच्छा सुनो स्टेला, यह ...

तारीख की लिखी हुई है और आज है इक्कीस। इस बीच तुमने यहाँ कोई चिट्ठी डाली थी ?

ना !—स्टेला मुस्कुराई—मैंने जान-बूझ कर चिट्ठी नहीं डाली, तार भी नहीं दिया ! मैंने सोच रक्खा है कि सरप्राइज विजिट दूँगी तो खूब मजा आयेगा। क्यों ! तुम्हारी क्या राय है शिवानी ?

मुस्कुरा कर शिवानी ने कहा, ठीक कह रही हो तुम, तुम्हारा आइडिया अच्छा है। अचानक इस तरह तुम्हें सामने देख कर हेमन्त बहुत खुश होगा।

सस्नेह स्टेला ने शिवानी का हाथ अपने हाथ में लेकर कहा, तुमने यहाँ आकर बहुत अच्छा किया शिवानी। मुझे लगता है सब कुछ तुम्हारे ही हाथ में है। इस देश में मैं बिल्कुल नई हूँ—तुम लोगों के प्रति अगाध श्रद्धा व विश्वास मन में लेकर आई हूँ। शिवानी, तुम्हारे हाथ में ही हम दोनों के जीवन की सार्थकता है। तुम क्या मुझे आज किसी तरह एक बार हेमन्त से मिला नहीं सकती ?

उसके सिर पर स्नेह भरा हाथ फेर कर शिवानी ने कहा—हेमन्त के परिवार के सब लोगों की तरफ से मैं तुम्हें प्यार व आशीर्वाद देती हूँ, स्टेला। तुम्हारा जीवन अवश्य सफल होगा लेकिन तुम आकुलता से अस्थिर मत होओ—सच्चा प्यार कभी अस्थिर नहीं होता ! वह सदा धीर, शान्त व गम्भीर रहता है। थोड़ी और प्रतीक्षा करो, सब मिलकर समारोह के साथ तुम्हें ले जायेंगे और वहीं तुम्हारा प्रकृत सम्मान होगा। मैं मि० चौधरी से कहे देती हूँ, वह अपने ऊपर इसका भार ले लेंगे। तुम उनसे सब बता देना। अच्छा, अब मैं चलूँ स्टेला, एक बजने वाला है।

स्टेला ने उठ कर प्यार से उसके दोनों हाथ अपने हाथ में ले लिये और पूछा, अब कब आओगी तुम ?

स्टेला के माथे को प्यार से चूम कर शिवानी बोली, मैं फोन करूँगी तुम्हें।

: : ६ : :

साहबों के मुहल्ले के एक घर में नीचे का हॉल कुछ लोगों के हँसी-ठठ्ठे से वार-बार गूंज उठता था। गेट के बाहर चार-पाँच गाड़ियाँ खड़ी थीं। दिन के तीसरे पहर का वक्त था।

हिरण्मयी बोली—यह ठहरा पुराना जमींदार वंश—पुराने जमाने की किसी बात पर तुम लोगों को विश्वास ही नहीं होता। मेरे दादा ससुर के समय सन्ध्या के बाद किसी भी घर की वहू को किराये पर ले आते थे। सुन्दर वहू का किराया होता था पाँच गिन्नी—और बस, सास-ससुर का मुँह बन्द। लेकिन आजकल अपने ही घर की वहू को लेकर लोग घूमते-फिरते हैं। क्या जमाना आ गया है।

इला ने पूछा—लेकिन उस जमाने के पति ? वे कुछ नहीं कहते थे।

इस वेवकूफ लड़की की बात सुनो कोई—हिरण्मयी बोली—वह तुम्हारे आजकल के जमाने के पतियों जैसे थोड़े ही होते थे जो माँ-बाप की बात चुटकियों में उड़ा देते। वे लोग तो माँ-बाप के आँख के इशारे पर उठते-बैठते थे।

मिनि बोली—तो क्या बस इसलिए एक की वहू दूसरे के यहाँ चली जाती थी ? देश में क्या नियम-कानून कुछ भी नहीं था ? निन्दा नही होती थी ?

हँसते-हंसते दोहरी हो गई हिरण्मयी। बोली, यह लो, यह कुछ भी नही जानती। कुछ भी नहीं सिखा पाई मैं लड़की को। अरे, नियम-कानून क्या आसमान से टपकता है ? वह भी तो मनुष्य ही बनाता है ! बैरिस्टर बाप से नही सुना कभी कि कानून बनाते हैं समाजपति ? और फिर उनके अपने घरों में भी तो यही व्यवस्था थी। बैठी तो हैं तुम्हारी माया मौसी। पूछ न उनसे पुराने जमाने की मजेदार कहानियाँ ! बहुओं को दाँव पर लगा कर लोग जुआ खेलते थे—पता है ? माया, इस अनजान लड़की को जरा अपनी ओलाईजोट के राय वंश की वह कहानी सुना तो दो ?

लावण्य बीच में ही बोल पड़ी—बस, रहने दो बाबा, तुम लोग अपनी गन्दी कहानियाँ।

प्रतिवाद करते हुए माया देवी ने कहा—कहानी में क्या गन्दा होता है रे ? फिर तो रामायण, महाभारत को भी फाड़कर फेंक देना चाहिए !

माँ की ओर तीक्ष्ण दृष्टि से देख कर लावण्य ने कहा—तुम लोगों के बुलाने पर मैं तो घबड़ा कर दौड़ी चली आई। बच्चे को भी छोड़ आई घर पर। जो कुछ कहना है जल्दी कहो, मुझे जल्दी लौटना है घर।

फिर से हँसीं हिरण्मयी और बोलीं, तू बच्चा क्या पालेगी लावण्य, तू तो खुद अभी बच्चा है, जरा सी भी अक्ल नहीं है तुझे! अरे किताब में जो लिखा होता है उसे कहानी कहते हैं, लेकिन इला जो रोज-रोज अपनी आँखों से देखती आ रही है, वह कहानी नहीं, घटना है घटना!

लावण्य की तरफ घूमती हुई माया देवी बोलीं, तू आजकल बिना बात मुझसे चिढ़ी रहती है। लेकिन साँप में जहर नहीं होता कह देने से ही तो वह डोड़हा नहीं हो जाता।

गुस्से से फुफकारती लावण्य बोली—भाभी के प्रति तुम्हारा व्यवहार मुझे कभी अच्छा नहीं लगा माँ।

लो और सुनो!—हा-हा करके हँस पड़ीं हिरण्मयी! फिर वही बेवकूफों वाली बात कह दी न तूने लावण्य! अरे सास को कभी बहू से भलाई मिली है भला?

इला बोली—जाने दो हिरण मौसी। वह सब बातें अब बढ़ाने से कोई फायदा नहीं है, लेकिन तब भी एक बात मैं माया मौसी को बता दूँ कि मुझे ऐसी लुका-छिपी पसन्द नहीं है! अपनी आँखों से मैंने जो कुछ देखा है और जो देख कर मेरी धारणा पक्की हुई है वह सब अनिच्छा होते हुए भी मुझे मजबूर होकर बताना पड़ रहा है।

माया देवी बोलीं—तूने जो देखा है वही बता न पहले इला—हेमन्त बैठा तो है, इसके मुँह पर ही बता सब।

हेमन्त चुपचाप सिर झुकाये बहुत देर से एक कुर्सी पर बैठा था। उसको आफिस से बीच में ही बुलवा लिया गया था।

मिनि को मजा आ रहा था इन सब बातों में। मिनिस्कर्ट पहनने के कारण निरावरण जंघाएँ दिखाई दे रही थीं उसकी! अपनी आदत के अनुसार पाँव हिलाती हुई मुस्कुरा कर मिनि ने हेमन्त से कहा—क्यों, हेमन्त दा कैसा, लग रहा है सब सुन कर? तुम जब आफिस में रहते हो तो तुम्हारी बहू दीपेन दा, के साथ घूमती-फिरती है,—क्यों बोलो न, चुप क्यों हो? क्या सोच रहे हो?

हँसी से लोट-पोट गईं हिरण्मयी। बोलीं, सुना माया, मिनि तक आश्चर्य-चकित हो गई है यह बात सुन कर!—फिर फुसफुसा कर माया देवी के कान में बोलीं, मिनिस्कर्ट में छोकरी का अंग-अंग फूट पड़ रहा है, क्यों? आज सुप्रिय आयेगा न, इसलिए पहनाई है!

रँगे हाथों पकड़ा गया है। घर की बहू होकर उसने उस दिन मेरा ऐसा अपमान किया था कि मैं नौकर-चाकरों के सामने भी मुँह दिखाने लायक नहीं रह गई! अब तुम लोग ही समझाओ इस हेमन्त को। मैत्र वंश में आज तक किसी ने माथे पर कम से कम ऐसे कलंक का टीका तो नहीं लगाया। शादी को महीना भर बीतते न बीतते अपने मन के जिस सन्देह की बात मैंने बताई थी, उस पर केवल लावण्य ने ही नहीं, बल्कि तुम लोगों ने भी विश्वास नहीं किया था! अब अपनी आँखों से देख लो सब।

इस बार हेमन्त ने मुँह खोला—तुम हमेशा से शक्की रही हो माँ।

ठीक है, लेकिन बता, क्या मेरा शक ठीक नहीं निकला? तेरी बहू ने खुद गाड़ी चलाना सीखा! भला किस मतलब से? कभी सोचा है तूने? रोज गाड़ी लेकर दो-तीन घंटे के लिए कहाँ जाती है—खबर ली है कभी तूने? घर की बहू का मन घर में ही नहीं टिकता—ऐसी बातें सुनी हैं कभी तुम लोगों ने? तुझे मैंने कितनी बार सावधान रहने का इशारा दिया याद कर? गुस्से से काँपने लगीं माया देवी।

मुस्कुरा कर हिरण्मयी बोली—उस बेचारे पर क्यों गुस्सा उतार रही है माया! इसी को तो सीधापन कहते हैं! अरे पगले, पुरुष का मन औरत की मुट्ठी में होता है! पति अगर पत्नी की चोरी से कुछ करता है तो दो-चार दिन में ही पकड़ा जाता है; लेकिन पत्नी—वह ठहरी औरत! वह यदि जिन्दगी भर भी पति को ठगती रहे तो किसकी हिम्मत है जो उसे पकड़ ले? सन्तान को वह बचपन से ही सिखाती है कि वह तेरा बाप है उसे पिता कहना; तभी न पति बाप बन जाता है। लेकिन असली बाप कौन है यह उसके अलावा दूसरा कौन जान सकता है? ऐसी बातें कभी पकड़ाई में आई हैं किसी की, जो तेरी पकड़ाई में आतीं। जिस औरत का चरित्र जितना अधिक संदेहजनक होता है, उतना ही अधिक वह पति को भुलावे में रखने में कामयाब होती है। तू खुद ही सोचकर देख हेमन्त, सारी बातें साफ होती हैं कि नहीं? तब कहना, मैं गलत कह रही हूँ या सही?

हेमन्त उसी तरह चुप सिर झुकाये बैठा रहा।

अब इला बोली—मुझे गलत मत समझना हेमन्त। मैंने किसी स्वार्थ से ये सारी बातें तुम लोगों के सामने नहीं खोली हैं। रुनु को तुम इसी तरह घर में रक्खे रहो या छोड़कर दूसरी शादी करो या अकेले रहो, यह तुम्हारी अपनी बात है, मुझे इससे कोई मतलब नहीं, पर हाँ, इतना मैं जरूर कहूँगी कि एक तो तुम्हारे जैसे गुणवान लड़के बंगाली समाज में आसानी से नहीं मिलते और फिर सबसे

बड़ी ट्रैजेडी यह है कि फटी-पुरानी, सड़ी-गली किताब के दो मन्त्र पढ़ लेने के कारण जीवन भर प्रतारणा, विश्वासघातकता, अशांति के शिकार बन कर तुम्हें गृहस्थी चलानी पड़ेगी ! मैं ऐसा कह रही हूँ क्योंकि मैंने अपनी आँखों से देखा है, तुम लोगों में से तो किसी ने देखा नहीं !

माया देवी की आँखों में चमक आ गई यह सुनते ही। उत्साह दिखाते हुए बोलीं—इला जैसी लड़की की पढ़ाई-लिखाई पूर्णतया सार्थक होती है। इसने बिल्कुल मेरे मन की बात कह दी।

मेरे मन में भी एक बात आई है इला दी। लावण्य बोली।

तू क्या कहेगी लावण्य ? इला से कितनी छोटी है तू ! अपने बड़ों के मुँह पर बोलेगी तू....? हिरण्मयी ने धमकाया लावण्य को।

माया देवी बोलीं, भाभी की सफाई भला वह नहीं देगी तो कौन देगा ?

नहीं, सफाई नहीं माँ।—भाभी रोज मोटर लेकर कहाँ जाती हैं, यह देखने मैं उनके पीछे-पीछे नहीं जाती।

तू बहुत बक-बक करना सीख गई है, लावण्य ! माया देवी ने आँखें निकाल कर कहा।

क्यों नहीं सीखूंगी, माँ। अभी तुम लोग कह रही थीं न कि औरत की चतुराई औरत ही समझती है ! तो मैं भी तो औरत ही हूँ। मैं पूछती हूँ कि तुम लोग पीठ पीछे भाभी का फैसला क्यों कर रही हो ? वह कोई नाबालिग़ तो है नहीं। सामने बुलाकर बात करो ! उनसे प्यार से पूछो कि भैया जैसे पति की तरफ से उनका मन क्यों फिर गया है ?

मन ? मन क्या चीज है री छोकरी ? हा-हा-हा-हा—सारे हॉल को सिर पर उठा लिया हिरण्मयी ने जोर-जोर से हँसकर। मन नहीं री, शरीर कह, शरीर ! दुश्चरित्रता का कारोबार मन से नहीं होता, शरीर से होता है ! तुझे पता भी है कि लम्पटता के साथ मन का कोई संबंध नहीं होता, वह तो केवल देहगत होता है ? यहाँ आकर क्या शिवानी सबके सामने अपने मुँह से कह देगी कि मैं शारीरिक तुष्टि के लिए दीपेन के पीछे भाग रही हूँ ? या इस हीरे के टुकड़े जैसे पति के मुँह पर कह देगी कि तुम्हारी तरफ से मेरा मन फिर गया है ? ऐसी बातें न तो कभी कोई अपने मुँह से कहता है और न ही स्वीकार करता है ! बिल्कुल बच्ची है तू अभी भी !

सब की नजर बचाकर हिरण्मयी की ओर देखकर आँख मचकाई माया देवी ने। उधर हेमन्त जैसे पत्थर बन गया था। लावण्य का प्रस्ताव जहाँ का तहाँ रह गया।

इला ने फिर अपना भाषण शुरू किया, तू जरा सोचकर देखेगी तो पता

लगेगा लावण्य कि मन की बात का कोई साक्षी नहीं होता, लेकिन प्रत्यक्ष कार्य का कोई न कोई साक्षी अवश्य होता है। अदालत का हाकिम, हाईकोर्ट का जज —सब ही साक्ष्य व प्रमाण माँगते हैं और उसी के आधार पर फैसला करते हैं। फैसले का एक आधार और होता है, वह होता है परिपार्श्ववर्ती। लेकिन यह सब तेरी समझ में नहीं आयेगा अभी। शिवानी जब भी दीपेन से मिलने जाती है, गाड़ी खुद लेकर जाती है, सुनील को साथ नहीं ले जाती। आँखों पर धूप का चश्मा होता है, जिससे कोई उसे आसानी से न पहचान सके। तू अदालत में जाकर हाकिमों से ये सारी बातें पूछ कर आ। सामान खरीदने के लिए निकलती है, लेकिन खरीदारी के साथ-साथ और भी सब कुछ निपटाकर घर लौटती है। कुछ दिनों से सुना जा रहा है कि दीपेन धर्म-कर्म, योग-बोग के पीछे पागल हो रहा है। शिवानी को पता है कि आधुनिक साज-सज्जा या क्रीम-पाउडर लगाकर बन-ठन कर रहने से उसका मन आकर्षित नहीं कर सकती वह! इसलिए सब होते हुए पसन्द न होने के कारण इस्तेमाल न करने का ढोंग रचती है वह! समझीं माया मौसी? मुझे बड़ा दुख है शिवानी के लिए। बेचारी!

मुग्ध-होकर सुन रहे थे सब इला का भाषण। लावण्य का मुँह भी बन्द हो गया था, समझ में ही नहीं आ रहा था उसके कि क्या जवाब दे। हिरण्मयी के लिए अभी तक सीधी-सादी भोली-भाली छोटी-सी बच्ची बनी रहने वाली मिनि तक चुप बैठी थी, वह भी अभिभूत हो गई थी यह सब सुनकर। बहस में इला को हराना आसान नहीं था। भले ही इसने डबल एम० ए० पास नहीं किया था, लेकिन उसकी प्रकृत विद्या के सामने शिवानी भला क्या चीज थी? शिवानी की सारी विद्या दुष्कृति के लिए थी, आज सब के मन में शायद यही विश्वास घर कर गया था। हेमन्त भी बिल्कुल अविचल व शान्त था, उसके पास भी इला की इस तरह की युक्ति के बाद जैसे कहने को कुछ नहीं रह गया था।

माया देवी इला की बगल में ही बैठी थीं, उसकी तरफ मुँह करके बोलीं—मेरे घर की मान-मर्यादा यदि बच गई तो इसके लिए मैं सदा तुम्हारी आभारी रहूँगी इला।

लावण्य के लिए अब यहाँ एक पल भी ठहरना मुश्किल था। उठ कर खड़ी हो गई वह। माया देवी ने तिरछी नजर से एक बार देखा उसकी तरफ लेकिन चुप बैठी रहीं, बोलीं नहीं। हिरण्मयी मुस्कुरा कर बोलीं, बच्चे को छोड़ कर आई है, इसीलिए चिन्ता हो रही है न? खुद माँ बनने के बाद ही समझ में आता है कि माँ के लिए सन्तान क्या चीज होती है। उसके लिए सन्तान का कल्याण ही संसार की सबसे बड़ी चीज होती है, समझी लावण्य?

लावण्य के कान तक जैसे बात पहुँची ही नहीं। अपना बैग उठा कर कमरे से निकल कर वह गेट की ओर चली गई।

गाड़ी में बैठने जा ही रही थी कि देखा ऊँची स्कर्ट पहने मिनि पीछे-पीछे आ रही है। पास आकर बोली, मेरे ऊपर गुस्सा होकर जा रही हो लावण्य दी ?

हाँ—रुक कर लावण्य बोली—तुम्हारे हाव-भाव, तुम्हारा यह ऊंचा घाघरा और यह पांव नचाना तुम्हारी माँ के अलावा कोई पसन्द नहीं करता मिनि !

इस प्रकार के अप्रत्याशित तिरस्कार के लिए तैयार नहीं थी मिनि। बोली, तो इसका मतलब है तुम अपने यहाँ मेरा आना-जाना भी पसन्द नहीं करतीं ?

हाँ, बहुत ज्यादा जब-तब नहीं आओ तो अच्छा ही है। क्योंकि मेरी सास जरा कड़े स्वभाव की है। सुप्रिय के साथ तुम्हारा इतना मिलना-जुलना उन्हें पसन्द नहीं है।

ओ....देवर को ताले में बन्द करके रखना चाहती हो तुम। क्यों ?

गुस्से से लाल हो गई लावण्य। आँखें लाल-पीली करके बोली—नहीं, यह तो नहीं चाहती। लेकिन हिरण मौसी यदि अपनी पोढ़ी बछिया को खूंटे से बांध कर रक्खा करें तो हम लोगों की जान बच जायेगी।

लावण्य के गाड़ी में बैठते ही ड्राइवर ने गाड़ी स्टार्ट की और एक्सलेटर दबा दिया। मिनी खड़ी रह गई जहाँ की तहाँ। एक मिनट बाद वह हॉल में न जाकर सीधे अन्दर चली गई।

बत्ती जल चुकी थी। अन्दर बहुत से लोग थे। प्रभा दी काफी दूर से आई थीं—वह माया देवी की दूर के रिश्ते में देवरानी लगती थीं। इला से खबर मिलने पर शोभना भी आई थी, उसके पति एक बहुत बड़े सरकारी अफसर थे। हिरण्मयी की चचेरी बहन नीरजा भी आज का यह नाटक देखने आई थी। यह कहने की तो कोई बात ही नहीं है कि दो साल पहले ये सब लोग हेमन्त और शिवानी के विवाह के अवसर पर भी पधारे थे।

एक-एक करके सब ने विदा ले ली धीरे-धीरे। हॉल में रह गये केवल तीन जने—माया देवी, हिरण्मयी और घुटनों पर कुहनियां टिका कर सिर को हाथों में थामे नीची नजर किये बिल्कुल चुप बैठा हुआ हेमन्त—लांछना, अपयश, अपमान से सिर इतना झुक गया था कि ऊपर उठाने का कोई उपाय ही नहीं था अब। नजर नीची किए हुए ही एक बार घड़ी देखी थी बस उसने। सात बज चुके थे। अपने आफिस के सबसे बड़े सेक्शन का सर्वोच्च अधिकारी है वह। रोज चार बजे उसकी छुट्टी हो जाती है और साढ़े चार तक वह घर पहुंच जाता है। ट्रैफिक

बढ़ने से पहले ही सुनील गाड़ी की स्पीड बढ़ा देता है। जल्दी-जल्दी सीढ़ियाँ लाँघ कर जैसे ही घर में घुसता, दरवाजे पर खड़ी मुस्कुराती हुई रुनु कहती, तुम तो ऐसे आ रहे हो जैसे खूँटा उखाड़ कर भागे हो। और बढ़कर टाई और कमीज के बटन खोल देती। चाय पीकर थोड़ी देर दोनों गपशप करते और फिर गाड़ी लेकर घूमने निकल पड़ते—जनबहुल कलकत्ता जैसे प्राणिशून्य हो जाता दोनों के लिए—ऐसा लगता जैसे बस संसार में उन दोनों के अलावा कोई न हो—उत्साहित, आनन्दित, प्रफुल्लित दो प्राणी जैसे अपने भविष्य निर्माण की नींव रख रहे हों। मैदान के एक किनारे अन्धकार में गाड़ी रोक कर प्रणय करने को रुनु कभी तैयार नहीं होती। वह कहती, हेमन्त, हम पति-पत्नी हैं, हमें लोगों की आँखों की आड़ की जरूरत नहीं है। हमारा कुछ भी किसी से नहीं छुपा है। सम्पर्क की अनिश्चितता ही मन में रोमान्स जगाती है, वहाँ मिलेगा कि नहीं मिलेगा इसी दुविधा में आदमी झूलता रहता है। लेकिन मेरा और तुम्हारा सम्बन्ध स्थायी है। उद्वेग, संशय, भय, आड़—हमें भला इनकी क्या जरूरत है?

मुग्ध होकर सुनता हेमन्त! कल रात तक सुनता रहा है, आज सुबह भी सुना था। अभी उस दिन ही तो कहा था हेमन्त ने—माँ के साथ हमारा मन नहीं मिलता लेकिन तब भी मैं चिरकाल माँ का कृतज्ञ रहूँगा रुनु—क्योंकि वह तुम्हें मेरे पास लाई है। बिस्तर पर लेटे-लेटे हेमन्त के गले में हाथ डालकर उसके कान में धीरे से कहा था रुनु ने, विश्वास करो हेमन्त, मैं भी माँ की सदा ऋणी रहूँगी। वह नहीं होतीं तो मैं तुम्हें कैसे पाती? आँख बन्द करके आनन्द से विभोर हेमन्त ने सुनी थी यह बात। रुनु के आतप्त शरीर से लिपटा हेमन्त जैसे उसी में समाया जा रहा था। मानों रात को जागने वाले दो पक्षी हों। शिवानी कह रही थी—डरो मत हेमन्त, माना तुम्हारे चारों ओर का वातावरण दूषित है, लेकिन तुम हिम्मत मत हारो, जमे रहना और फिर एक दिन यह अशान्ति खतम हो जायेगी, गन्दगी साफ हो जायेगी तब मैं और तुम दोनों रहेंगे आराम से। अनन्त काल से हम दोनों अपना रास्ता साफ करके उस पर चलते आ रहे हैं। हम दोनों अपना जीवन महान बनायेंगे—चारों ओर के इस ह्रास के बीच हम दोनों युद्ध के लिए तैयार करेंगे स्वयं को! तुम अपने हाथों से सब भग्न करोगे और मैं तुम्हारी सहायता करूँगी।

क्या भग्न करूँगा?—हेमन्त ने जानना चाहा था।

क्यों? जो कुछ भी सामने आयेगा।—सबसे पहले अपने उस जीवन को खत्म करना—जिसको तुमने विलास, लाड़-प्यार, प्राचुर्य व सम्भोग से बनाया है। यही सब तुम्हारे पथ की बाधाएँ हैं, हेमन्त!

यह क्या कह रही हो रनु ?

ठीक ही कह रही हूँ—फिर तोड़ना अपनी पुराने जमाने की आदतें—जिनको ऐतिह्य कहते हैं अर्थात् जो परम्परागत हैं। अपनी पुरानी चिन्तन-धारा को तोड़ना—जिसको रसेल ने हैबिट ऑफ थॉट्स कहा है! अपने चारों ओर के दुरचक्र को तोड़ना, तोड़ कर खाक में मिला देना अपने मैत्र वंश की पुरानी इमारत को।

हेमन्त जैसे दो सालों की सुख-स्मृतियों की अतल गहराई में डूब गया था! इसी समय सन्देश की प्लेट हाथ में लिये हिरण्मयी ने कमरे में प्रवेश किया और बोली, हाय मेरा फूटा भाग्य! कमरे में कोई भी नहीं है और माँ-बेटा दोनों ऐसे बैठे हैं जैसे एक दूसरे को पहचानते भी न हों। तुमसे ही पूछती हूँ माया, दोपहर से बैठे-बैठे मुँह सूख गया लड़के का, तुम खाने को कुछ दे नहीं सकती थीं भला? यह घर तुम्हारे लिए पराया कब से हो गया?

माया देवी बोलीं, खाने की बात छोड़ो हिरण। आज जब तक तुम्हारे सामने फैसला नहीं हो जाता, मैं घर नहीं लौटूँगी।

मुँह उठाकर हेमन्त ने पूछा, क्या फैसला चाहती हो तुम?

उग्र स्वर में माया देवी ने उलट कर प्रश्न किया—तू ही साफ-साफ कह कि क्या इसके बाद भी तू उस कुलटा को लेकर मेरे साथ एक घर में रहना चाहता है? रात को पति और दिन को उपपति? हया-शरम कुछ नहीं रही तुझे? सब घोलकर पी गया? मैं अपने घर में ऐसा अनाचार क्यों बर्दाश्त करूँगी भला?

हेमन्त बोला, उस लड़की को क्या मैं जिद्द करके लाया था? तुमने क्यों उसको मेरे लिए तय किया था जब मैं विलायत गया हुआ था?

हिरण्मयी जानती थीं कि बस एक इसी प्वाइंट पर माया देवी के पास कहने को कुछ नहीं था। तत्क्षण विपत्ति में मित्र की सहायता के लिए कमर कसी हिरण्मयी ने और बीच में ही बोल पड़ीं—बिल्कुल ठीक कह रहा है तू हेमन्त, बस सारा झगड़ा ही यहीं से शुरू होता है! लेकिन क्यों रे, तू अभी तक नहीं समझा कि माँ का मन क्या चीज है? इतना पढ़ना-लिखना सब बेकार गया? हर माँ यही चाहती है कि मेरा लड़का शादी करके लक्ष्मी जैसी बहू लाये घर में, सुख से रहे, फूले-फूले। पर विवाह का अर्थ ही जुआ होता है रे। इस खेल में कोई हारता है तो कोई जीतता है! लेकिन तू भी तो बेवकूफ था, माँ की बात पर तैयार ही क्यों हुआ तू? लिख भेजता कि मैं अभी पाँच साल और योरोप में ही रहूँगा, यहीं शादी तय करूँगा। माया क्या मना कर देती? हिम्मत थी इसकी? तू यदि किसी मेम को साथ ले आता तो हमारे मुँह उज्ज्वल हो जाते!

बिल्कुल ठीक ! माया देवी ने जोड़ा ।

आश्चर्यचकित होकर हेमन्त बोला, यह क्या कह रही हो तुम हिरण मौसी ? अपने देश की लड़कियाँ मेरी नजरों में कहीं ऊँची हैं । मैं क्यों किसी दूसरे देश के अपरिचित, अनजान समाज में शादी करने जाता ? योरोप मैं पढ़ने गया था, बंदरपना करने या दिखाने को नहीं !

छिः छिः छिः—तेरी बात सुनकर तो शर्म से सिर झुक जाता है हेमन्त—जरा उत्तेजित हो गईं हिरण्मयी । तू आधुनिक है न ? तुम लोग कहते नहीं फिरते कि सारी दुनिया के मनुष्य एक हैं ? तुम क्या यह नहीं कहते कि आज संसार के दरवाजे खुल गये हैं, जाति, धर्म, समाज सबसे मनुष्य का महत्त्व कहीं अधिक है ? छिः हेमन्त, तेरे मुँह से ऐसी बात शोभा नहीं देती । आजकल कितने लड़के विलायत से शादी करके लौटते हैं ! उनके उस विवाह को क्या तू बंदरपना कहता है ? पाँच साल वहाँ रहने पर भी क्या तुझे मनपसन्द मित्रता करने लायक एक भी लड़की नहीं मिली ?

हेमन्त बोला, मिली क्यों नहीं हिरण मौसी—लेकिन इस मित्रता में मेरा कोई विशेष उद्देश्य क्यों होने लगा ? मैंने कहा न, कि मुझे अपने देश की लड़कियाँ कहीं अधिक पसन्द हैं ।

अच्छा ठीक है, लेकिन जरा अपने मन में झाँक कर देख कि इन ढाई सालों के बाद भी क्या किसी की याद बाकी है तेरे मन में ?

माया देवी के चेहरे पर एक तरह का रोमांच—हर्ष दिखाई दिया । मुग्ध दृष्टि से वह हिरण्मयी की तरफ देख रही थीं ।

अचानक विरक्ति दिखाते हुए हेमन्त ने कहा—यह सब बातें जानने से तुम्हें क्या लाभ हिरण मौसी ?

हिरण्मयी दबीं नहीं, बल्कि जरा और उत्साहित होकर बोलीं—तो फिर यह बात मान ली जाय कि वहाँ कोई ऐसी थी, जो मुझे प्रिय थी, क्यों ?

थी क्यों नहीं ? उनके देश में जब गया था—

बस-बस ! देख मैं तेरी मौसी हूँ, बड़ी हूँ—जरा मेरी ओर देख कर कह तो क्या तुझे उनमें से किसी की भी याद नहीं आती ?

प्रतिवाद करते हुए हेमन्त बोला—क्यों याद आयेगी ? अगर मैं मन से किसी को याद करूँगा, तभी तो याद आयेगी ?

हिरण्मयी बोलीं, देख हेमन्त, मैं जन्म से तुझे देखती आ रही हूँ, मुझे बातों में भुलाने की कोशिश मत कर । इस वक्त तेरा संकटकाल है, सच-सच बता । बहुत बार पुरुष अपने मन को स्वयं नहीं समझ पाता लेकिन औरत से जिस तरह औरत

का मन नहीं छुपा रहता उसी तरह आदमी के मन का चोर पकड़ते उसे देर नहीं लगती। तुझे क्या एक बार भी ख्याल नहीं आता कि वहाँ एक लड़की को रोती छोड़ आया था।

मैं ? विस्मय से स्तंभित हेमन्त ने हिरण्मयी की ओर देखकर कहा—कहाँ, नहीं तो ?

अच्छी तरह से याद कर हेमन्त।

कुछ देर चुप रहा हेमन्त। फिर सिर उठाकर हँसा और बोला, तुम बहुत चालाक हो हिरण मौसी—धोखे से मुझे अपनी बातों में फँसाना चाहती हो।

मैं धोखे से फँसाना चाहती हूँ तुझे ?—अच्छा ठहर—यह कहकर हिरण्मयी अन्दर गईं एवं दो मिनिट में एक फोटो लाकर हेमन्त की आँखों के सामने करके बोलीं, कौन है यह लड़की ? पहचाना ?

फोटो सुन्दर था। हाथ में लेकर उलट-पलटकर देखा हेमन्त ने, बोला—हाँ, पहचानता हूँ। इसका नाम स्टेला है। कहाँ से मिला तुम्हें यह फोटो ?

अब पकड़ाई में आया न ? अब बता सच-सच, इसके साथ कहाँ तक सम्बन्ध बढ़ाया था तूने ? कोई वायदा किया था ? प्रतीक्षा करने के लिए कह कर आया था ?

चुप एकटक हेमन्त हिरण्मयी की तरफ देख रहा था। उत्सुकता, विस्मय, कुंठा, लज्जा—किसी का भी आभास मात्र तक नहीं था उस दृष्टि में। स्तब्ध विमूढ़ थी वह दृष्टि।

अपनी उत्तेजना को दबाते हुए हिरण्मयी ने फिर कहा—सामने तेरी माँ बैठी है और मैं हूँ रिश्ते में मौसी। बता तो भला, तू क्यों एक निरपराध लड़की का जीवन ऐसे बर्बाद करके चला आया ? भले ही वह लड़की विदेशी थी अथवा भिन्न समाज की थी—लेकिन क्या एक बार भी तुझे मनुष्यत्व, धर्म या नीति का ख्याल नहीं आया ? तेरे मन ने तुझे धिक्कारा नहीं इसके लिए ? भिन्न देश की होने की इतनी बड़ी सजा दे दी तूने उस बेचारी को ? यह क्या कर डाला तूने हेमन्त ?

हेमन्त उसी तरह एकटक देख रहा था।

और हिरण्मयी कहती जा रही थीं, मानों उनकी जिह्वा पर सरस्वती विराजित हो गई थीं आकर—प्यार का उचित मूल्य यदि तू एक जगह नहीं चुका पाया तो याद रख जीवन में फिर कभी किसी भी जगह तू उसका मूल्य नहीं दे पायेगा हेमन्त। तू पुरुष है, उच्च शिक्षित है, मैत्र वंश का शिरोमणि है—लेकिन फिर भी ऐसी सोने की प्रतिमा को ठुकरा कर यहाँ कूड़े के ढेर से पैर-टूटी लकड़ी

की लँगड़ी गुड़िया को उठा लिया तूने ? जरा सोचा-विचारा तो होता। अगर अपना भला-बुरा भी तू नहीं देख पाता तो किस काम की तेरी यह शिक्षा ? धिक्कार है तेरी ऐसी शिक्षा को। विलायत जाकर क्या ख़ाक सीखा तूने ? भिन्न देश, भिन्न समाज की क्या हर चीज़ खराब होती है ? सीखने लायक, अपनाने लायक कुछ नहीं मिला तुझे ? अब भी क्या तू उस कुलटा, दुश्चरित्र, निर्लज्ज लड़की के साथ ही रहना चाहता है ?

तो फिर क्या करने को कहती हो ?

हेमन्त के स्वर की कठोरता से चौंककर माया देवी ने उसकी ओर नज़र घुमाई। अब जाकर शायद दवा लगी है। मन ही मन हिरण्मयी की तारीफ किये विना नहीं रह सकीं माया देवी।

हेमन्त के प्रश्न का उत्तर देते हुए हिरण्मयी ने कहा, मैं क्यों बताऊँगी रे ? तू क्या कान का इतना कच्चा है कि मेरे कहने से सारी बातें मान लेगा ? मैं तो बस इतना कहना चाहती थी कि स्टेला ने तेरी पत्नी बनने के लिए ही जन्म लिया था। इतनी भद्र, सुशील लड़की की आशा, आकांक्षा, स्वप्न, अनुराग, कल्पना सब झूठा दिखावा है, तू क्या यह कहना चाहता है ? तू क्या इतना कठोर है हेमन्त ?

तीखे, कड़ुवे व रूढ़ कंठ से माया देवी को सुनाते हुए हेमन्त ने कहा—घर में जो भैंस है उसकी क्या व्यवस्था करूँ, यह भी बता दो ?

हा हा हा हा—एक बार फिर हिरण्मयी की हँसी से सारा हॉल मुखरित हो गया। हँसी को किसी तरह रोक कर बोलीं—पुरुष होकर ऐसी बात मुँह से निकालने में शर्म नहीं आती हेमन्त ? गधा खेत खाय, जुलाहा मारा जाय—सुनी है तूने यह कहावत ? लेकिन तू तो पुराने जमींदार वंश का लड़का है रे ? तेरी जगह तेरे बाप-दादा होते तो क्या करते ? मेरे पूर्वज क्या कर गये हैं ? कुलीन ब्राह्मण वंश में तूने जन्म लिया है, अब क्या तुझे भी सिखाना पड़ेगा कि फटे जूते का क्या करना चाहिए ?

तिपाई पर सन्देश की प्लेट के पास ही स्टेला की फोटो पड़ी रह गई और हेमन्त कुर्सी से उठकर दरवाजे से सीधा बाहर निकल गया। सड़क पर आकर गाड़ी में बैठा और गाड़ी स्टार्ट कर दी।

विजयोल्लास से फूली नहीं समा रही थीं दोनों। प्रतिशोध या प्रतिहिंसा की चरितार्थता के बाद आँखों में कैसी चमक आ जाती है यह दोनों ने एक दूसरे की आँखों में झाँक कर देख लिया था। मुस्कुराकर हिरण्मयी बोलीं, अब चिंता मत करो माया, बस कुछ दिनों की बात और है। लड़की विलायत से यहाँ पहुँचती नहीं कि देखना, लाहिड़ी साहब और हेमन्त को लेकर मैं और तुम दोनों सेंट पॉल्स

गर्जा में जायेंगे। समझीं—पहले हेमन्त क्रिश्चियन धर्म में दीक्षित हो ले। शादी के दिन मैं खुद सजाऊँगी स्टेला को। उसके बाद आयेगा मेरी प्रतिज्ञा पूरी करने का समय—स्टेला के बाप के साथ तुम्हें विलायत न भेज दिया तो मेरा भी नाम नहीं। आओ, अब मुंह मीठा कर लो, हेमन्त छोड़ कर चला गया सन्देश की प्लेट!

रात के नौ बज गये थे। दीवाल पर लगी घड़ी से पड़ी भंग—टन, टन, टन, टन....

: : ७ : :

कहीं कोई आवाज नहीं थी, सारे घर में ऐसी चुप्पी छाई हुई थी जैसे सब घर छोड़ कर कहीं चले गये हों। आज तो यशोदा भी पता नहीं किधर बैठी थी। काम खत्म हो जाने के कारण नीचे नौकर-चाकर भी चुप होकर शायद अपने-अपने कमरों में चले गये थे। नारायण भी ऊपर तिमंजिले की सीढ़ियों पर जाकर सो गया था।

न जाने कितनी जगह फोन किया होगा रुनु ने लेकिन हेमन्त का पता नहीं लगा। शाम के वक्त लावण्य के घर भी फोन किया था। पता चला लावण्य भी बच्चे को छोड़कर कहीं गई हुई थी, अभी तक नहीं लौटी थी। आफिस की मीटिंग भी इतनी रात तक नहीं चलती। शाम के शो में सिनेमा भी गया होता तो अब तक आ जाना चाहिए था; पर नहीं, हेमन्त कभी अकेला सिनेमा नहीं जायेगा।

रुनु फिर से बरामदे में आकर खड़ी हो गई। अन्धकार के कारण कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था बाहर का! सुनील के कमरे की भी लाइट बुझ गई थी। शायद रामसेवक अभी तक माया देवी को लेकर नहीं लौटा था। और फिर वह तो कभी भी ग्यारह से पहले घर नहीं लौटतीं, मिनि के घर ही उनकी महफ़िल जमती है।

रुनु फिर कमरे में आ गई। थोड़ी देर चुप बैठी रही। प्रतीक्षा का एक-एक क्षण जैसे काला नाग बनकर उसे डस रहा था। न जाने कैसी-कैसी दुर्भावनाएँ उठ रही थीं मन में। फिर उठकर थोड़ी-सी धूप और जला दी उसने। आज दोपहर को वह लंच नहीं भेज पाई थी, इसीलिए इस समय का खाना बड़े यत्न से बनाया था उसने—आलू के परांठे, मटर-पनीर-करी, मछली, मांस के कटलेट, रसबेरी विथ क्रीम—पूरा आयोजन था। खाना भी पड़ा-पड़ा ठंडा हो रहा था। हेमन्त नहीं आया था इसलिए शाम की चाय-नाश्ते का तो प्रश्न ही खड़ा नहीं होता था।

दीवाल पर लगी घड़ी को देखकर रुनु सोच ही रही थी कि साढ़े नौ बज रहे हैं, क्या हो गया? क्यों नहीं आया अभी तक कि उसे गाड़ी का हार्न सुनाई दिया।

हाँ, यह आवाज उसकी जानी-पहचानी थी। मुर्झाया चेहरा खिल उठा। जल्दी से भाग कर बरामदे में आई तो देखा हेमन्त आ गया था।

अपने कमरे से निकल सुनील ने गाड़ी सँभाली और हेमन्त जल्दी-जल्दी सीढ़ियाँ चढ़कर ऊपर आया—सामने ही खड़ी थी रुनु, लेकिन हेमन्त ने जैसे उसे देखा ही नहीं, सीधा कमरे में चला गया। पीछे-पीछे रुनु भी चली आई। गुलाब की अगरबत्ती से महक रहा था सारा कमरा।

रुनु बोली, आज इतनी देर कैसे हो गई। यह क्या है?

एक बड़ी बोतल टेबिल पर रखकर गम्भीर, कठोर स्वर में हेमन्त बोला, यह? विलायती शराब!—मत आओ मेरे पास, टाई, शर्ट, जूता कुछ नहीं उतारूँगा!

हतचकित खड़ी रह गई शिवानी। इस व्यवहार का कोई भी कारण न समझ पाकर बोली, आज दोपहर को लंच नहीं भेजा, इसलिए गुस्सा कर रहे हो? खाना खाया ही नहीं शायद आज? क्यों?

उग्र स्वर में हेमन्त बोला, ना, नहीं खाया और खाना भी नहीं है। तुम्हारे हाथ की छुई कोई भी चीज मेरे मुंह में न जाय यही अच्छा है।

जहाँ की तहाँ खड़ी स्थिर दृष्टि से शिवानी हेमन्त की ओर देख रही थी। बेचैनी से हेमन्त कमरे में जल्दी-जल्दी इधर से उधर चक्कर काट रहा था। थोड़ी देर बाद रुका और शिवानी से बोला, लाओ बोतल खोलकर दो। सुन नहीं रही हो क्या? लाओ जल्दी से—

क्यों? तुम तो कभी पीते नहीं थे? मृदु किन्तु अविचल-अकंपित था शिवानी का स्वर।

कौन कहता है नहीं पीता?—चिल्ला पड़ा हेमन्त, सात पीढ़ियों से पीता आ रहा हूँ। हम लोगों का मैत्र-वंश का पुराना घराना है। पता है। लाओ खोलो—

शिवानी अपनी जगह से हिली तक नहीं। शान्त निर्विकार दृष्टि से वह हेमन्त का निरीक्षण कर रही थी, सारी बात को समझने की कोशिश कर रही थी। ऐसा लग रहा था जैसे वह आज यह विषाक्त गैस आकंठ भरकर लौटा था।

समझीं कुछ या नहीं?—फिर से चिल्लाया हेमन्त—सीधे मुंह अब मैं तुमसे बात नहीं करूँगा। उसे पीने से तेज नशा होता है। समझीं अब भी या नहीं?

पीछे मुड़कर शिवानी ने दरवाजा बंद करके सिटकिनी लगा दी और फिर घूमकर खड़ी हो गई। हेमन्त के आज के इस आचरण में वह एक नयापना सा लक्ष्य कर रही थी।

दरवाजा क्यों वन्द किया ? तुम्हें अभी जाना है न ?

मुझे ? कहाँ ?—अवाक् होकर शिवानी ने हँसकर पूछा।

वहुत ही घृणा से हेमन्त ने जवाव दिया। भाड़-चूल्हे में ! जहाँ तुम्हारी खुशी चाहे ! क्यों, खोली नहीं वोतल ? मैं ठोकर मारकर वोतल फोड़ डालूँगा, कहे दे रहा हूँ—

हँसकर शिवानी वोली—अच्छा ही होगा। शराव की गंध के साथ धूप की गंध मिल जायगी ! रक्खी तो है वोतल, फोड़ो न ! शराव पीने से पहले ही नशा कहाँ से चढ़ा आये ?

हेमन्त ने वोतल तोड़ी नहीं। वोला, ठीक है, मत दो खोलकर। विना नशा चढ़ाये होश-हवास में ही कहता हूँ तुमसे कि तुम अभी इसी क्षण इस घर से निकल जाओ ! तुरन्त निकल जाओ नहीं तो गला दवाकर मार डालूँगा।—

हेमन्त आगे वढ़ा उसकी तरफ—शिवानी उसी तरह खड़ी मुस्कुरा रही थी, वोली—मुझे लेकिन जरा भी डर नहीं है किसी वात का ! सुना है, पुराने सामन्ती परिवारों में ऐसा होता आया है, वहुत से पतियों ने अपनी पत्नियों को गला घोंट कर मारा है ! ठीक है, इन्हीं हाथों से कल रात प्यार से गले में हार पहनाये थे, इन्हीं हाथों से आज गला घोंट दो !

तो फिर लो—झपट कर हेमन्त ने जोर से शिवानी का गला दोनों हाथों से दवा लिया। चिल्ला कर वोला, मरो, अभी मरो, हाँ-हाँ अभी—तुरन्त दम घुटने से यहीं तुम्हारा अंत हो जाये........।

उसी अवस्था में शिवानी वोली, तुम तो मारना भी नहीं जानते। वहाँ नहीं, वहाँ तो तुम प्यार करने के लिए गले में हाथ डालते थे। ना, ना—इतना जोर थोड़े ही लगाना पड़ता है। वस, एक हाथ से नली को पकड़कर जोर से दवाओ—न-न छोड़ो मत। यह लो—यह विण्ड पाइप दवाओ।

शिवानी ने हेमन्त का एक हाथ खींच कर अपनी कंठनली पर रखने की चेष्टा की। लेकिन हाथ छुड़ाकर हेमन्त दूर खिसक कर वोला—चलो जाने दो—कोई वात नहीं अपने-वंश में मैं अपवाद स्वरूप ही सही ! लेकिन तुम्हारी जैसी भ्रष्ट औरत को मार नहीं पाया, इसका मुझे वहुत दुःख है।

शान्त स्थिर स्वर में शिवानी वोली—तुम दोनों में से क्या चाहते हो, खुद नहीं जानते। कभी मार डालना चाहते हो, कभी घर से निकल जाने को कहते हो। वोलो, क्या चाहते हो तुम ?

चिढ़ कर हेमन्त ने जवाव दिया—तुम आँखों से दूर होने में देर कर रही हो इसलिए मारना चाहा था तुम्हें।

ओह—तो यह कहो न। लेकिन इतनी रात को पत्नी को घर से निकालने की अपेक्षा चुपचाप मार डालना ज्यादा अच्छा होता। वंश का मान-सम्मान बचा रहता।

तीक्ष्ण दृष्टि से शिवानी को घूरते हुए हेमन्त बोला—तुम क्या पत्नी हो? आज बच्चे-बच्चे की जबान पर बस एक ही बात है कि तुम वेश्या हो और ढाई साल से मुझे धोखा देती आ रही हो? आज मैं अच्छी तरह समझ गया कि माँ क्यों तुम पर शुरू से सन्देह करती आ रही है। लावण्य ने यहां क्यों आना बन्द कर दिया, यह मुझे आज पता लगा। मनोहर को तुम्हारे कुकर्मों का पता लग गया इसीलिऐ तुम उसे यहां से हटाना चाहती हो। सबसे अधिक घृणास्पद बात तो यह है कि सुनील ड्राइवर तक के साथ तुम्हारे संबंध की बात लोगों को पता चल गई है। आज तुम्हारा सारा भंडा फूट गया है। मुझे यह भी पता चल गया है कि मुझसे छुपकर तुम दीपेन के पास आती-जाती रही हो। अब तक ठगती रही हो तुम मुझे।

पूर्ववत् शान्त स्वर में शिवानी ने कहा—जो कुछ तुमने कहा, इसमें वेश्यावृत्ति का प्रमाण नहीं मिलता कहीं भी। थोड़ा और कहो।

हेमन्त ने घूमकर इस निर्विकार निर्भय नारी की ओर देखा और जैसे एक क्षण के लिए जबान पर ताला पड़ गया उसकी। लेकिन फिर से अपनी सारी शक्ति बटोर कर बोला—आज मुझे आफिस पहुंचा कर अकेली गाड़ी लेकर बाजार सामान खरीदने निकली थी? फिर उसके बाद?

लेकिन उसके बाद बाजार का कोई काम नहीं निपटा पाई। मुझे कार्यवश अन्यत्र जाना पड़ गया।

क्यों?

दीपेन के साथ कुछ जरूरी काम के लिए जाना था। इधर कुछ दिनों से छुपकर मेरा उनसे मिलना-जुलना हो रहा है।

छुप कर! क्यों?—हेमन्त ने जैसे चोर पकड़ लिया। बोला—इला दी ने आज देख लिया न, इसलिए अब पति के सामने सच बोलकर सती सावित्री बन रही हो। सब कुछ पता लग गया है मुझे—रत्ती भर भी छुपा नहीं रहा। तुम्हारी सारी कलई खुल गई है। अच्छा, तो जरा यह भी सुन लूं कि दीपेन के साथ यह छुपकर मिलना-जुलना कब से चल रहा है?

बस, इधर हाल में ही शुरू हुआ है। लेकिन अभी कुछ दिन और रहेगा। और कुछ जानना चाहते हो?

हेमन्त चुप बैठा रहा। जवाब देने की कोई चेष्टा नहीं दिखाई दी।

तुम्हें इधर-उधर ढूंढ़ता फिर रहा हूँ—मैं तो डर रहा था कि अँधेरे में तुम रास्ता कैसे पहचान पाओगी।

शान्त स्वर में शिवानी ने जवाब दिया—अपना रास्ता मैं अच्छी तरह पहचानती हूँ। अब क्या कहने आये हो?—हेमन्त की पीठ पर जैसे जोर से चावुक पड़ गया हो।

उच्छ्वसित स्वर में हेमन्त बोला—रुनु, यह लो तुम्हारी चप्पलें ले आया हूँ। नंगे पाँव मत चलो—सड़कों पर काँच के टुकड़े पड़े रहते हैं!—और कहने के साथ-साथ अपनी दोनों जेबों में से दोनों चप्पलें निकाल कर रुनु के पाँवों के पास रख दीं।

चूंकि शिवानी का वह शांत अविचल चेहरा हेमन्त के लिए अपरिचित नहीं था, अतः निराश नहीं हुआ वह। बोला—रुनु, मैं प्रार्थना करता हूँ, तुम इस तरह नंगे पाँव मत जाओ—!

रूखे स्वर में शिवानी ने कहा—ओ....शायद तुम्हारी प्रेस्टिज के खिलाफ है यह?—अच्छा, अब छोड़ो यह सब बातें, मुझे जाने दो अब, और मेरा पीछा मत पकड़ो।

ठीक है, तुम्हें यदि जाना ही है तो चलो, मैं तुम्हें श्वसुर जी के पास छोड़ आऊँ।

अब वह तुम्हारे श्वसुर नहीं हैं—मेरे पिता जी हैं! लेकिन मैं तो उनके पास नहीं जा रही हूँ।

उनके पास नहीं जा रही हो? तो फिर? उद्विग्न होकर हेमन्त ने पूछा। पर पिता जी के पास क्यों नहीं जा रही हो?

हेमन्त की तरफ पीठ थी शिवानी की। अब घूम कर सीधी खड़ी हो गई वह और बोली—मेरे पिता जी का नाम भवेशचन्द्र आचार्य है। उन्हें जब यह पता चलेगा कि अन्याय, अपमान व उत्पीड़न का प्रतिकार न करके अबला की तरह बाप के यहाँ आश्रय लेने आई हूँ तो वह भी घर से निकाल देंगे मुझे।

तो फिर इतनी रात को कहाँ जा रही हो?

अगर तुम्हारी पत्नी होती तो इस प्रश्न का उत्तर देती लेकिन अब तो.... निश्छल भाव से शिवानी ने जवाब दिया।

चुप रह गया हेमन्त, जैसे किसी ने मुंह पर ताला डाल दिया हो। इसी बीच अपने हाथ का शाँखा व नोया उतार कर शिवानी बोली—तुम आ गये, अच्छा ही हुआ। यह लो, अब की बार जिसे घर में लाओगे, उसके हाथों में भी यह कुछ दिन रहेंगे!

दृश्यों की तरह एक के बाद एक देखती आ रही है शिवानी ढाई सालों से। किताबों में कभी उसने सैडिज़्म, परवर्टेड सेक्स, अस्वाभाविक क्षुधा आदि शरीर की विचित्र विभिन्न भंगिमाओं के बारे में अवश्य पढ़ा था, लेकिन अब तो दिन-प्रतिदिन आँखों से देखा है ढाई साल तक। इसमें रत्ती भर भी सन्देह की गुंजाइश नहीं कि हेमन्त भी एक दिन इन्हीं लोगों में मिल जायेगा ! पिता, पितामह, प्रपितामह जिस इतिहास की रचना कर गये हैं, हेमन्त उसका धारावाहक होगा, इसकी भूमिका शिवानी अपनी आँखों से देख आई है।

आगे बढ़ती चली जा रही थी शिवानी।

सबसे अधिक आश्चर्य की बात तो यह थी कि उनके मन में किसी प्रकार का द्वन्द्व नहीं था, इधर-उधर आस-पास भ्रूक्षेप तक नहीं था—निर्विकार—दुनिया से जैसे कहीं दूर पहुँच गई थी वह। आम औरतों की जीवनधारा से उसकी जीवनधारा नहीं मिली, लेकिन उससे क्या आता-जाता है ? बहुतों की नहीं मिलती। जिस विवाहित जीवन को सदा धिक्कारते रहना पड़े वह विवाह यदि टूट जाये तो बुराई क्या है ? यह तो जैसे एक जाल बिछाया हुआ था, जिसमें अनजाने फँस गई थी वह, दम बंद हो रहा था धीरे-धीरे उसका। हेमन्त ने तो बल्कि उसे उस दीर्घ विलम्बित अपमृत्यु के हाथों से मुक्ति दिला दी। हेमन्त के प्रति तो उसे कृतज्ञ होना चाहिए। दूसरी ओर इस मुक्ति के विनिमय में बस उसे कुछ मूल्य चुकाना पड़ा यही न। लेकिन आज तो वह जैसे किसी गुहा के गर्भ से एक अँधेरी सुरंग के ज़रिये बाहर आ गई, जहाँ प्रकाश है, सूर्यकिरण है, जहाँ से एक नये विशाल जीवन का आरम्भ होता है, खुला आकाश दिखाई देता है। सारा संसार जैसे चारों ओर से उसे बुला रहा था ! पूछ रहा था—कहाँ चली गई थी तुम हमें छोड़कर ?

अन्धकार में चलता नितान्त असावधान मनुष्य जैसे अचानक सामने किसी बृहत्काय सरीसृप को देख कर चौंक उठता है। उसी प्रकार एक बड़ी सी काली प्राइवेट कार के अपने बिल्कुल बगल में फुटपाथ के किनारे आ जाने पर शिवानी चौंक कर एक किनारे हट गई। जोर से ब्रेक लगा। गाड़ी पूरी तरह रुकी भी नहीं थी कि हेमन्त खिड़की से मुंह बाहर निकाल कर चिल्लाया—रुनु ?

जहाँ की तहाँ रुक गई शिवानी। दरवाजा खोल कर गाड़ी से कूदा हेमन्त और सामने आकर खड़ा हो गया। लेकिन अभी एक घंटे पहले अपने दोनों हाथों से जिसका गला घोंट रहा था, इस वक्त उसका हाथ भी अपने हाथ में लेने का साहस नहीं हुआ उसे। अधीर व अस्थिर स्वर में बोला, रुनु, कितनी देर से

सड़ाक से चाबुक मारा पीठ पर ! यह क्या ? बस, इतनी जल्दी दिल पिघल गया ! फिर यह टूटेगा कैसे ? इस दिन-प्रतिदिन की यन्त्रणा से छुटकारा कैसे मिलेगा ? नया जीवन शुरू कैसे करेंगे दोनों मिल कर ? नहीं, अभी भावुकता का समय नहीं है ! यह है परीक्षा का काल ! फिर से कठोरता का आवरण ओढ़ा शिवानी ने—बोली—हाँ, जो कुछ भी तुम कह रहे हो, सब ठीक है। लेकिन तब भी आज यह ख्याल आते ही कि पुराने सामंती वंश के एक मेरुदंड विहीन कापुरुष का विकृत घृणित स्पर्मातोजोया मेरी ओवरी में विष संचार कर रहा है—शर्म से, अपमान से मेरा सिर जमीन में गड़ जाता है।

कहते-कहते शिवानी ही नहीं जैसे उसके पैरों के नीचे की धरती भी काँप उठी ! जैसे संयम खो बैठी वह। महाकाली की तरह आँखें कपाल पर चढ़ाकर दाँत किटकिटा कर विष उगलने लगी शिवानी—हेमन्त भूल की तुमने—एक तेज छुरी साथ ले आते तो अपना सारा शरीर छिन्न-भिन्न करके तुम्हारा वह गंदा खून तुम्हें वापस कर देती।

शिवानी का यह चेहरा हेमन्त ने इससे पहले नहीं देखा था। स्तब्ध, आश्चर्य-चकित रह गया वह। होमाग्नि शिखा की लपलपाती जिह्वा की तरह जैसे शिवानी चरम मुहूर्त पर भड़क उठी थी; लेकिन खुद अपने हाथों उस शिखा को बुझा दिया उसने, बोली—छोड़ो, जाने दो। हाँ, एक खबर तुम्हें और दे जाऊँ। उस दिन माँ से जब मैंने कहा कि मुझे कुछ सन्देह है माँ, मेरी तबियत ठीक नहीं रहती आजकल—तो आग-बबूला हो गई थीं वह यह सुनते ही—बोली थीं—क्यों पहले से सावधान नहीं हुआ गया जो अब मेरे पास आई हो ? यह घटना घटने से पहले अनुमति ली थी मेरी ?—उनका गुस्सा देखकर मैं चुपचाप उलटे पैरों लौट आई। थोड़ी देर बाद उन्होंने यशोदा के हाथ एक कागज का टुकड़ा जिस पर एक क्लिनिक का पता लिखा हुआ था भेजा और कहलवाया, जाओ कुल पन्द्रह मिनट का काम है। आज ही इसे खत्म करवा आओ। यशोदा को साथ ले जाना। वहाँ इसे सब पहचानते हैं इसलिए कोई दिक्कत नहीं होगी।

अब तक चुप खड़ा सुन रहा था हेमन्त। शिवानी की बात खत्म होने पर क्षीण स्वर में बोला—तुम क्या जाओगी वहाँ ?

जरूर जाऊँगी। तुम्हारी माँ की मैं कृतज्ञ हूँ। लेकिन वहाँ जाने से पहले साबुन से घिस-घिसकर माँग का सिंदूर साफ कर दूँगी ताकि वह लोग मुझे बस व्यभिचारिणी और वेश्या ही समझें, इसके अलावा कुछ नहीं।

बगल से निकलकर चली गई शिवानी। खड़ा-खड़ा देखता रहा हेमन्त। फिर से दौड़कर रास्ता रोकने का साहस नहीं हुआ ! लग रहा था जैसे बस अभी उसके

मैं क्या करूँगा इन सबका ?

प्रश्न के उत्तर में नितान्त अवहेलना के साथ शिवानी ने दोनों चीजें फुटपाथ के किनारे की नाली में फेंक दीं और जैसे सैकड़ों बिच्छुओं ने एक साथ डंक मार दिया हो हेमन्त के शरीर में—देखता ही रह गया वह उस नाली की ओर ! लेकिन तब भी मन को किसी तरह मजबूत बना कर बोला—नहीं, मैं कुछ भी नहीं सुनूँगा, किसी तरह नहीं मानूँगा, तुम्हें वापस ले ही जाऊँगा। चलो, बैठो गाड़ी में ! चाहे कुछ भी हो जाये मैं तुम्हें छोड़ कर नहीं जाऊँगा—

चुप रहो, परेशान मत होओ ! यह तुम्हारा प्रासाद नहीं, राजपथ है और जिसके साथ बात कर रहे हो वह तुम्हारी पत्नी नहीं, देश की एक औरत है।

तब भी मैं उसे वापस ले जाऊँगा। चलो—

मुस्कुरा कर शिवानी बोली—जबर्दस्ती ? जब कह दिया कि नहीं जाऊँगी। अब कोई तुम्हारी माँ-मौसी मेरी अभिभावक नहीं हैं और तुम मेरे स्वामी नहीं हो—अब मेरे पीछे है सारा संसार, सारा मनुष्य समाज। कुछ ही देर पहले जिसका गला घोंट रहे थे अब उसका बाल तक नहीं छू सकते तुम। अब कोई अधिकार नहीं रहा तुम्हारा। जाओ, चले जाओ तुम यहाँ से—

आर्त स्वर में हेमन्त बोला—लेकिन तुम जा कहाँ रही हो ?

तुमने ही तो कहा था—भाड़-चूल्हे में ! वहीं जा रही हूँ।—और जाने के लिए पैर उठाया शिवानी ने—

ठहरो ! देखो रुनु, मैंने बस सुबह नाश्ता किया था तुम्हारे सामने, उसके बाद से अब तक कुछ नहीं खाया।

ओह ! फिर वही पुराना सेन्टिमेन्ट ! नहीं खाया तो क्या हुआ। आज नहीं खाया—कल खाओगे, उसी तरह आफिस जाओगे, उसी तरह माँ-मौसी की महफिल में बैठोगे। भूल जाओगे सब।—चलो हटो—छोड़ो,—

चप्पलें जहाँ की तहाँ पड़ी रहीं—भ्रूक्षेप तक नहीं किया शिवानी ने ! उसी तरह नंगे पाँव आगे बढ़ चली—एक बार पीछे मुड़ कर देखा तक नहीं।

रुनु—

पागलों की तरह दौड़ा गया हेमन्त और फिर से शिवानी का रास्ता रोककर खड़ा हो गया। बोला, रुनु, तुम्हारे गर्भ में मेरी सन्तान आई है—हमारी कितनी आशा-आकांक्षाएँ थीं, कितने स्वप्न देखे थे हम दोनों ने मिल कर, कितने—

क्षण भर के लिए जैसे रुनु का मन काँपा ! मन ने चाहा दौड़ कर हेमन्त की छाती से लग कर फूट-फूट कर रोये; सारा गुस्सा, शिकायत-शिकवे बहा दे उस अश्रुधारा में लेकिन बस केवल एक क्षण के लिए—दूसरे ही क्षण जैसे किसी ने

: : ८ : :

इतनी दूर की विजिट के लिए जल्दी से तैयार नहीं होते दीनू डाक्टर। और फिर शहर के इस हिस्से में उनके रोगी भी नहीं हैं। शहर पीछे छोड़कर मैदान पार करके आगे बहुत दूर थी जगह। दीपेन ने टेलीफोन पर कहा था—बाजार से निकलकर एक मील चलना। दाहिनी ओर एक टूटा मन्दिर दिखाई देगा, जिसकी दरार से एक बड़ का पेड़ निकला है! वहीं पास में जटिराम मिस्त्री की लकड़ी की दुकान मिलेगी। वहीं से पश्चिम को गाँव की तरफ एक सड़क गई है। हाँ-हाँ—बस वही—उस सड़क पर एक मील चलने के बाद बायें हाथ को एक बहुत बड़ी नई दीवाल दिखाई देगी। उस दीवाल के साथ-साथ चलते रहना और बस तुम ऋषि घोषाल के फाटक पर पहुँच जाओगे। हाँ, उस बगीचे में ले आना सीधे गाड़ी! हाँ, बिल्कुल नया मकान है। क्या कहा? कुत्ता—नहीं-नहीं, डरो मत, वह अल्सेशियन कुत्ता कुछ कहेगा नहीं तुम्हें!

गेट के अन्दर ले जाकर गाड़ी पोर्च में खड़ी की दीनू डाक्टर ने। सब से पहले घर के अन्दर से कुत्ता आया निकल कर। लेकिन हार्न की आवाज सुनकर मकान के पीछे दक्षिण की तरफ बने हिस्से से दीपेन मुस्कुराता हुआ निकलकर आया और हाथ जोड़कर नमस्कार किया। डाक्टर साहब ने पूछा, क्यों रे, कुत्ता तो भद्र है न?

बहुत ज्यादा! बिलकुल इस घर के स्वामी की तरह! इसे अगर उलटे तुम काट खाओ तब भी कुछ नहीं कहेगा। उतरो गाड़ी से—डरो मत—

गाड़ी से उतर आये डाक्टर! पास आकर कुत्ते ने उनका पाँव सूंघा और हटकर एक तरफ बैठ गया। दीपेन बोला, इधर से घूमकर जाना पड़ेगा दीनू काका—मैं पीछे की तरफ रहता हूँ। ऋषि दा का आश्रित हूँ न! आओ—

अरे वाह—इधर का हिस्सा तो बहुत अच्छा है—चारों ओर फूल ही फूल हैं। ये सज्जन करते क्या हैं?

बहुत बड़े व्यवसायी हैं। बाहर से मशीनें वगैरह इम्पोर्ट करते हैं। इधर, यह है मेरा कमरा। आओ—

वरांडा पार करके दीनू डाक्टर दीपेन के कमरे में घुसे। चारों तरफ किताबें

गंभीर-आर्त-भग्न हृदय से रुलाई फूट पड़ेगी ! जेब से रूमाल निकालकर मुँह में ठूँसा हेमन्त ने और फिर जाती हुई रुनु को लक्ष्य करके पीछे से चिल्लाया—लेकिन एक दिन तुम्हें वापस आना ही पड़ेगा रुनु ! जैसे भी होगा मैं लौटाकर लाऊँगा ही !

ना—विना मुड़े चलते-चलते शिवानी ने कहा और अन्धकार में विलीन हो गई।

अर्थात् सब खत्म करके सारे बंधन तोड़कर चली गई वह ! अपनी गृहस्थी, विवाह, गर्भस्थ सन्तान, माँग के सिंदूर, हर चीज पर जैसे एक छोटे से शब्द 'ना' का ताला डाल गई। नारी के प्राचीन संस्कार, प्यार, वात्सल्य, मानवता की सारी नीति, श्रद्धा, विश्वास—आनन्द के सारे आयोजन, विलास-वैभव-सम्भोग के समस्त उपकरण—सब उसकी एक 'ना' के नीचे दब गये। इस एक शब्द से हर चीज के अस्तित्व को अस्वीकार करके चली गई शिवानी।

समुद्र की उत्ताल तरंगों की तरह हेमन्त का हृदय काँप रहा था। उसके चारों ओर फैले संसार के चराचर, सिर पर फैले अनन्त आकाश, उसके जीवन के सारे अतीत, वर्तमान व भविष्य; हर चीज पर आवरण डालकर उसकी नियति ने मानों एक श्मशानचारिणी वीभत्स पिशाची की तरह उसके कान में बीजमन्त्र दुहराया—ना !

रहन-सहन से मेल नहीं खायेंगे !—ये बातें केवल बड़े भैया के ही दिमाग में आई थीं।

फिर उसके बाद ? दीपेन ने पूछा।

लेकिन माया दी बार-बार हेमन्त का फोटो दिखाकर कहने लगीं—हेमन्त गुणवान है, रूपवान है, स्वस्थ है। दैत्यकुल में प्रह्लाद की तरह है वह।

यह बात तो गलत नहीं है दीनू काका। मेरा मित्र है इसलिए नहीं कह रहा हूँ मैं यह। लेकिन यह सच है कि हेमन्त जैसा लड़का कहीं भी आसानी से नहीं मिलता।—रुनु और हेमन्त दोनों को साथ देखकर मन खिल उठता है सबका। उत्साह दिखाया दीपेन ने—

अब वह बात नहीं रही।—और फिर देख, मेरी पोजीशन कितनी डेलीकेट हो गई थी उस वक्त। जब माया देवी रोज-रोज जाकर बड़े भैया के यहाँ धरना देने लगीं तो बड़े भैया ने कह दिया कि मुझे कुछ नहीं कहना अब। आप दीनू से बात कर लीजिए। वह हाँ कह देगा तो मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी।

नीचा सिर किये सब सुन रहा था दीपेन ! सिर उठाकर बोला—तो अब क्या गड़बड़ हो गई ?

हँसकर डाक्टर ने कहा—मेरी हालत थी चमगादड़ की ! मुँह क्या देख रहा है मेरा ? हाँ रे, चमगादड़ की, जिसके पंख भी होते हैं और दाँत भी [illegible] दोनों तरफ का परिचित था। अब माया देवी ने मेरा पीछा पकड़ा [illegible] जानता है क्या हुआ ? हेमन्त को देखते ही मैं भी पागल हो गया।—[illegible] घर की अन्दरूनी बातों को भला मैं कैसे जान लेता। अब मैं तेरे पास [illegible] हूँ यह सोचकर कि शायद तुझसे कुछ पता चल सके।

मुस्कुरा कर दीपेन बोला—मैं ? मैं भला क्या [illegible] बहन कोई नहीं है मेरा; बाप, चाचा, ताऊ एक-एक [illegible] नहीं रहा। आठ साल मैं योरोप में रहा। मैं [illegible] में ? भवेश काका ने मुझे बचपन से पढ़ाया-[illegible] मेरी सगी बहन से भी बढ़कर थी। बस, [illegible] जरिये ही माया मौसी से जान-पहचान [illegible] मौसी के यहाँ पकड़ ले गये थे।

दीर्घश्वास छोड़कर दीनू [illegible] दीपेन ! आज जब लावण्य [illegible] सबसे पहले अपने ऊपर पश्चात्ताप [illegible]

लावण्य रो क्यों पड़ी, [illegible]

ही किताबें थीं—अनेक भाषाओं के अखबार-पैम्फलेट्स आदि फैले पड़े थे। एक तरफ खाट पड़ी थी, दूसरी तरफ टेबिल-कुर्सी लगी थी और दीवाल के अन्दर ही आलमारी बनी हुई थी। एक कोने में छोटा सा दरवाजा था—शायद बाथरूम का था।

लगता है बड़े मजे में है तू ?

हाँ, यहाँ मुझे पढ़ने-लिखने का आराम है दीनू काका। दीपेन ने जवाब दिया।

दीनू डाक्टर ने कुछ सोचकर पूछा—क्यों रे ! क्या सारा जीवन ऐसे ही काट देगा तू ? काम-काज कुछ नहीं करेगा ? बेकार की बात तो चल छोड़ ही दी—

यही क्या बुरा है दीनू काका ? लिखाई-पढ़ाई में जीवन कट जाये—अच्छा ही है। अच्छा, एक मजे की बात सुनो, मैंने पाँच-छह लेख फ्रेंच व जर्मन भाषाओं में लिखे थे। पता है उसका क्या फल हुआ ? अब मेरे पास रुपयों का ढेर लग गया है।

कह क्या रहा है रे !—हँसकर दीनू डाक्टर बोले—डाक्टरी-वाक्टरी छोड़ कर अब तेरी शागिर्दी करनी पड़ेगी क्या ? मैं ठहरा अनाड़ी वैद्य !

मुस्कुरा कर दीपेन ने कहा—क्या कहा ? तुम अनाड़ी हो ? तुम्हारे जितनी डिग्रियाँ कलकत्ते में किसी और डाक्टर के पास हैं भला दीनू काका ?

मुँह पर इतनी बड़ाई नहीं करनी चाहिए रे पगले !

अब तुम कुछ भी कहो दीनू काका, पर एक बात तो डंके की चोट पर कहता हूँ कि आचार्य जी के यहाँ अब कोई नहीं रहा। तुम और रुनु—दो रत्न थे, जो निकल आये।

कुछ सोचकर दीनू डाक्टर ने कहा—चल तेरी बात मान ली, लेकिन इधर उस दूसरे रत्न को लेकर कुछ गड़बड़ दिखाई दे रही है।

रुनु के बारे में कह रहे हो ?—उत्सुक हो उठा दीपेन।

हाँ—सबसे बड़ी दिक्कत तो यह है कि मैंने ही घटकी की थी। उस छोकरी को देखते ही माया देवी सब भूल गई थीं, बस रुनु और रुनु ! पागल हो गई थीं जैसे उसके लिए। शुरू में बड़े भैया राजी नहीं थे। माया देवी के मुँह पर ही उन्होंने कह दिया था कि सामन्ती परिवारों की ट्रेडिशन हमारे यहाँ अपवाद स्वरूप एक-दो को छोड़कर आमतौर पर गौरवशाली नहीं रही है। मेरी कन्या की शिक्षा-दीक्षा, रुचि-संस्कार दूसरी तरह के हैं। जो मेरे ख्याल से आप लोगों के

गुस्सा करके मुझे तो सैकड़ों बातें सुना डालीं तूने पर अब मेरी बात का जवाब दे। यह क्या सच है कि बाहर चोरी-छुपे तू रुनु से मिलता रहा है?

हाँ, सच है!—दीपेन ने जवाब दिया।

अब जैसे आपे से बाहर हो गये दीनू डाक्टर, बोले—स्टुपिड, अब बता रहा है यह बात? पहले से बता देता तो बात बढ़ती ही क्यों!—ठीक है! अब दूसरी बात बता कि हेमन्त को बिना बताये तुम लोग क्यों मिलते-जुलते थे?

हेमन्त को बताने से थोड़ी-सी दिक्कत आ जाती सामने इसीलिए—उसे नहीं बताया। निर्भय होकर जवाब दिया दीपेन ने।

आश्चर्य से मुँह खुला रह गया दीनू डाक्टर का। कल का छोकरा दीपू और उसकी यह स्पर्धा। बस इतना ही कह पाये वह, तो फिर सबकी जबान पर जो बात है, वह सच है? यह साधु-सन्यासीपना तेरा छद्मवेश है।

हँस पड़ा दीपेन। बोला, यह तो मैं नहीं जानता लेकिन हाँ, तुम्हारे मुँह पर रत्ती भर भी झूठ नहीं बोलूंगा दीनू काका।

नहीं बोलेगा ना? ठीक है; तो फिर मैं जरा आराम से बैठ जाऊँ—कहकर डाक्टर अच्छी तरह से बैठ गये और बोले—याद रखना! रोगी अगर पूरा हाल सही-सही नहीं बताता तो ठीक इलाज नहीं होता। सोच रहा हूँ तेरी चाची को साथ ले आता तो अच्छा रहता। इस बुढ़ापे में अब इन सब चीजों की तरफ ध्यान ही नहीं जाता—अब तो दूसरे की बातें सुनने में ही मजा आता है। चल अब बोल—

डाक्टर की बातों पर हँस रहा था दीपेन। लेकिन अब जरा गम्भीर हो गया। कुछ देर चुप रहा, जैसे सोच रहा हो कि कहाँ से शुरू करे—फिर बोला—लावण्य सीधी-सादी लड़की है, इसलिए रो पड़ती है बस। बाकी वह कुछ नहीं जानती। इस घृणित कहानी के नाटकीय पात्रों में छह जने हैं—जिनमें माया मौसी, हिरण मौसी, रुनु, मैं और—

और दो जने कौन हैं?—उत्सुकता से अधीर होकर डाक्टर ने पूछा।

वह लोग भारतवर्ष के नहीं हैं।

माने?—आश्चर्य से डाक्टर की आँखें फटी की फटी रह गई।

दीपेन बोला—हैं तो वे लोग आयरिश लेकिन रहते लंदन में हैं। यद्यपि इस नाटक का सर्वप्रधान चरित्र हेमन्त है, पर मुझे अभी तक यही विश्वास है कि—वह बिल्कुल अँधेरे में है।

आखिर यह सारा मामला है क्या? एक दुर्भेद्य रहस्य-सा लग रहा है सब कुछ! देख, जो कहना है साफ-साफ कह! पहेलियाँ तो बुझा मत तू!

कुछ देर चुप रहकर डाक्टर बोले—हाँ, उसका रोना सुनकर ही तो मैं तेरे पास दौड़ा आया। तुझे सारी बात बताता हूँ पर बुरा मत मानना दीपू।....ऐसा लगता है हमारे समाज में सब सड़-गल गया है। इसीलिए हर घर से दुर्गन्ध उठ रही है। भद्र-अभद्र, धनी-गरीब, शिक्षित-अशिक्षित—किसी को चैन नहीं है, इस दुर्गन्ध के कारण। पर छोड़ यह सब—असली बात तो यह है कि तुझे और रुनु को लेकर एक तूफान मचा दिया है उन लोगों ने—इसीलिए लावण्य फोन पर ही फफक-फफक कर रो पड़ी।

यद्यपि दीपेन नाबालिग नहीं है लेकिन तब भी वह कुछ समझा और कुछ नहीं समझा। डाक्टर के मुँह की तरफ देखता ही रह गया वह। थोड़ी देर बाद मृदुस्वर में बोला—तुम ठीक ही कह रहे हो दीनू काका। जिस ओर नजर पड़ती है मनुष्य की चरित्रहीनता दिखाई देती है। अब एक बहुत बड़ी क्रांति की आवश्यकता है, जिससे मनुष्य का यह गंदा खून थोड़ा-सा बह जाय और उन्हीं के अन्दर से खून से लथपथ रुनु और हेमन्त बाहर निकल आयें।

अब बता दीपू, तुझे कुछ पता है? प्यार से दीनू डाक्टर ने पूछा।

हाँ, जानता हूँ दीनू काका! लेकिन यही सोच रहा हूँ कि तुमसे कहूँ या नहीं कहूँ।

ऐसा क्यों दीपू? आश्चर्य से डाक्टर ने पूछा।

दीपेन बोला—मुझे डर लगता है दीनू काका और सिर्फ डर ही नहीं लगता, शर्म आती है, अपमान से सिर नहीं उठता मेरा। हाँ, इतना तुम्हें अवश्य बता दूँ कि रुनु को तुमने हाथ-पाँव बाँधकर कुएँ में डाल दिया है। जितना नुकसान तुमने रुनु का किया है उतना किसी ने नहीं किया। आज कौन-सा मुँह लेकर तुम मेरे सामने आये हो? तुम्हें तो हेमन्त के घर जाना चाहिए था और वहाँ जाकर रस्सी से माया मौसी व हिरण मौसी को बाँधकर खुद उनकी पीठ पर कोड़े लगाने चाहिए थे।

चुप कर दीपू! ऐसी बातें नहीं कहते। लेकिन देख, मैं हूँ पहले दरजे का बेवकूफ। तेरी एक भी बात मेरी समझ में नहीं आई। जरा खोलकर साफ-साफ बता सब!

गुस्से से दीपेन बोला—हाँ, आज नहीं, तुम उस दिन समझोगे जब भवेश काका के पास न जाकर रुनु तुम्हारे दरवाजे पर आकर जान दे देगी। उसी दिन तुम्हारे पाप का प्रायश्चित्त होगा। मेरे पास आकर तुमने गलती की दीनू काका।

चुप बैठे सुनते रहे डाक्टर। जब दीपेन अपनी बात पूरी कर चुका तो बोले—

नहीं आई थी ! तेरे पास यहाँ आये विना यह सव भला मैं कैसे जान पाता ? ऐसा प्रतीत होता है जैसे किसी गड्ढे से जहरीले साँप फन उठाये निकल पड़े हों और जो भी सामने मिला, डसते चले जा रहे हों।

लम्वी साँस खींच कर दीपेन वोला—सोचा था एक वार और रुनु को सावधान कर दूँ। उस दिन कई वार फोन पर वात करने की कोशिश की, लेकिन वह मिली ही नहीं।

मिलती कैसे ? रुनु तो अव मेरे यहाँ है। डाक्टर ने जवाव दिया।

तुम्हारे यहाँ ? तो इसका मतलव है वात वढ़ गयी ?

मैंने तो पहली वार तेरे मुँह से ही सारी वात सुनी है। नहीं तो तुझे तो पता ही है कि किसकी हिम्मत है जो रुनु के पेट से वात निकाल ले। करीव दो हफ्ते पहले एक दिन आधी रात को उसे दरवाजे पर हाज़िर देखकर हम चकित रह गये। पूछा, यह क्या, इतनी रात को ? और वस छोकरी हँसी से जैसे पागल हो गई ! वोली—घूमने आई थी यहाँ दीनू काका !—और इससे अधिक क्या मजाल जो मुँह से कुछ कहती। मैं उसे अच्छी तरह जानता हूँ दीपू ! गोद में खिलाया है उसे, लिये-लिये फिरा हूँ ! वड़ी कठोर व जिद्दी लड़की है रुनु !

मैं भी तो छुटपन से तुम्हारे हाथों पला हूँ दीनू काका, लेकिन आज मुझे भी इस मामले को लेकर तुम्हारे सामने लज्जित होना पड़ा। स्टेला हेमन्त से मिलने की जिद्द पकड़े वैठी है और इधर हेमन्त इस पूरे मामले का राई-रत्ती भी नहीं जानता। सवसे वड़ी वात तो यह है दीनू काका, कि तुमने, मैंने, रुनु ने, हेमन्त ने या स्टेला ने, किसी ने कोई अपराध नहीं किया, तव भी कदम-कदम पर हमें ठोकर खानी पड़ रही है।

और अपनी वात पर खुद ही हँस पड़ा दीपेन।

हाथ में वँधी घड़ी देखी डाक्टर ने और वोले—चल तो जरा मेरे साथ अभी ! काम तो नहीं है कुछ तुझे इस वक्त ?

ना, नहीं है। चलो—कहकर दीपेन उठ खड़ा हुआ और अलगनी से कुर्ता उतार कर पहनते-पहनते वोला—दीनू काका, अच्छा ही हुआ जो तुम आ गये। विना वात दो लड़कियाँ हमारी आँखों के सामने दुख उठा रही हैं और मैं हूँ कि सव देखते हुए भी डर कर भाग आया हूँ।

आश्वासन देते हुए डाक्टर ने कहा—डर कैसा रे ? जीवन का अर्थ ही युद्ध है। जो डरता है वह पीछे रह जाता है, मर जाता है। जिस वात को लेकर सव तेरी निन्दा कर रहे हैं, वही तो महत्त्वपूर्ण है ! उद्देश्य यदि वड़ा हो तो निन्दा से डर क्यों ? चल मेरे साथ—

अब दीपेन ने कहानी शुरू की; हेमन्त के योरोप प्रवास और उसका रेवरेंड टॉमस के सम्पर्क में आना, उनकी कन्या स्टेला से दीपेन व हेमन्त का परिचय, स्टेला के साथ हेमन्त की मित्रता, हेमन्त के स्वदेश लौटने पर स्टेला का उसे पत्र डालना और फिर उस चिट्ठी को हड़प लेने के बाद दोनों मौसियों का रुनु के खिलाफ षड्यन्त्र—एक-एक करके सारी बातें खोलकर रख दीं उसने दीनू डाक्टर के सामने।

लेकिन रुनु ने उनका क्या बिगाड़ा था ? उसके विरुद्ध यह षड्यन्त्र क्यों ? डाक्टर ने उत्सुकता दिखाई।

अरे, इतना भी नहीं समझे कि वह दोनों रुनु को घर से निकालकर हेमन्त का विवाह स्टेला से करना चाहती हैं ?

उत्तेजना से जैसे संयम खो बैठे डाक्टर ! चिल्लाकर बोले—तुझे कैसे पता चला यह ? स्टेला के साथ हेमन्त का विवाह करने में तेरी माया मौसी का क्या स्वार्थ है भला ?

देखो, मेरे ऊपर तो आग-बबूला होओ मत दीनू काका ! समझे ! स्टेला को घर में लाने के बाद क्रिश्चियन धर्म अंगीकार करके उसके पिता जी के साथ आसानी से विलायत जाया जा सकता है ! समझे या अभी और कुछ सुनना है ?

इसका प्रमाण क्या है ?

चिट्ठियों का एक बंडल। इसी विपत्ति से बचाने के लिए मैं रुनु से लुक-छिप कर मिलता था। यहाँ भी आ चुकी है वह दो बार।

डाक्टर के मुँह पर जैसे ताला पड़ गया। चुप बैठे रहे वह ! उनको चुप देखकर फिर से दीपेन बोला—मेरी अभी भी यही धारणा है कि हेमन्त इन सारी बातों से बिल्कुल अनभिज्ञ है !

अँ....जैसे सोते से चौंक कर जाग पड़े डाक्टर। बोले—यह क्या कह रहा है तू ?

जरा विरक्त होकर जवाब दिया दीपेन ने—अब और यदि कुछ जानना चाहते हो तो जाओ और रुनु से पूछो जाकर। तुम जानते ही हो दीनू काका कि इन सब बातों से मेरा मन अशान्त हो जाता है ! ऐसी गन्दगी में रहना मुझे पसन्द नहीं—मैं तो बस अपनी पढ़ाई-लिखाई लेकर सबकी नज़रों से दूर एकान्त में नितान्त अकेला रहना चाहता हूँ। समझे दीनू काका ?

अब उठ खड़े हुए डाक्टर। इस आलोचना-प्रत्यालोचना के बाद हास-परिहास का वातावरण नहीं रह गया था। बोले—देख रहा हूँ कि अन्याय की जटिल गति समझना बड़ा ही मुश्किल है रे ! तकदीर अच्छी थी कि तेरी चाची साथ

सुन्दरता ? कटहल, आम आदि के पेड़ किसी ने काट लिये थे—वह घनी छाया जिसके नीचे बैठते ही लोगों की आँखें झपक जाती थीं, अब नहीं रही थी। रात की रानी, विगुनबेलिया, टगर, प्रिमरोज़ आदि के लिए प्रसिद्ध था कभी यह बगीचा; लेकिन आज ट्रकों के पहियों के नीचे दबकर सब जैसे अंतिम घड़ियाँ गिन रहे थे। प्यार से सींचा गया था एक-एक पौधा और आज उसकी यह परिणति ! हतचकित रह गये दीपेन और दीनू डाक्टर दोनों।

अपरिचित लोगों में किसी जाने-पहचाने व्यक्ति को ढूंढ़ने की कोशिश कर रही थीं दोनों की नजरें। सोच ही रहे थे कि किसी से पूछें कि सामने के छोटे कमरे से सुनील निकलता दिखाई दिया। लपककर उसके पास पहुँचे दीनू डाक्टर और उत्सुकता से पूछा—मामला क्या है सुनील ?

भद्र व संयत स्वभाव का आदमी था सुनील। करीब तीन साल हो गये उसे यहाँ की नौकरी करते लेकिन वह अलग ही रहता था इन सब बातों से। दूसरे की बातों में उत्सुकता दिखाने की आदत नहीं थी उसे। मुस्कुरा कर बोला—अब आप ही देखिए कि—हेमन्त के नये ठिकाने का पता सुनील बताने जा ही रहा था कि डाक्टर ने बीच में ही उसे रोककर पूछा—मनोहर कहाँ है ?

मुंह उठाकर डाक्टर की तरफ देखा सुनील ने फिर कुछ सोचकर बोला—वह हवालात में है आजकल !

हवालात में ? कह क्या रहे हो तुम सुनील ? चोरी-वोरी का मामला तो नहीं था ? अधीर होकर एक ही साँस में सारे प्रश्न कर गये डाक्टर।

हाँ, कुछ ऐसी ही बात है। सुनील ने जवाब दिया।

जरा दूर नजर पड़ते ही चौंक पड़े दीनू डाक्टर ! बोले, ये इधर कोठरियों का यह हाल कैसे हो गया ? धुएँ के दाग, दीवालों में दरार—

उस दिन माधव की कोठरी में आग लग गई थी। निःस्पृह भाव से जवाब दिया सुनील ने ?

आग लग गई थी ?—अब की बार दीपेन बोला आश्चर्यचकित होकर—यह कैसे ? कोई था तो नहीं अन्दर ?

पहले तो सुनील ने बताना नहीं चाहा पर फिर जरा दुविधा में पड़कर बोला—आधी रात के बाद लगी थी आग। अन्दर माधव और यशोदा थे।

यशोदा ! यह तुम कह क्या रहे हो ? फिर क्या हुआ साफ-साफ बताओ। डाक्टर ने कहा।

हाँ। आग कोठरी के अन्दर लगी थी। खिड़की यद्यपि खुली हुई थी, लेकिन बाहर से न जाने किसने साँकल चढ़ा दी थी। वह लोग बच तो गये हैं पर बहुत

बाहर आकर दोनों गाड़ी में बैठ गये। बैठते-बैठते डाक्टर बोले—दो मरीज मेरी प्रतीक्षा में बैठे होंगे, उन्हें निपटाता चलूँ!

हेमन्त के आफिस में पहुँचने पर पता चला कि महीने भर की छुट्टी लेकर वह पत्नी के साथ कहीं चेंज के लिए गया है। करीब तीन सप्ताह बाद आफिस जॉयन करेगा। विश्वास करने वाली बात तो थी नहीं, इस पर आफिस के एक कर्मचारी ने बाहर आकर कहा कि यद्यपि आफिस के रिकार्ड में तो यही बात दर्ज है और सबको यही बताना भी पड़ता है, लेकिन मि० मैत्र के कलकत्ते में होते हुए भी हमें उनके नये ठिकाने का पता मालूम नहीं है!

नया ठिकाना! कुछ भी नहीं समझ पाये दीनू डाक्टर और दीपेन। आकर गाड़ी में बैठ गये फिर से। नया ठिकाना कैसे ढूंढ़ा जायेगा अब? यह कह क्या गया छोकरा? अपना पुश्तैनी मकान छोड़ कर आखिर जायगा कहाँ हेमन्त? और फिर यह विराट, विशाल, मीलों में फैला शहर कलकत्ता? क्या भूसे के ढेर में से आलपिन ढूँढ़कर निकालना पड़ेगा? ना, यह सम्भव नहीं है।

चल उसके घर चलकर देखा जाये एक बार।—दीनू डाक्टर ने कहा—हेमन्त नहीं भी होगा तो उसकी माँ तो मिलेगी।—और गाड़ी घुमाकर स्पीड बढ़ा दी उन्होंने।

दीपेन बोला, लेकिन वहाँ मैं गाड़ी से नीचे नहीं उतरूँगा दीनू काका। मैं माया मौसी का मुँह तक नहीं देखना चाहता।

यह सुनते ही जोर से हँस पड़े दीनू डाक्टर और बोले—अभी तक बच्चे ही हो तुम लोग। अरे तू यदि निर्भय होकर दुष्ट शक्ति का सामना नहीं कर सकता तो संन्यास कैसे लेगा भला? संसार का बुरे से बुरा पाप और बड़े से बड़ा पुण्य पता है कहाँ छुपा रहता है? अपने अन्दर। अब अगर तेरा दिल साफ है, पवित्र है तो फिर घृणा-डर का क्या काम?

जैसे ही गाड़ी हेमन्त के घर के फाटक पर पहुँचकर रुकी तो चार-पाँच ट्रक अन्दर लाइन से खड़े दिखाई दिये और करीब बीस-पच्चीस मजदूर इधर से उधर उधर से इधर जाते-आते दिखाई दिये। उन्हीं के बीच चार-पाँच एंग्लो-इंडियन साहब व तीन-चार सिंधी-भाटिया भी आपस में बातचीत कर रहे थे। हो-हुल्लड़-सा मचा हुआ था हर तरफ। ट्रकों के अन्दर जाने व घूमने की वजह से फूलों से लदा सुन्दर बगीचा तहस-नहस हो गया था। गाड़ी बाहर ही खड़ी करके दोनों अन्दर की तरफ चले। सालों से इस घर का नाम मशहूर था, इसके बगीचे का नाम सुनकर हजारों आदमी आये होंगे इसे देखने लेकिन कहाँ गई इस बगीचे की

बोला—कुछ दिन ऐसे रह कर भी देखा जाये दीनू मामा, तो बुरा क्या है ? सोचता हूँ मैं भी दीपेन का साथी वन जाऊँ अव।

हँसकर दीपेन बोला—माँ-बहन-वीवी के रहते मेरा साथी वना नहीं जाता हेमन्त !

उत्सुकता का भान करते हुए डाक्टर ने पूछा—क्यों रे हेमन्त, माया दी दिखाई नहीं दे रही हैं ?

सिर नीचा करके जरा गंभीरता से हेमन्त बोला—मैं भी कई दिनों से नहीं देख रहा हूँ। या तो तुम्हारी हिरण दी के यहाँ होंगी या फिर—

उसके कहने का ढंग देखकर डाक्टर ने आगे बात वढ़ाना उचित नहीं समझा। चारों ओर लोगों को सामान इधर से उधर करते देखकर बोले—विघटन तो समझ गया लेकिन यह सव क्या हो रहा है रे ? तूने क्या यह सव बेच-खोच दिया है ?

हाँ दीनू मामा, घर खाली किये दे रहा हूँ। लेकिन यहाँ मैं बेचने वाला हूँ बेचने वाला, खरीदने वाला नहीं—पुराना सव कुछ बेचे दे रहा हूँ, कुछ नहीं रक्खूंगा। यह मकान भी दो दिन हुए बेच दिया है—वह देखो, मालिक लोग पॅजेशन लेने के लिए आ गये हैं। सारे सामान के साथ ज्यों का त्यों रसेल एक्स-चेंज ने खरीद लिया है।

यह क्या किया रे तूने ? इतने पुराने सामन्ती वंश का वंशज है तू—दो सौ साल पुराना होने को आया यह मकान—यह सब बेच-खोच कर तू रहेगा कहाँ ?

अवाध अन्तहीन मुक्त पथ सामने है दीनू मामा। और ठहाका मार कर हँस पड़ा हेमन्त। तभी उधर से कुछ साहव लोग आकर उसे वुलाकर ले गये। शायद कुछ पूछना-ताछना था उन लोगों को।

हेमन्त के चले जाने पर दोनों बैठे मन ही मन पूरी चीज का तारतम्य मिलाने की कोशिश कर रहे थे कि नारायण आकर बोला—आप लोगों के लिए चाय का पानी चढ़ा दिया है मामा बाबू।

अरे तू अभी तक यहीं है नारायण ? और सारे नौकर-चाकर कहाँ चले गये ?

आनन्द से विभोर नारायण वोला—वावू ने सवको निकाल दिया है। देवानन्द को कुछ नहीं मिला तो वर्तन ही लेकर रातों-रात गायव हो गया। रामसेवक कहीं जाकर छुप गया है। मनोहर आजकल जेल की चक्की पीस रहा है और ऊपर

ही ज्यादा जल गये हैं। हाय-तोबा मचने पर जब आँख खुली तो मैंने जाकर साँकल खोली। अस्पताल में हैं अब दोनों। मालकिन गुस्से से घर छोड़कर हिरण मौसी के यहाँ रहने के लिए चली गई हैं। धीरे-धीरे सब बता दिया सुनील ने।

सारी बातें गोरख-धन्धे सी लग रही थीं दोनों को। इतना आकस्मिक यह उलट-फेर—विश्वास नहीं हो रहा था दीपेन व डाक्टर को।

उनको जैसे का तैसा खड़ा देख सुनील बोला—मि० मैत्र घर में ही हैं आप लोग अन्दर चले जाइए।

हेमन्त है अन्दर? तब तो अच्छा ही है! उसी को तो ढूंढ़ते फिर रहे हैं हम। आ जा दीपू।—डाक्टर दीपेन को साथ लेकर लोगों को बीच से निकलते हुए आगे बढ़ने लगे। यह सारी परिस्थिति उन दोनों को केवल रहस्यजनक ही प्रतीत नहीं हो रही थी बल्कि शुरू से आखिर तक एक विद्रोह-सा दिखाई दे रहा था। और सबसे आश्चर्यजनक बात तो यह थी, विगत दो सप्ताहों में रुनु के मुँह से इस तरह पूरी चीज का आभास तक नहीं मिला था।

सोचते-सोचते दोनों जीना चढ़कर ऊपर पहुँच गये। वहाँ भी दस-बारह मजदूर एवं दो साहबों को देखकर जरा डरते-डरते उन लोगों की बगल से निकलकर जैसे ही दोनों हेमन्त वाले हिस्से में पहुँचे कि सामने मुस्कुराते हुए हेमन्त को खड़े पाया। अभ्यर्थना के लिए हाथ जोड़े हेमन्त ने आगे बढ़कर।

हेमन्त, यह सब क्या देख रहा हूँ मैं?

नीचे झुककर डाक्टर के पाँव छूते हुए हेमन्त ने जवाब दिया—विघटन, दीनू मामा।

विघटन! डाक्टर जैसे कुछ देर के लिए अपने में ही डूब गये।

दीपेन हेमन्त से बोला—सुना है, तुम मुझसे बहुत गुस्सा हो?

जोर से हँसकर हेमन्त ने दीपेन की कोली भर ली और बोला, हाँ, दोनों की मित्रता में दरार डालने की कोशिश तो की थी बहुतों ने लेकिन मैंने पड़ने नहीं दी। तुम निश्चिंत रहो दीपेन।

बहुत दिन बाद आज फिर दोनों मित्र सारी दुनिया को भूलकर अपनी बातों में खो गये।

रुनु की बात किसी ने नहीं उठने दी। सिर से पैर तक हेमन्त की ओर एक बार नजर डालकर डाक्टर ने कहा—तू तो हर वक्त फिट-फाट साहब बना रहता था, अब क्या हो गया जो यह हाल बना रक्खा है? जाने कब से दाढ़ी नहीं बनी है? कपड़े भी इतने मैले पहन रक्खे हैं?

अपनी सदा की आदत के अनुसार हा-हा करके हँस पड़ा हेमन्त; फिर

बिक्री का भी काफी रुपया आया होगा। आखिर इस रुपये के पहाड़ का क्या करेगा? जरा यह भी तो सुनूं।

इसका एक पैसा भी मेरा अपना नहीं रहेगा दीनू मामा!

तो क्या दान कर देगा? राजेन मल्लिकों की तरह दान-यज्ञ कर रहा है या रामकृष्ण मिशन की तरह तू भी कोई मिशन बना रहा है?

अभी कुछ तय नहीं किया है। लेकिन हाँ, यह बात मैं अवश्य अच्छी तरह समझ गया हूँ कि इस रुपये में युग-युगान्तर की गन्दगी व कलंक लगा हुआ है।

लेकिन सब छोड़-छाड़कर तू जायेगा कहाँ? योरोप या अमेरिका?

हँसकर हेमन्त बोला—धोती-कुर्ता और चप्पल पहने यदि पाँवों से चलकर वहाँ जाया जा सकेगा तो चला जाऊँगा।

क्या कहने हैं? अभी तक तेरा रोमांस गया नहीं! लेकिन हेमन्त, यह मत भूल कि चाँदी का चम्मच मुँह में लेकर जन्मा था तू। दुख किसे कहते हैं यह आज तक तूने नहीं जाना। हाथों-हाथ पला है तू। एक मुट्ठी भात के लिए आँसू नहीं बहाने पड़े कभी तुझे। मोटर में जाते हुए कभी तेरी नजरों में वह निराश्रित रिफ्यूजी नहीं पड़े जो अपनी झोपड़ियों पर फूस तक न डाल पाने के कारण सारी रात बारिश में भीगते हुए बैठकर काट देते हैं। चल छोड़ यह सब बातें। बेवकूफ मत बन ज्यादा।

तो फिर तुम क्या करने को कहते हो?

मैं क्यों बताऊँगा कि क्या करना चाहिए तुझे? तू कोई दूधपीता बच्चा तो है नहीं।—लेकिन हाँ, इसका मुझे पूर्ण विश्वास है कि झूठी निन्दा व मिथ्या आरोप के कारण ही रुनु यहाँ से चली गई है। हो सकता है वह अब कभी न लौटे! पर एक बात तुझे बता दूँ कि तू रुनु को आज तक नहीं पहचान पाया। वह एक बिलकुल अलग किस्म की लड़की है, उसकी शिक्षा-दीक्षा, रुचि-संस्कार आम औरतों से नहीं मिलते, बिलकुल दूसरी तरह के हैं। वह तुम्हारी सम्पत्ति की फूटी कौड़ी भी नहीं छुएगी। मैं उसे अच्छी तरह जानता हूँ रे। तूने उसका प्यार, स्नेह, दायित्व, कर्तव्य तो देखा है पर अभी तक उसकी घृणा नहीं देखी। तलवार की धार से भी तीक्ष्ण है उसकी घृणा।

चुप रहा हेमन्त। तीन-चार मजदूरों ने उसके कमरे से तीन ट्रंक, चार बड़े सूटकेस और एक बड़ा लकड़ी का क्रेट लाकर बाहर रक्खा। बस, इन्हीं में हेमन्त का सब कुछ था। अस्थावर सम्पत्ति के रूप में बस यही रह गये थे उसके अपने कहने को।

आते हुए बगीचे में बनी वह कोठरियाँ तो देखी ही होंगी ? आग लगने से औरत-मर्द दोनों जले पड़े हैं अस्पताल में—शायद ही बचें ।

और बाहर से साँकल शायद तूने ही चढ़ाई थी, क्यों ?—मजाक किया दीनू डाक्टर ने ।

धत्, मैं क्यों चढ़ाता ? ठहरिए मैं चाय ले आऊँ—यह कह कर नारायण ऊपर तिमंजिले की तरफ भाग गया । प्रमाण है कुछ, जो कोई उस पर सन्देह करेगा ? उसे क्या पता ? बगल की कोठरी में रामसेवक ही तो था । वह क्यों अचानक इस तरह गायब हो गया ?

हेमन्त के लौटकर आते ही डाक्टर ने पूछा—क्यों रे हेमन्त, तूने क्या दोनों गाड़ियाँ भी बेच दीं ?

हाँ दीनू मामा ! गाड़ी रखने का मतलब ही सम्पदा का अहंकार है । और फिर उसके अलावा आजकल के जमाने में किसी भी तरह की सम्पत्ति रखना पाप है । मैं सब खत्म करना चाहता हूँ ! ताकि मेरे अन्दर रत्ती भर भी आत्माभिमान न रहे ।

दीपेन चारों तरफ न जाने क्या देखता फिर रहा था । मौका देखकर डाक्टर ने असली बात उठाई—रुनु को तेरे इस सारे कांड का पता है ?

शायद नहीं जानती ।

वह है कहाँ ?

मुँह उठाकर देखा हेमन्त ने डाक्टर के मुँह की ओर ! नहीं, उसकी आँखें अभी नहीं छलछलाईं । सँभाल लिया उसने स्वयं को और शान्त स्वर में बोला—इतना तो मैं जानता हूँ कि बाप के घर जाने वाली लड़की वह नहीं है । इसलिए सोच रहा था कि तुम्हें फोन करूँ, शायद तुम्हें उसके बारे में कुछ पता हो ।

दया आ गई यह सुनकर दीनू डाक्टर को । मन में आया बता दें पर फिर रुनु के निषेध का ख्याल आ गया तुरंत । बोले—यहाँ आने से पहले तेरे आफिस में गया था, पता लगा तू किसी और जगह रहने लगा है ?

हाँ, लेकिन अब वहाँ भी नहीं रहूँगा । यहाँ का यह सब झंझट खतम करके नौकरी छोड़कर चला जाऊँगा मैं दीनू मामा ।

कुछ देर के लिए चुपचाप एकटक देखते रहे दीनू डाक्टर हेमन्त की ओर । लगता था लड़के का दिमाग ठिकाने नहीं है । निराशा से व्यर्थता का बोध आता है । और यहाँ बेपरवाह जीवन का पूर्वाभास दिखाई देने लगा था । बोले—जहाँ तक मुझे जानकारी है, तू काफी रुपये का मालिक है और फिर इस सम्पत्ति की

धीरे से डाक्टर बोले—तू ठीक कह रहा है दीपू, यही करेंगे। इसीलिए तो कहता हूँ कि पुराने को नये के पीछे-पीछे चलने दे।

हँसते-हँसते दोनों जने नीचे उतर आये। हेमन्त तैयार खड़ा था। डाक्टर ने कहा—सुन रहा है हेमन्त, मैं अभी कह रहा था कि जितना बुड्ढा होता जा रहा हूँ, बुरी आदतें बढ़ती जा रही हैं। अर्थात्, तू जानता है कि मैं लोगों को सीख देता क्यों फिरता हूँ ?

हँसकर हेमन्त ने पूछा—क्यों ?

क्योंकि मुझे खुद को कुछ नहीं आता-जाता। बुद्धि कुंद होती जा रही है दिन पर दिन।

और हेमन्त व दीपेन दोनों दिल खोलकर हँस पड़े। बगीचा पार करते-करते डाक्टर ने फिर कहा—पैंतीस सालों से इस घर में आना-जाना रहा है मेरा। उस वक्त तेरे दादा नव्वे साल के बूढ़े थे! धीरे-धीरे पुराना चला जाता है, पुराने को तोड़ते-तोड़ते नया पूरी तरह अपना अस्तित्व जमा लेता है। लेकिन उस काल के इतिहास के साथ पुराना जुड़ा रहता है इसीलिए उसको छोड़ते हुए दिल को धक्का सा लगता है। आज इस घर से जाते हुए ऐसा लग रहा है जैसे इस घर के साथ-साथ मेरे पितामह ने भी विदा ले ली।

एक हाथ में तीन प्याले और दूसरे हाथ में चाय की केटली लेकर नारायण नीचे उतर आया और तीनों के हाथ में प्याले पकड़ा कर चाय डाल दी।

दीपेन बोला—इस तरह का विघटन देखने में भी मजा आता है, क्यों? सिर्फ विघटन ही नहीं, तुम्हारे पुराने ट्रेडीशन भी इसके साथ-साथ खतम हो गये हेमन्त।

चाय का घूंट भर कर हेमन्त बोला—अच्छा ही हुआ दीपेन। बोझा हलका हो गया।

अब दीनू डाक्टर बोले—असल में तो मुझे तुमसे कुछ जरूरी काम था, इसलिए आया था, पर आज तो तू बहुत व्यस्त है—

नहीं-नहीं दीनू मामा! बल्कि आज तो मुझे कोई भी काम नहीं है, बिलकुल खाली हूँ। अब तो यहाँ रहने का भी मुझे अधिकार नहीं रहा। बहुत से बहुत शाम तक रह सकता हूँ बस। रुपये-पैसे का लेन-देन सब हो चुका है। बस यह अपना सामान उठाना है यहाँ से। तुम बताओ ना! क्या काम है?

अगर तुझे समय हो तो करीब दो घंटे के लिए एक जगह साथ ले जाना था तुझे। दीपेन को भी साथ ले लेता।

तो चलो फिर—मैं यहाँ सामान की देख-रेख के लिए नारायण को छोड़ जाता हूँ।

इसी भेष में चलेगा? हँसकर डाक्टर ने पूछा।

जरा गम्भीर बनकर हेमन्त बोला—अगर इस वेश में तुम्हारे सामने खड़ा हो सकता हूँ दीनू मामा तो दुनिया में हर जगह मुझे खड़े होने का स्थान मिल जायेगा। ठहरो, मैं कह आऊँ जरा—

बरांडा पार करके सीढ़ियाँ उतर गया हेमन्त।

दीपेन ने पूछा—तुम क्या उसे रुनु के पास ले जा रहे हो दीनू काका?

डाक्टर बोले—ना। मैं सोच रहा था कि हम दोनों को भी जरा अपने फादर टॉमस से मिला देता तू। देख, अब तुझसे तो क्या छुपाऊँ, उस मामले को लेकर अभी भी मेरे मन में कुछ सन्देह बाकी रह गया है। सारी बात बिना पूरी तरह से समझे कुछ कर नहीं पा रहा हूँ।

बिलकुल ठीक है! मैं स्वयं यही सोच रहा था दीनू काका। लेकिन मेरा ख्याल है कि हेमन्त को पहले से कुछ बताना ठीक नहीं है—सीधे फादर के फ्लैट पर ले चलना चाहिए। पता चलने पर अगर रास्ते में ही अड़ गया तो मुश्किल हो जायेगी—

नीचे से हेमन्त ने आवाज दी उन लोगों को।

डाक्टर के इस परिहास पर हेमन्त के साथ-साथ दीपेन भी हँसते-हँसते दुहरा हो गया!

खाने का तो बहाना था, असली बात तो वक्त काटना था, यह दीपेन और डाक्टर दोनों ही जानते थे। हेमन्त की वेशभूषा यद्यपि भले आदमियों में बैठने लायक नहीं थी लेकिन और उपाय भी तो नहीं था कुछ। उस पर लग रहा था जैसे हेमन्त बराबर कुछ सोचता चला आ रहा है। पहले जो कभी नहीं देखी गई, ऐसी एक अस्वाभाविक कठोरता-सी दिखाई दे रही थी उसके चेहरे पर। प्रादेशिक भाषा में उसे 'लाड़ला' बेटा कहते थे सब जिसके फलस्वरूप उसके चेहरे पर परितृप्ति का एक ऐसा लावण्य, एक ऐसी सौम्यता थी जो आमतौर पर लड़कियों के चेहरे पर दिखाई देती है और अब दिखाई दे रही थी रुक्षता—मानों उपेक्षा के कारण मलिन पड़ गया हो वह, मन-ही-मन की गई किसी प्रतिज्ञा की कठोरता आँखों में उतर आई हो। रातोंरात लड़का इतना बदल गया था कि पहचान में भी नहीं आ रहा था।

खाने-पीने व हास-परिहास में एक घंटे से भी अधिक समय निकल गया। वह लोग जिस वक्त होटल से बाहर निकले दो बज चुके थे। जाने का ठीक टाइम था यह। गाड़ी में बैठने के बाद दीपेन ने सुनील से कहा कि गाड़ी घुमाकर पीछे ले चलो और बायें हाथ को रसेल स्ट्रीट में मुड़ जाना।

यों तो सुनील कलकत्ते के सारे रास्ते जानता था तब भी दीपेन को थोड़ा बहुत बताना पड़ा, और फिर डाक्टर व हेमन्त ने देखा कि एक विशाल छहमंजिली इमारत के अन्दर ले जाकर सुनील ने गाड़ी खड़ी कर दी। सबसे पहले दीपेन उतरा। सुनील को वहीं छोड़कर आगे बढ़े तीनों। चलते-चलते दीपेन बोला—जिनके पास तुम्हें ले जा रहा हूँ हेमन्त, वह अपरिचित नहीं हैं तुम्हारे लिए; लेकिन तुम्हारी इस बार की परीक्षा जरा नाटकीय-सी है, समझे भाई? तुम पुरुष हो लेकिन यह बात मत भूल जाना कि जीवन के मामले में पुरुष के हाथ में ही उसका अंतिम फैसला होता है।

मुस्कुरा कर हेमन्त बोला—मैं तुम्हारी बात ठीक से समझ नहीं पाया दीपेन!

जबाब में दीपेन भी पहले तो जरा हँसा, फिर बोला—एक दिन तुम्हारी पत्नी रुनु भी नहीं समझ पाई थी कि सबकी चोरी से क्यों यहाँ लाया था उसे।

अचानक सावधान हो गया हेमन्त—मानो किसी तीक्ष्ण धार से, बिजली की गति से उसका हृदय चीर कर रख दिया हो किसी ने। रुनु के सम्बन्ध में इला का कुत्सित इशारा याद आ गया उसे। उसने पूछा—सबकी चोरी से? मतलब?

दोनों के पास ही खड़े थे डाक्टर।

: : ९ : :

एक वज रहा था। दीपेन जानता था कि यह साहव लोगों के लंच का समय होता है अतः इस वक्त जाना उचित नहीं होगा। वोला—दीनू काका, वहुत दिन हो गये तुम्हारी जेव पर डाका नहीं पड़ा। सुना है आजकल वड़े-वड़े डाक्टरों ने पकड़े जाने के डर से वैंक में रुपया रखना वंद कर दिया है।

यह घुमाकर नाक क्यों पकड़ रहा है? सीधे-सीधे वोल ना कि तेरे मन में क्या है?

हेमन्त को मजा आ रहा था इस वार्तालाप में। दीपेन वोला—तुम्हारे एक तरफ भतीजा है और दूसरी तरफ भांजा और यह तो तुम जानते ही होगे कि भतीजे-भांजे हमेशा से मामा-काकाओं की जेव पर हाथ साफ करते आये हैं!

चल मान लिया, पर देख कहीं स्टेथेस्कोप पर भी हाथ साफ मत कर देना! लेकिन अव ये पहेलियाँ छोड़—असली मतलव की वात वता, क्या है?

स्टीयरिंग पर वैठा सुनील भी हँस रहा था। हेमन्त वोला—अभी तक नहीं समझे इसका मतलव? असल में यह इस वक्त तुम्हारी जेव काटकर अपना पेट भरना चाहता है।

मजाक करते हुए डाक्टर वोले—अच्छा, यह वात है। लेकिन तुम लोग वड़े खाऊ हो गये हो। मैं तो सोच भी नहीं सकता था कि चाय पीकर भी किसी का पेट खाली रह जाता है! सुनील, जरा और आगे चलकर वायें हाथ को गाड़ी रोक देना।

पार्क स्ट्रीट के एक होटल के पास आकर गाड़ी खड़ी हो गई। अच्छा मनपसन्द होटल था तीनों जने अन्दर घुसे। दीपेन वोला—मैं पहले ही कहे देता हूँ दीनू काका कि तुमने जान-वूझ कर कंधे पर शैतान को वैठाया है। देखो, पीछे पछताना मत।

हाँ, मैं जानता हूँ—स्वर को वड़ा ही करुण वनाकर डाक्टर वोले—एक तो त्र्यहस्पर्श का दिन और उस पर तीन व्राह्मणों की यात्रा। खाना अगर हजम हो जायेगा तो भाग सराहूँगा अपना।

हेमन्त चुप खड़ा माँ की तरफ देख रहा था। दीपेन बोला—यहाँ जरा धीरे बोलो हिरण मौसी !

यह मुझे सिखाने की जरूरत नहीं है दीपेन। समझे ? मुझे भी पता है कि यह साहबों का मुहल्ला है। लेकिन देख रही हूँ कि तुम घट-घट में हो। व्यंग व तीखापन छुपा नहीं पाई हिरण्मयी।

हाँ हिरण मौसी। मेरा नाम है सर्वेश्वर घटक। आओ तुम लोग मेरे साथ—हेमन्त और दीनू डाक्टर को इशारा किया दीपेन ने।

लाउंज के बगल से निकल कर तीनों जने एक पतली कॉरीडोर में चले गये और दरवाजे पर पहुँच कर घंटी का बटन दबाया दीपेन ने।

कम इन—अन्दर से आवाज आई।

थोड़ा-सा दरवाजा खोलकर दीपेन ने अन्दर झाँककर देखा—स्टेला व फादर टॉमस आमने-सामने बैठे थे। बाहर खड़े-खड़े ही दीपेन बोला—मेरे साथ दो जने और हैं फादर, जो आपसे मिलने आये हैं।

यह तो बड़ी खुशी की बात है—कहकर दोनों बाप-बेटी उठकर दरवाजे पर आ गये। हेमन्त और स्टेला अचानक इस तरह एक दूसरे को देख ठिठक कर चुप खड़े रह गये।

हाउ स्ट्रेंज—स्टेला ने चुप्पी तोड़ी। मैंने तो आशा छोड़ ही दी थी तुमसे मिलने की ! लेकिन—

तुरत हेमन्त ने सँभाल लिया अपने को और दीनू डाक्टर के साथ उन लोगों का परिचय करा दिया। आनन्द-उल्लास से विभोर स्टेला ने सबसे हाथ मिलाकर फादर से कहा—मैंने कहा था न पिता जी कि चौधरी एक दिन हेमन्त को जरूर पकड़ कर ले आयेगा यहाँ !

एक तो हेमन्त का रुक्ष चेहरा और ऊपर से शायद पन्द्रह बीस दिनों से दाढ़ी नहीं बनी थी। कपड़े मैले तो थे ही ऊपर से अभी खाना खाते हुए साग गिर जाने से कुर्ते पर हल्दी के दाग लग गये थे। यह वही हेमन्त था जिसकी साहबी स्मार्टनेस मशहूर थी। आश्चर्य-चकित, एकटक उसकी ओर देख रही थी स्टेला, मानों हेमन्त नहीं कोई और ही आदमी था जिसे वह लाख कोशिश करने पर भी पहचान नहीं पा रही थी।

फादर बोले—डाक्टर, आपके बारे में सुना तो बहुत था दीपेन के मुँह से लेकिन सौभाग्य से आज आपके दर्शन भी हो गये। यों तो हमारे वापस लौटने का समय निकल चुका लेकिन स्टेला की वजह से मुझे मजबूर होकर रुकना पड़ा। इसने जिद्द पकड़ रक्खी थी कि हेमन्त से बिना मिले नहीं जायेगी।

दीपेन बोला, हेमन्त तुम हो गृहस्थ आदमी। मैं अवश्य अभी तक वैचेलर हूँ लेकिन तब भी बहुत सी बातें जो तुम नहीं जानते मैं जानता हूँ—जानते हो औरत के जीवन में मूल संकट कहाँ उपस्थित होता है? तुम्हारी माँ, मौसी ने उसके जीवन को नष्ट करना चाहा था। आभास मिलते ही मैं सबके अगोचर उसे बचाने के लिए सामने आकर खड़ा हो गया। फलस्वरूप दो-चार कुत्तों ने मेरे पाँव में भी दाँत गड़ा दिये हेमन्त।

और उसकी बात पूरी की डाक्टर ने, लेकिन कितना अभागा है तू! तब भी रुनु का मान-सम्मान नहीं बचा पाया तू दीपेन, यह हेमन्त जानता है! लेकिन इसके बावजूद भी यदि यह डूबा हुआ जहाज कोई सालवेज करके निकाल सकता है तो बस तू ही निकाल सकता है दीपेन!

उस धूप में लॉन पर खड़े-खड़े जैसे हेमन्त किसी विस्तृत रहस्य-जाल में फँस गया था। अचानक मानों प्रकाश की किरण देखकर चेहरा खिल उठा उसका। स्वयं को रोक न सका वह, पूछ ही बैठा—रुनु क्या यहाँ है दीनू मामा?

तुझे क्या रुनु के अलावा कहीं कुछ दिखाई ही नहीं देता? तू ऐसा कैसा पति है रे जो अपनी सुन्दर बहू को सँभाल कर नहीं रख सका? आखिर घर से भाग गई छोकरी! जरा धमकाया दीनू डाक्टर ने।

हा-हा करके हँस पड़ा दीपेन। बोला—दीनू काका, उसी उम्र में तो भाग कर बहुएँ जान छुड़ाना चाहती हैं—चलो बहुत बातें हो गईं, आओ अब—

तीनों जने लिफ्ट से पाँचवीं मंजिल पर पहुँचे। कहीं कोई दिखाई नहीं दे रहा था, किसी तरह की आवाज नहीं आ रही थी। पहले तो उन लोगों ने इधर-उधर नजर दौड़ाई फिर एक ओर को पाँव बढ़ाये। लेकिन लॉबी पार करके जैसे ही वह लोग लाउंज में पहुँचे कि कदम जहाँ के तहाँ रह गये, मानो साँप सूँघ गया हो सबको। सामने ही माया देवी और हिरण्मयी बैठी थीं।

अब यहाँ क्या करने आये हो तुम लोग?—फुफकारती हुई बोलीं हिरण्मयी—जहाँ जाओ जासूस की तरह पीछे लगे रहते हैं!

प्रश्न के उत्तर में हँसते हुए उलट कर प्रश्न किया दीनू डाक्टर ने—और तुम्हीं लोग यहाँ किस मतलब से बैठी हो भला?

हेमन्त को देखते ही माया देवी ने मुँह दूसरी ओर फिरा लिया था। हिरण्मयी बोलीं—सुनो इसकी बात। दीनू, तुम्हारे बाल पक गये पर अक्ल नहीं आई। साहब लोगों से दो-चार बात करने के लिए आकर हम बैठे ही थे कि सूँघते-सूँघते तुम लोग यहाँ भी आ पहुँचे।

हुए कहा, अब बात बनी कुछ ! देखा नहीं, कैसे हाथ पकड़ कर कमरे के अन्दर हेमन्त को खींचकर दरवाजा बंद कर लिया ? लेकिन भला दाल-भात में मूसर चंद की तरह इस दीनू को उनके साथ अन्दर जाने की क्या जरूरत थी ? बेचारों को असुविधा होगी, खुलकर बात नहीं कर पायेंगे ! बस, अब तो तुम्हारा काम मेरे बायें हाथ का खेल है।

लेकिन जाने क्यों हिरण्मयी की ये बातें, ये आश्वासन माया देवी के मन में आज उत्साह नहीं जगा पा रहे थे।

दीनू डाक्टर व हेमन्त को आराम से कुर्सी पर बैठाकर स्वयं भी एक कुर्सी खींचकर बैठते हुए स्टेला बोली, तुम्हारी चिट्ठी मिलते ही लौटती डाक से मैंने अपनी फोटो भेज दी थी पर तुमने न तो अपनी फोटो भेजी और ना ही चिट्ठी का जवाब दिया। बताओ तो हेमन्त—भला तुमने अपने अंतिम पत्र में क्या लिखा था ?

आश्चर्य-चकित होकर हेमन्त बोला—चिट्ठी ! माने ? मैंने तुम्हें कब चिट्ठी लिखी स्टेला ?

जरा सीधे होकर बैठ गये अब डाक्टर।

यह क्या कह रहे हो तुम, हेमन्त ? देखो मुझसे मजाक मत करो ! मेरी धारणा है इस मामले में और कुछ भी हो पर मजाक कोई स्थान नहीं है। तुम लोगों की करीब बीस चिट्ठियाँ मुझे मिली हैं ! उनमें दस-बारह चिट्ठियां तुम्हारी हैं। तुम्हारी आखिरी चिट्ठी पाकर ही तो मैं सब छोड़-छाड़ कर पिता जी के साथ भागी चली आई !

हेमन्त ने डाक्टर की तरफ देखा नजर उठाकर, फिर बोला, स्टेला, मुझे लगता है कहीं कुछ गोलमाल हुआ है। यह ठीक है कि योरोप प्रवास में तुम मेरी मित्र थीं और वहाँ से लौटने पर सौजन्यता की खातिर तुम्हे कम से कम पहुँच की खबर मुझे अवश्य देनी चाहिए थी; लेकिन सच मानों इन तीन सालों में मैंने तुम्हें एक पोस्टकार्ड तक नहीं लिखा, जिसके लिए मैं शर्मिन्दा हूँ।

कुछ भी समझ में नहीं आया स्टेला के। हेमन्त कहता है, उसने एक भी चिट्ठी नहीं डाली जबकि उसके पास उसकी दस-बारह चिट्ठियाँ मौजूद हैं। आखिर हुआ क्या है हेमन्त को ? कुछ देर मन-ही-मन सोचती रही स्टेला, फिर डाक्टर से बोली—मि० डाक्टर आपका क्या ख्याल है ? हेमन्त पूर्णतया स्वस्थ है ?

हँस पड़े स्टेला के इस प्रश्न पर डाक्टर, बोले—हेमन्त बिल्कुल स्वस्थ है स्टेला ! बल्कि मेरा तो ख्याल है कि तुम्हीं अब तक वेटलेस (*weightless*) होकर इस महाकाश में कहीं अवस्थित थीं।

बच्चों की बात रखनी ही पड़ती है फादर—डाक्टर ने कहा।

दीपेन बोला—अगर आप कुछ ख्याल न करें तो मेरे यह काका उन लोगों से जरा अकेले में बात करना चाहते थे।

अवश्य!—इसमें ख्याल करने की क्या बात है भला। ग़लतफ़हमी तो अवश्य दूर होनी चाहिए। और फिर स्टेला की तरफ मुँह घुमाकर फादर उससे बोले—सुनो स्टेला, इस वक्त यह लोग हमारे अतिथि हैं। हम लोगों के व उनके समाज में बहुत अन्तर है। नर-नारी का या मनुष्य का दूसरा पारस्परिक संबंध टूट सकता है लेकिन अगर कोई सम्पर्क अक्षुण्ण रहता है तो वह है निःस्वार्थ मित्रता व बंधुत्व!

और बस इतनी सी देर में स्टेला ने अपने अनिश्चित भविष्य का इशारा समझ लिया। शान्त स्वर में बोली—यह मैं अच्छी तरह जानती हूँ पिता जी!

फादर बोले—बाहर दो महिलाएँ करीब दो घंटे से बैठी प्रतीक्षा कर रही हैं। अब तुम समझ जाओगी कि वह लोग किस लिए आई हैं।

रुद्ध स्वर में हेमन्त ने पूछा—आखिर बात क्या है फादर?

दिल खोल कर हँसे फादर। बोले—स्टेला से सुनना सब! हम लोग बँगला तो जानते नहीं इसलिए ठीक से बात नहीं हो पाई। निचली मंजिल पर खबर भेजी थी किसी दुभाषिये को भेजने के लिए, लेकिन आज स्टाफ के लोग लंच के बाद छुट्टी लेकर चले गये हैं। यह लोग अगर पहले से बताकर आतीं तो कुछ इंतजाम हो भी जाता।

दीपेन बोला—दीपू काका, तुम लोग स्टेला के कमरे में चले जाओ। मैं तब तक फादर के पास बैठकर बात करता हूँ।

दीनू डाक्टर, हेमन्त व स्टेला तीनों जने कमरे से बाहर आ गये।

स्टेला का कमरा लाउंज पार करके दूसरी तरफ था। माया देवी व हिरण्मयी अभी तक वहीं बैठी थीं। उनके पास पहुँचने पर ठिठककर खड़ी हो गई स्टेला और मुस्कुराकर बोली—हेमन्त तुम्हारी माँ से मिलकर आज मुझे बहुत खुशी हो रही है।

हेमन्त के बदले डाक्टर ने जवाब दिया विशुद्ध इंगलिश में—हो सकता है यह आनन्द अधिक देर न रह पाये स्टेला! स्वर्ग एवं मर्त्य के बीच में एक और अदृश्य जगत् है, जिसके बारे में बहुतों को कोई ज्ञान नहीं होता! उसे कहते हैं भौतिक जगत्!

हेमन्त व स्टेला दोनों ही हँस पड़े डाक्टर की बात पर। और फिर तीनों जने स्टेला के कमरे में चले गये। कमरे का दरवाजा जब अन्दर से बंद हो गया तो लाउंज में बैठी हिरण्मयी ने माया देवी के कान के पास मुँह ले जाकर मुस्कुराते

बहुत खुशी हुई, इसके लिए तुम्हें धन्यवाद देता हूँ स्टेला ! शिवानी ही हेमन्त की पत्नी है ।

पत्नी !

टकटकी बँध गई उसकी । हेमन्त की ओर देखती रह गई वह कुछ देर के लिए ! फिर बोली—शिवानी तुम्हारी पत्नी है ! अर्थात् तुम विवाहित हो ?

हेमन्त ने जवाब दिया—हाँ ।

सिर नीचा करके जैसे कुछ सोचने लगी स्टेला । थोड़ी देर बाद सिर उठाकर बोली, तुम्हें और शिवानी को हार्दिक बधाई देती हूँ हेमन्त ! मेरी ही गलती थी शायद ! तुम्हारे परिवार के इस आचरण को एक घृणित षड्यन्त्र की ही संज्ञा दी जा सकती है बस !

दोनों की नज़रों के सामने वह निष्पाप तरुणी जैसे उन्मूलित लता की तरह जमीन पर सदा के लिए गिर पड़ी और वह लोग कुछ नहीं कर पाये । आश्वासन के लिए शब्द ढूँढ़े नहीं मिले । तब भी किसी तरह साहस बटोर कर हेमन्त बोला—मैं अच्छी तरह समझता हूँ स्टेला, कि इस षड्यन्त्र में फँसकर बिना बात तुम्हें इतना कष्ट भोगना पड़ रहा है; परन्तु तुम विश्वास करो मुझ पर, मुझे कुछ भी नहीं मालूम था, मैं पूर्णतया अंधकार में था । और जिन्होंने मुझे अंधकार में रक्खा वे लाउंज में ही बैठी हैं । तुम उनसे पूछ सकती हो ।

सिर उठाकर चेहरे पर मुस्कुराहट लाने की कोशिश करते हुए स्टेला बोली —कोई जरूरत नहीं है मि० मैत्र । तुम विवाहित हो, बस, इतनी खबर मेरे लिए काफी है । मैं आइरिश लड़की हूँ—आघात खाकर भी हम जल्दी नहीं टूटतीं । जो होना था हो गया । बस, अब तो मैं हाथ झाड़ कर स्वदेश लौट जाना चाहती हूँ ! अब मुझे कुछ नहीं कहना है । धन्यवाद !

स्टेला ने उठकर सूटकेस से पोर्टफोलियो निकाला और उसमें से चिट्ठियों का बंडल लाकर हेमन्त के सामने रख दिया और बोली—हम लोगों के खिलाफ जो षड्यन्त्र रचा था, वह इन चिट्ठियों से तुम्हारी समझ में पूरी तरह आ जायेगा । ये तुम अपने साथ ले जाओ और मेरी परम मित्र श्रीमती शिवानी को देकर मेरी तरफ से बस इतना कह देना कि उसकी एक विदेशी मित्र भारत आकर उसे दुष्ट-शक्ति के कुचक्र से बाहर निकाल कर वापस लौट गई ।

अब तक चुपचाप बैठे दोनों की बातचीत सुन रहे थे डाक्टर । अब बोले—कहीं तुम उसे ग़लत न समझ बैठो इस डर से चौधरी ने तुम्हें कोई बात नहीं बताई स्टेला । असल में शिवानी इस षड्यन्त्र के बारे में पूरी जानकारी हासिल

स्टेला जैसे ठंड से जमकर बर्फ हुई जा रही थी। एक अनबूझ पहेली सी लग रही थी उसे सारी बात! किसी तरह अपने को रोक रक्खा उसने और निराशाजनक स्वर में बोली—तुम्हारे व तुम्हारी माँ के अंतिम कुछ पत्रों से उत्साहित होकर आफिस से छुट्टी लेकर खुशी-खुशी यहाँ आई थी। हालाँकि पिता जी नहीं चाहते थे कि मैं उनके साथ यहाँ आऊँ।

हेमन्त ने पूछा—चिट्ठियाँ साथ लाई हो तुम?

हाँ, एक-एक! यहाँ आने के बाद चौधरी, एक बहुत ही सुन्दर व भद्र महिला को मेरे पास लाये थे। मैंने तो कभी स्वप्न में नहीं सोचा था कि हिन्दुस्तान में भी ऐसी सुन्दर, सुशील, विदुषी औरतें होती हैं। मैंने सारी चिट्ठियाँ उन्हें दिखाई थीं और उन्होंने प्रत्येक चिट्ठी पढ़ी भी थी।

किसकी बात कह रही हो? कौन थीं वह? विस्मय से डाक्टर ने पूछा।

जवाब में स्टेला ने बताया कि हेमन्त की माँ की तरफ से जो भद्र महिला मुझसे मिलने आई थीं उन्होंने अपना नाम शिवानी बताया था।

मुँह पर रूमाल दबा कर अपनी फूटती हँसी को रोका हेमन्त ने और स्तब्ध दृष्टि से स्टेला की ओर देखने लगा। डाक्टर बोले—जरा खोल कर बताओ स्टेला कि वह यहाँ क्यों आई थी?

ठीक है! आपको पूरी बात खोल कर ही बताती हूँ डाक्टर। सामाजिक सौजन्यता की खातिर पहले मैंने ही हेमन्त को चिट्ठी डाली थी जिसमें कुशल-क्षेम के बाद मैंने लिखा था कि आशा है तुम अच्छी तरह सकुशल पहुँच गये होगे। अगर सुविधानुसार कभी-कभी तुम चिट्ठी डालने का कष्ट करो तो मुझे बहुत खुशी होगी।

हेमन्त ने कहा—लेकिन मुझे यह चिट्ठी नहीं मिली।

तुम्हारी यही बातें तो मुझे आश्चर्य में डाल रही हैं हेमन्त। इसके बाद जितनी भी चिट्ठियाँ मुझे तुम लोगों की मिलीं सब शिवानी देख गई हैं।

अब हेमन्त स्वयं को नहीं रोक पाया, जोर से हँस पड़ा। हँसी रुकने पर बोला—और तुम यह पकड़ नहीं पाई कि बेनामी चिट्ठियाँ लिख कर तुम्हें बेवकूफ बनाया जा रहा है?

स्टेला के वेदना से आहत चेहरे की ओर देखकर दया हो आई डाक्टर को। अनजान सीधी-साधी लड़की को नियति ने किस कुचक्र में ला पटका! कुसूर किसी का और सजा भुगतनी पड़ी इस बेचारी को। पर अब किया भी क्या जा सकता था, लाचारी थी। अतः ठंडी साँस छोड़कर बोले—शिवानी को देखकर तुम्हें

जाओ तुम माया दी, कोई फायदा नहीं यहाँ धरना देने से। अब क्या करोगी विलायत जाकर ?

विलायत नहीं जाऊँ, तो कहाँ जाऊँ भला ? झुँझला कर माया देवी बोलीं।

क्यों, हिन्दू विधवाओं का तीर्थ काशी तो है ! अरे वही जिसे मनीआर्डर का शहर कहते हैं, समझीं ?

और हँसते हुए दीनू डाक्टर नीचे चले गये।

नीचे लॉन में खड़ा प्रतीक्षा कर रहा था हेमन्त। दीपेन अभी तक नहीं उतरा था। डाक्टर बोले—मेरा ख्याल है वह जम गया हेमन्त ! जल्दी नहीं टलेगा यहाँ से ! यहाँ खड़ा रहना बेकार है उसके लिए। चल, हम लोग चलें।

हाँ, मैं भी यही सोच रहा हूँ दीनू मामा। अच्छा तो तुम घर जाओ, मुझे जरा काम से जाना है एक जगह !

लेकिन तुझसे कुछ बात करनी थी हेमन्त। जरूरी काम था ! कब फुरसत है तुझे ?

हेमन्त जवाब देने जा ही रहा था कि पीछे से हिरण्मयी बोली, तुम लोगों ने कान भर कर आज तो डरा दिया स्टेला को दीनू, लेकिन देख लेना एक दिन हम किसी न किसी तरह लंदन पहुँच ही जायेंगी।

कब जा रही हो ? मजाक से पूछा दीनू डाक्टर ने।

कब जा रही हूँ ? फिर मजाक ? अरे मेरे पति बैरिस्टर हैं बैरिस्टर, तुम्हारे जैसे गँवार नीम हकीम नहीं—विलायत जाना भला कौन सी बड़ी बात है ? हमारे तो बायें हाथ का खेल है समझे ? जाने कहाँ-कहाँ के बेहया बेशरम लोग मिल जाते हैं हर जगह, चलो माया—

अचानक न जाने क्या हुआ कि हाथ नचाकर झुँझलाते हुए चिल्लाईं माया देवी—मैं कहे दे रही हूँ हेमन्त, चाहे कितना भी तंग कर ले तू मुझे, पर मैं भी यह साहबों का मुहल्ला नहीं छोड़ूँगी। यहीं किराये का मकान लेकर रहूँगी, समझा ? हजार रुपये महीना मुझे खर्च के लिये देना पड़ेगा और नहीं देगा तो माँ बेटे में मुकदमा चलेगा। भले देखे सारी दुनिया, मेरी बला से। मुझे [illegible] बाप का डर नहीं है।

अब तक तो हेमन्त चुप था, लेकिन अब गुस्से से बोला—'हाँ [illegible] लेकिन उसमें पहले प्रमाणित करना पड़ेगा कि तुम मेरी माँ हो।'

हाँ-हाँ प्रमाण भी दूँगी।—काली माई को ले आई [illegible] फूट गई मेरी, कलंक की कालिख पोत गई मेरे मुँह [illegible]

करने आई थी और इसीलिए चौधरी ने तुमसे उसका असली परिचय छुपाये रक्खा। तुम कुछ ख्याल मत रखना अपने मन में स्टेला।

हँसकर स्टेला बोली—डाक्टर, मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि मि० मैत्र के साथ मेरा विवाह कराना उन लोगों का मूल उद्देश्य नहीं था। इस षड्यन्त्र की जड़ में क्या था यह अब मैं अच्छी तरह समझ गई हूँ। उस लोगों का असली उद्देश्य था—शिवानी की क्षति! मुझे खुशी है कि उन लोगों का यह षड्यन्त्र सफल नहीं हुआ। शिवानी की क्षति नहीं कर पाई वे सब।

चिट्ठी का बंडल हाथ में लिये उठ खड़ा हुआ हेमन्त और मुस्कुराकर बोला—तो फिर अब विदा लूँगा, स्टेला!

डाक्टर के साथ-साथ स्टेला भी उठ कर खड़ी हो गई और विदा के लिए हाथ जोड़े उसने। हेमन्त बोला—यह चेहरा लेकर अब मैं फादर के सामने नहीं जाऊँगा स्टेला। तुम उन्हें मेरा नमस्कार कह देना।

लाउंज में आकर जहाँ माया देवी व हिरण्मयी बैठी थीं एक क्षण को स्टेला रुकी और अत्यन्त निःस्पृहता से उनकी ओर देख कर बोली—मि० मैत्र, इन लोगों से कह दो कि अब मैं या पिता जी कोई भी इनसे बात करने का इच्छुक नहीं हैं। तुम्हारी माँ शायद हमारे साथ योरोप जाना चाहती हैं। इन्हें समझा दो कि विलायत वह जा सकती हैं पर अब यह हमारी सहायता से सम्भव नहीं है। गुड बाई! गुड लक!

और घूम कर सीधे फादर के कमरे में जाकर स्टेला ने अन्दर से दरवाजा बन्द कर लिया। अत्यन्त घृणा से हेमन्त ने एक बार माँ की तरफ देखा फिर डाक्टर से बोला, दीनू मामा, मैं नीचे खड़ा हूँ—और कहने के साथ-साथ बिना लिफ्ट का इन्तजार किये धड़ाधड़ सीढ़ियाँ उतर गया।

हिरण्मयी ने पूछा—छोकरी ऐसे मुँह फेर कर क्यों चली गई दीनू?

अब वह तुम लोगों से बात नहीं करना चाहती और यह भी कह गई है हिरण दी कि अगर अब ज्यादा देर यहाँ बैठी रहोगी तो धक्के खाने पड़ेंगे। दीनू डाक्टर ने व्यंग से मुस्कुराते हुए कहा।

ओ''''यह बात है! सब समझती हूँ मैं दीनू! इतनी देर में तुम लोगों ने कान भर दिये छोकरी के? एलो, उठो माया, अब आज तो काम निकलेगा नहीं!

हँसकर डाक्टर बोले—बिल्कुल गलत बात है हिरण दी! हमने कोई कान-बान नहीं भरे उसके! बल्कि तुम लोगों ने बेनामी चिट्ठियाँ लिखकर उसके कान में जो बातें भरी थीं, हमने आकर निकाल दीं। चलो छोड़ो, अब घर वापस लौट

पर प्याला रख कर बोली—क्या सचमुच आज दोपहर को खाना नहीं खाया दीनू काका ?

जवाव वसन्ती ने दिया—अब क्यों भूठ कहलवा रही है रुनु तू भी उनसे। तेरा क्या ख्याल है—पेटू आदमी और अब तक भूखे बैठे होंगे ये !

तुम कुछ भी नहीं समझती काकी ! देखा न दीनू काका के पेट में कोई चीज पचती कहाँ है। आते ही तो चिड़ियाघर की बात कह डाली, मैं तो तभी समझ गई थी।

पति की ओर देखकर वसन्ती बोली—अब तुम चाहे सौ मूड़ के बन जाओ पर मैं तो यह नहीं मान सकती कि तुम विना मतलव आवारागर्दी करते फिर रहे थे !

चलो, अब अगर तुम किसी भी तरह यह मानने को तैयार नहीं हो तो फिर यह कहना ही पड़ेगा कि दो छोकरों ने मेरी जेब पर हाथ साफ करके पार्क स्ट्रीट के एक होटल में डटकर खाया है।

पार्क स्ट्रीट में ! एक खटका-सा लगा रुनु के मन में। पार्क स्ट्रीट के पास ही तो है रसेल स्ट्रीट !—होगा, मुझे क्या ! सोचती हुई रुनु कमरे से बाहर चली गई।

वसन्ती बोली—कौन थे वे लोग ? और तुम्हारी जेब पर हाथ साफ करने का क्या मतलव था ?

काजू-बादाम की प्लेट लेकर कमरे में फिर से आकर रुनु बोली—बादाम खाकर चाय पीना दीनू काका।

काजू-बादाम सदा से दीनू डाक्टर की कमजोरी रहे थे। पानी आ गया मुँह में प्लेट देखते ही। खुश होकर दो बादाम मुंह में डालकर बोले—देखो, आजकल मैंने भूठ वोलना जरा कम कर दिया है। चाय का घूंट भरकर बात पूरी करते हुए बोले—हाँ तो मैं कह रहा था कि वह दोनों भला मेरी जेब पर हाथ साफ नहीं करते तो किसकी जेब पर करते—एक योगी और दूसरा फकीर—दोनों ही मस्तराम ! जब जहाँ मिल गया खा लिया और नहीं मिला तो नहीं सही।

ऐसे ढंग से बात कहते थे दीनू डाक्टर कि रोता भी हँस पड़े। रुनु बोली—योगी कौन था, यह तो समझ गई, पर यह फकीर कौन-सा मिल गया तुम्हें ? तुम तो बेसिर-पैर की उड़ाते हो दीनू काका !

बेसिर-पैर की उड़ाता हूँ मैं ? तेरा मतलव है मैं भूठ बोल रहा हूँ ? मेरा वस चलता तो अभी दिखा देता तुझे। बढ़ी हुई घनी डरावनी दाढ़ी, उलझे हुए रूखे बाल, गड्ढे में धँसी हुई आँखें—देखती तो तू भी डर जाती।

रुपया दवा लिया और मुझे रास्ते की भिखारिन बना दिया ! क्या जमाना आ गया है । चलो हिरण दी, ऐसे लड़के का तो मुँह देखना भी पाप है ।

गैरेज में गाड़ी बन्द करके जिस वक्त दीनू डाक्टर घर में घुसे शाम के पाँच बज रहे थे ।

दरवाजा खोलकर वसन्ती बोली—सुबह के निकले अब घुसे हो घर में ! इतनी देर कैसे हो गई आज ? मरीज बहुत थे क्या ?

कपड़े बदलते-बदलते डाक्टर बोले—कहाँ, आज तो चेम्बर में गया तक नहीं, सारा दिन यों ही आवारागर्दी में निकल गया ।

क्यों, क्या करते रहे सारा दिन ? कहाँ थे ?

जवाब नहीं दिया डाक्टर ने कुछ, बस हँसते रहे । उधर बाहर की तरफ रुनु सूखे कपड़े तह कर रही थी, बोली—काकी माँ, और कुछ मत पूछो ! मुझे पता है दीनू काका कहाँ थे ?

अच्छा तो बता कहाँ था मैं ? दिखा अपने ज्योतिष का चमत्कार ? कर गणना !

पास आकर रुनु बोली—मैं बिना गणना किये ही बता देती हूँ—तुम गये थे अजायबघर !

अजायबघर !—इस उम्र में अजायबघर—हँसते-हँसते बुरा हाल हो गया वसन्ती का !

नहीं, ठीक नहीं बता पाई तू ! काफी करीब तक तो पहुँच गई थी । अजायबघर में जीव-जन्तु तो दिखाई देते हैं—पर वे जिन्दा नहीं होते । मैं गया था चिड़ियाघर जहाँ मोर से लेकर बनमानुष तक सब जीवित, चलते-फिरते दिखाई देते हैं ।

हँसती हुई रुनु फिर वापस चली गई । आजकल रुनु को देखकर दिल जैसे किसी अज्ञात भय से काँप उठता है । एक अपूर्व आभा से उसका अंग-अंग उद्दीप्त रहता है, वेदना का—पीड़ा का चिह्न तक नहीं दिखाई देता उसके चेहरे पर, मानों एक अपराजेय व आत्मसात् यौवन हो, योगनिद्रा में समाहित हो । बाल खींच कर पीछे को बाँधे हुए, माँग में सिंदूर का चिह्न तक नहीं । गला, कान, दोनों सुडौल, सुन्दर बाँहें—सम्पूर्ण निराभरण । सफेद छोटी किनारी की धोती ! सर्वशून्या रुनु—मानों स्नेह-मोह-नियन्त्रण-अनुशासन सब बन्धनों से दूर हो, ऊपर हो ।

थोड़ी देर बाद चाय का प्याला लिए कमरे में पैर रक्खा रुनु ने और तिपाई

इतनी ही देर में भोला ऊपर चढ़ आया था। उसको देख कर दीनू डाक्टर बोले—क्यों भोला, सब ठीक-ठाक है न ? बड़े भैया कैसे हैं ?

उनका हाल उनके अलावा कोई जान सकता है भला ?—भोला ने जवाब देते हुए कहा—तमाखू खत्म हो गया था सो मुझे लेने के लिए भेजा है और कहा है कि अगर छोटे साहब राजी हों तो रुनु को लेते आना !

राजी हों ! सुनी तूने रुनु, बड़े भैया की बात ? पशुराज सिंह खरगोश की अनुमति माँग रहे हैं।—क्यों रे भोला, तूने कहा नहीं कि भवेश आचार्य के हुक्म पर तो छोटे साहब आज भी गंधमादन पर्वत उखाड़ कर ला सकते हैं ? वाह ! यह अच्छा मजाक किया बड़े भैया ने ! ठहर, मैं अभी चलता हूँ।

बरामदे में एक तरफ उकड़ूं बैठ गया भोला और बोला—लो, अब जल्दी से तैयार हो जाओ रुनु दी !—इधर-उधर नजरें घुमा कर फिर बोला—अरे तुम कहाँ हो काकी ? दिखाई नहीं दे रही हो। बड़ी खुशबू आ रही है रसोई में से—इधर भी बढ़ा दो ना कुछ !

उसके बैठने का, बातों का ढंग देख कर सब को बरबस हँसी आ गई। धोती पहनते-पहनते डाक्टर बोले—लो, यह तो जम कर बैठ गया, बिना कुछ पाये उठेगा थोड़े ही !

रुनु बोली—यह तो जन्म का राक्षस है दीनू काका।

रसोई में से ही बसन्ती ने पूछा—माँस के चॉप खायेगा भोला ?

यह भी भला पूछने की बात है काकी ? मैं ठहरा पांडे वंश का लड़का पर आजकल किसी मैथिली ब्राह्मण की जात थोड़े ही जाती है। वह जमाना तो गया। लाओ, जल्दी से गरम-गरम ले आओ। रुनु दी की बात पर बिलकुल कान मत देना।

उधर कमरे के अन्दर से दीनू डाक्टर बोले—जब बड़े भैया ने बुलाया है तो चलो सब जने चलेंगे। तुम लोग तैयार हो जाओ छोटी बहू !

बसन्ती ने कहा—हाँ, यह ठीक है। मैंने भी छोटी दी को बहुत दिनों से नहीं देखा। बस, कपड़े बदलने हैं। रुनु, तैयार हो जा जल्दी से।

पाँवों में चप्पल डाल कर जाने के लिए तैयार दीनू डाक्टर ने जब रुनु को चलने के लिए आवाज दी तो सामने आकर रुनु बोली—दीनू काका, पिता जी से कह देना कि अभी मेरा आना नहीं होगा।

यह क्या ? तू नहीं चलेगी ? हम तो तेरे साथ जाने के लिए ही तैयार हुए थे।

मुस्कुरा कर रुनु बोली—मेरी बात चले तो पिता जी से कहना कि इन दिनों

अच्छा तो ऐसी शकल का जो भी आदमी हो फकीर हो जायेगा तुम्हारे लिए। तुम तो हमेशा के झूठे हो दीनू काका ! पता है असली फकीर का चेहरा तो देवता जैसा सौम्य होता है—गुस्से से रुनु वोली।

वसन्ती वोली—तू क्या जानती नहीं रुनु कि खाली वादाम से कुछ नहीं होगा। वह तू माँस के चॉप वना रही थी न, जरा गरम-गरम दो-चार तो ला दे और फिर देखना यों चुटकियों में सब बात निकल आयेगी।

वात गलत नहीं थी। रुनु रसोई में गई और एक प्लेट में चॉप लेकर उलटे पैरों लौट आई। प्लेट को तिपाई पर रख कर वोली—लो ! एक चॉप उठा कर खाना शुरू किया डाक्टर ने और मुस्कुराते हुए बोले—तूने मुझे झूठा क्यों कहा ? फकीर माने भिखारी ! मैं क्या इतना भी नहीं जानता ?

अब रहने भी दो दीनू काका, रास्ते के भिखारी ने तुम्हारे साथ पार्क स्ट्रीट के होटल में वैठ कर खाना खाया था—यह भी कोई विश्वास करने वाली वात है भला ?

डाक्टर वोले—ना वावा ना, तू नहीं समझ पायेगी ! तेरी खोपड़ी में तो भूसा भरा है। अरी भागवान, यह ऐसा वैसा नहीं, माडर्न फकीर था। रेसकोर्स गई है तू कभी ? जुआ देखा है कभी ? एक घंटे पहले जेव में हजार-हजार के नोट भरे होंगे और वस उस एक घंटे के अन्दर ही जेव खाली। चाय के लिए भी पैसे नहीं बचते। कभी ऐसे आदमी की शक्ल देखी है तूने ? सांघातिक जुए की मार खा-खाकर जो आदमी अपना सारा जीवन हार गया हो ऐसे आदमी के शान्त चेहरे के पीछे छुपा करुण-क्रन्दन सुना है कभी तूने ?

कौतूहल भरी दृष्टि से वसन्ती पति की ओर देख रही थी। यह तो केवल परिहास नहीं था। इस परिहास के भीतर से तो एक विकट गम्भीरता झाँक रही थी। रुनु ने दीनू काका के चेहरे पर जैसे कुछ पढ़ने की कोशिश की; फिर वोली—दीनू काका, तुम्हारी सारी बातें झूठी हैं। तुम वहुरूपी हो ! मैं अच्छी तरह जानती हूँ कि तुम अपनी स्यूडो-सेन्टीमेन्टल (pseudo-sentimental) वातों में मुझे भुलाना चाहते हो ! लेकिन मैं जल्दी से भुलावे में आने वाली नहीं हूँ।

इतने में नीचे दरवाजे का कुंडा खड़खड़ाया किसी ने।

दरवाजे की तरफ को मुँह करके रुनु वोली—जरा देख तो रामू, नीचे कौन है ?

रामू नल के पास वैठा कपड़ों में सावुन लगा रहा था, वहीं से वोला—भोला दा हैं ! ये लोग आ गये ऊपर।

हैं कि तुम रुनु व वड़े भैया को अभी तक पहचान नहीं पाई। ये सब चीजें तो उन्हें छू तक नहीं पातीं !

इधर-उधर घूमती हुई सवर्वन रोड के एक किनारे जिस मकान के सामने गाड़ी आकर खड़ी हुई उसी में दीनू डाक्टर का शैशव बीता था। गाड़ी से उतर कर वसन्ती ने दोनों चीजें भोला को पकड़ाते हुए कहा—तुम यह लेकर चलो भोला। वाहर का दरवाजा खोलते ही आँगन में वायें हाथ संध्यामणि की झाड़ी थी, सामने दालान और उसके पीछे वड़ा कमरा। कमरे में वत्ती जल रही थी। आचार्य महाशय खड़े हुए धूप जला रहे थे, दरवाजे की ओर पीठ थी उनकी। पीछे से ही दीनू डाक्टर वोले—वड़े भैया, हम लोग आ गये।

धूप के अच्छी तरह सुलग जाने पर आचार्य महाशय सामने को घूमे और वसन्ती को भी साथ देख कर वोले—अच्छा, वहू भी आई है। मैं तुम लोगों के वारे में ही सोच रहा था अभी।

नीचे झुककर उनके पाँव छुए वसन्ती ने और वोली—रुनु नहीं आई, फिर किसी दिन आयेगी। और यह कहकर वह अन्दर की तरफ चली गई।

डाक्टर ने कहा—तुम्हारी लड़की ने मेरे द्वारा तुम्हें प्रणाम भेजा है, वड़े भैया—

और यह कहकर उन्होंने भी आचार्य महाशय के पाँव छुए। मुस्कुरा कर भवेश आचार्य वोले—दीनू, तुमने रुनु को सव सिखाया पर तव भी एक-दो वातें रह गईं। वचपन में ही सिखा देते तो अच्छा था।

क्यों वड़े भैया ? क्या रह गया ?

पकी हुई सन सी सफेद दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए स्नेह से आचार्य वोले—उस तरह की ससुराल में शालग्राम की पूजा उसके लिए उचित नहीं थी दीनू।

और वस ! यह सुनते ही गुस्सा आ गया दीनू डाक्टर को, वोले—तुम कुछ भी नहीं जानते वड़े भैया ! गले में जनेऊ लटकाने से क्या होता है। तुम तो मुझसे भी ज्यादा नास्तिक हो। अरे, वह कोई शालग्राम पूजा थी ? वह तो कल्चर का एक छोटा सा प्रतीक-चिह्न था ! रुनु ने प्रयत्न करके देख लिया कि उसमें भी वह सफल नहीं हुई।

आचार्य जी के चेहरे पर रंचमात्र भी विकार या अस्वाभाविकता नहीं आई। उसी तरह मुस्कुराते हुए मृदु स्वर में उन्होंने पूछा—तुम्हें जाने की जल्दी तो नहीं है ? चलो आराम से वैठें चलकर—

वरामदे में तीन-चार डेक-चेयर निकालकर वीच में हुक्का रख गया था भोला और चिलम रखकर कह गया था कि—चिलम तैयार है वावा जी।

मेरे सामने तीन कार्य हैं—वीमेन्स कालेज की वाइस प्रिंसिपल की नौकरी मुझे आज ही मिल सकती है। और स्कॉलरशिप मिलने की खबर तो पिता जी को पता ही है। वह स्कॉलरशिप लेकर मैं सोशल साइंस की डिग्री लेने के लिए बाहर जा सकती हूँ।

और तीसरा ? डाक्टर ने पूछा।

वह है हेडमास्टरी।—पिता जी से पूछ लेना उन्हें तीनों में कौन-सा पसन्द है और मेरा प्रणाम देना उन्हें।

कुछ क्षणों के लिए चुप खड़े रहे डाक्टर। उनके हास-परिहास के पीछे सदा एक आवेग-प्रवणता परिलक्षित होती है। जरा चिल्ला कर बोले—क्यों री, शादी के बाद तू इतनी पराई हो गई कि मेरे द्वारा प्रणाम भेज रही है ?

हँस पड़ी रुनु। बोली—जेब से रुमाल क्यों निकाल रहे हो दीनू काका ? बचपना मत दिखाओ ! तुमने कभी सुना है लड़की हमेशा के लिए माँ-बाप की अपनी रही है ?

तू भी एक नम्बर की जिद्दी लड़की है रुनु ! चली चलती तो क्या बिगड़ जाता ? कमरे से बाहर निकलते-निकलते बसन्ती ने कहा।

हँसते-हँसते काकी के बालों से खेलते हुए रुनु बोली—चिन्ता क्यों करती हो काकी माँ, समय आने पर जरूर जाऊँगी। तुम जाओ, मैं खाना बना कर तैयार रक्खूंगी आने तक।

सीढ़ियाँ उतरते-उतरते खखार कर गला साफ करते हुए डाक्टर बोले—जाने कहाँ-कहाँ के पागल आ जुटे हैं सब ! आ भोला। क्यों, तमाखू खरीद लिया तूने ?

पीछे-पीछे उतरते हुए भोला ने जवाब दिया—चलो, जाते हुए खरीद लूंगा रास्ते में—

चल तो फिर—

बसन्ती आगे डाक्टर की बगल में बैठ गई और भोला पीछे की सीट पर। कोई दूर तो था नहीं घर। दो मील के करीब होगा। बीच में एक जगह गाड़ी खड़ी करके दीनू डाक्टर ने उनकी पसन्द का बढ़िया अम्बरी तम्बाकू और एक डब्बा सन्देश खरीद लिये। दोनों चीजें बसन्ती को पकड़ा कर गाड़ी में आ बैठे और स्टार्ट करके धीरे-धीरे स्पीड बढ़ा दी।

बसन्ती बोली—मुझे तो डर लग रहा है। रुनु के आने के बाद आज पहली बार जेठ जी के यहाँ जा रही हूँ !

हँस कर दीनू डाक्टर ने कहा—अगर तुम्हें डर लग रहा है तो इसका मतलब

नहीं वड़े भैया, सान्त्वना के लिए नहीं कह रहा। आज अपनी आँखों से देख आया हूँ। अब उनके विनष्ट होने में कोई कसर नहीं रही।

विना कुछ कहे चुपचाप आचार्य ने फिर से नली मुंह में लेकर हुक्का गुड़गुड़ाना शुरू कर दिया। उनको इतना निश्चिंत व निर्विकार देखकर दीनू डाक्टर को अब हँसी आ गई, वोले—अच्छा वड़े भैया, तुम्हे मैंने लेशमात्र भी चंचल होते नहीं देखा ? न तो तुम्हारे मन में किसी प्रकार का उद्वेग है और न ही विकार। तुम्हारी इतनी लाड़ली लड़की की ऐसी दुर्दशा हो रही है और तुम्हारे माथे पर सिलवट तक नहीं पड़ी। तुम आदमी हो या पत्थर ?

सरोजिनी और वसन्ती को जैसे काठ मार गया। आचार्य के मुंह पर ऐसी वातें दीनू डाक्टर के अलावा किसी और में कहने की हिम्मत नहीं थी।

हुक्के की नली मुंह से निकालकर आचार्य मुस्कुराये और शांत व मृदु स्वर में वोले—इसे दुर्दशा या दुख नहीं कहते दीनू।

क्या ? दुर्दशा या दुख नहीं कहते ? कह क्या रहे हो तुम वड़े भैया ?

जरा भी उत्तेजित हुए विना उसी तरह मुस्कुराते हुए आचार्य ने कहा—तुम शांति से अच्छी तरह देखो और सोचो दीनू तो पाओगे कि अव मानदंड रुनु के हाथ में है। न्याय करने का अधिकार उसे मिल गया है। उन लोगों ने इसे आसामी के कटघरे में खड़ा किया था न ? लेकिन अव आसामी ही इजलास में सर्वोच्च पद पर वैठा है। तुम लोग वेकार डर रहे हो।

उत्तेजित स्वर में सरोजिनी वोली—हाँ, तो इसलिए तुम्हारी लाड़ली सुहाग के चिह्न भी उतार फेकेंगी, क्यों ?

उसी तरह शांत वैठे मुस्कुराते रहे आचार्य। उत्तेजना का चिह्न तक नहीं था चेहरे पर। क्या किसी भी तरह, किसी भी परिस्थिति में यह निष्ठावान् ब्राह्मण संयम नहीं खोता ! अशांत, उत्तेजित नहीं होता। पिता का यह गुण शत प्रतिशत आ गया था शिवानी में भी ! पृथ्वी पर शायद अभी तक ऐसा आदमी पैदा ही नहीं हुआ था जो इन दोनों को क्रोध, उत्तेजना दिला सके।

कुछ सोचकर आचार्य ने कहना शुरू किया—इसमें कोई वुराई तो है नहीं सरोजिनी। तुमने रुनु को सर्वश्रेष्ठ शिक्षा दी है। भारतीय संस्कृति व सभ्यता उसकी रग-रग में समाई हुई है। फिर तुम उसे लौकिक प्रथाओं की जंजीरों में वांध कर चावुक क्यों लगाना चाहती हो ? तुम क्या देख नहीं रही हो कि अव वह हमारे घर की लड़की नहीं है, किसी घर की वहू नहीं है—वाहर निकल कर अव सवके वीच में खड़ी हो गई है ? वहू, तुम भी अच्छी तरह आँखें खोलकर देखो, इस वार वह मैदान में झिलमिलाती तलवार की तरह चमक रही है। रुनु

दोनों जने बाहर आकर कुर्सी पर बैठ गये। उसी समय सरोजिनी व बसन्ती भी अन्दर से निकल आईं। सरोजिनी बोली—मेरी तो कुछ भी समझ में नहीं आ रहा है दीनू। यह क्या सही है कि रुनु के घर से निकल आने के बाद उन लोगों ने खोज-खबर तक नहीं ली?

दीनू डाक्टर ने जवाब दिया, उन्हें किसी को पता ही नहीं है कि रुनु कहाँ है।

आचार्य जी चुपचाप हुक्का गुड़गुड़ा रहे थे।

बसन्ती बोली—और फिर रुनु चाहती भी तो नहीं कि उसकी खोज-खबर कोई ले। वह तो बस दिन-रात किताबों से सिर मारती रहती है।

हेमन्त को वह लोग शायद आने नहीं देते—जरा गुस्से से सरोजिनी ने पूछा।

दीनू डाक्टर बोले—छोटी दी, तुम्हें अभी तक अकल नहीं आई। तुम अपनी आँखों से रुनु को किस वेश में देखकर आई हो? वह अब कुमारी सधवा विधवा—कुछ भी नहीं है। ना माथे पर सुहाग का चिह्न है और ना ही हाथ में शाँखा-नोया है, ना वह कभी साड़ी पहनती है।

हुक्के से गुड़गुड़ की आवाज आ रही थी। आचार्य ऐसे निःस्पृह भाव से हुक्का पी रहे थे जैसे वह कुछ सुन ही नहीं रहे थे। सरोजिनी बोली—बस-बस, चुप करो दीनू। आँखों से अवश्य देख आई हूँ लेकिन कानों से सुनने पर अभी भी बदन के रोंगटे खड़े हो जाते हैं।

तो फिर समझ सकती हो कि संबंध करीब-करीब टूट ही गया है। रुनु के हाथ में इस वक्त तीन-तीन नौकरियाँ हैं और वह भी प्रत्येक मोटी तनख्वाह की। देखती जाओ कैसे चुटकी बजाते वह कहाँ की कहाँ पहुँचती है।

अच्छा, बता तो भला वह लोग इतनी गंदी-गंदी चिट्ठियाँ क्यों लिखते हैं बात-बात में? अभी कुछ दिन पहले दीपेन को लेकर कैसी-कैसी चिट्ठियाँ लिखकर भेजी थीं बड़े भैया के पास। वह लोग ऐसे क्यों हैं दीनू? कुछ उत्तेजित होकर सरोजिनी ने एक साथ कई प्रश्न पूछ डाले।

बसन्ती ने सरोजिनी का हाथ जोर से दबाकर रुक जाने का इशारा किया। आचार्य जी ने हुक्के की नली मुँह से निकाल कर यथास्थान रख दी और मन ही मन हँसने लगे।

डाक्टर ने कहा—ऐसा हमेशा से होता आया है छोटी दी, मरने से पहले हर जन्तु एक बार काटना चाहता है। यहाँ भी पुराना सामन्तवाद पूर्णतया विनष्ट होने से पहले खीझकर अन्तिम बार अपने दाँत दिखा रहा है।

इतनी देर बाद आचार्य जी का मुँह खुला, बोले—यह कहकर क्या तुम स्वयं को व दूसरों को सान्त्वना देना चाहते हो दीनू?

घेरने दो।—वह इनका प्रतिकार करना जानती है। रुनु पर विश्वास रक्खो तुम लोग !

लेकिन वह तुम्हारी एकमात्र सन्तान है, बड़े भैया !

हुक्के की नली मुंह से लगाने जा ही रहे थे आचार्य। दीनू की बात सुनकर हँस पड़े, बोले—एक आदमी के लिए एक ही शाणित खड्ग यथेष्ट है दीनू ! और जहाँ तक सन्तान की बात है तो हर बालिग सन्तान राष्ट्र की सम्पत्ति है, वहाँ माँ-बाप का प्यार तुच्छ होता है।

अब जरा पास खिसक आये दीनू डाक्टर और बोले—तुम्हें एक जरूरी खबर देनी थी बड़े भैया—इसीलिए मैं इस वक्त आया था—

प्रश्नभरी दृष्टि से आचार्य ने डाक्टर की तरफ देखा।

डाक्टर बोले—हेमन्त अपनी स्थावर-अस्थावर सारी सम्पत्ति बेच-खोच कर अन्तहीन पथ पर निकल पड़ा है ! अब उन लोगों के पास कुछ नहीं रहा।

यह क्या कह रहे हो ? उसकी माँ ने कुछ नहीं कहा ? रोका नहीं उसे ?

उनकी बात तो न उठाना ही अच्छा है बड़े भैया। बहुत सी बातें हैं, जो मैं तुम्हारे सामने मुँह से नहीं निकाल सकता ! माया दी अब साहबों के मुहल्ले में मकान लेकर रहना चाहती हैं !

कुछ क्षण चुप रहकर दरवाजे से बाहर न जाने क्या देखा आचार्य ने। फिर एक ठंडी साँस छोड़कर बोले—बहुत से सामन्ती परिवारों की अंतिम परिणति साहबों के मुहल्ले में ही घटी है दीनू !

अपने मन की बात बताऊँ बड़े भैया ? मेरा ख्याल है कि इस वंश की मूल भित्ति पर सबसे पहला हथौड़ा रुनु के हाथ से ही पड़ा ! आज सबेरे जब गया तो देखता ही रह गया। बेचारे हेमन्त को देखकर दुख होता है। मैंने तो स्वप्न में भी कभी उनके ऐसे शोचनीय परिणाम की कल्पना नहीं की थी।

हुक्के के दो-चार कश खींचकर आचार्य बोले—यह खबर बहुत शुभ है दीनू ! अब तो बस उन्हें भग्न होने दो ! वह लोग यदि अच्छी तरह भग्न हो गये तो समझ लो बच जायेंगे ! अच्छा है, विघटन हो जाये उनका पूर्णतया और फिर एक नया रूप लेकर वह दुनिया में जन्म लें। मैं भी अपने आखिरी दिनों में उनके टूटने की आवाज़ सुनता जाऊँ। यदि तोड़ने के लिए उन्हें अपने करीब हथौड़ा न मिले तो अपना सिर पटक-पटक कर ही सब कुछ तोड़ें वह लोग। तोड़-फोड़कर मिट्टी में मिला दें सब कुछ। चिह्न तक न रहे उनकी इस सामन्ती मनोवृत्ति का।

आचार्य के कंठ से जैसे संघात की डमरु-ध्वनि निकल रही थी। दीनू डाक्टर जानते हैं कि विगत ढाई सालों से वह अपनी निरपराध, विदुषी कन्या पर होने

पर विश्वास रक्खो तुम लोग, डरो मत ! अब उसने विद्रोह की घोषणा कर दी है। और इसकी जरूरत भी है।

अब उसके वाद जवाव देने को रह ही क्या गया था। विना कुछ कहे चुपचाप सरोजिनी और वसन्ती दोनों अन्दर चली गईं।

दीनू डाक्टर भी मन्त्रमुग्ध हो गये थे। अभी तक जाल टूटा नहीं था। न जाने किस लोक में पहुँच गये थे वह। विल्कुल चुप बैठे थे।

वोलते-वोलते आचार्य के स्वर में उत्तेजना का आभास झलका ही था कि वह चुप हो गये थे। कुछ क्षण चुप रहकर उन्होंने जैसे अपने मन को पुनः शान्त कर लिया, वोले—एक लड़की आधी रात को ससुराल का नागपाश काटकर पति के सामने घर से निकल आई, उसके मुँह पर सुहाग के चिह्न उतार फेंके—यह शक्ति सामान्य नहीं है दीनू ! वड़ा वल चाहिए इसके लिए।

हाँ, यह वात तो सही है—। आचार्य ने जैसे दीनू डाक्टर की आँखें खोल दी थीं, रुनु का एक ज्वलंत, विल्कुल नया रूप दिखाई दिया था उन्हें।

जानते हो दीनू, हेमन्त वगैरह अभी तक उस पुरानी सामन्तवादी मनोवृत्ति को वहन करते चले आ रहे हैं जिसे लार्ड कार्नवालिस ने सामन्ती राजाओं के माध्यम से और भी मजवूत कर दिया था—वह लोग वहाँ से एक कदम भी आगे नहीं वढ़े ! फिर वह कैसे जान पाते कि सभ्यता के साथ-साथ सामाजिक संस्कृति भी वदलती रहती है। जो इस संस्कृति के साथ कदम मिलाकर नहीं चलते, वही मर जाते हैं ! गति रुक जाना ही तो दुर्गति है। मृत्यु का अर्थ गतिहीनता ही तो है ! रुनु का सौभाग्य है जो उस परिवार में वह वहू वनकर गई।

हँस पड़े दीनू डाक्टर—अव यह किस मतलव से कह रहे हो वड़े भैया ? इसे तुम सौभाग्य कहते हो ?

हाँ दीनू, सौभाग्य समझता हूँ। उससे रुनु को लड़ने की सुविधा मिल गई न ! जिस पुरानी नीति के साथ इस युग का मेल नहीं वैठता, वही नीति तो इस युग की शत्रु है ! पुराना और प्राचीन दोनों एक नहीं हैं दीनू। एक काल की संस्कृति दूसरे काल की शत्रु वन जाती है, इसीलिए सर्वप्रथम मनुष्य पुरानी संस्कृति से लड़ता है। इस शादी के फलस्वरूप रुनु को इस लड़ाई में सहयोग देने का सुअवसर मिल गया। असल में तो अव रुनु की परीक्षा का समय आया है। तुम लोग वाधा मत खड़ी करो दीनू। उसको विपत्ति का सामना करने दो, दुर्योग के वादल यदि उसके सिर पर मँडरायें तो मँडराने दो—दुःख-दुर्दशा उसे घेरे तो

: : १० : :

अचानक हेमन्त ने नौकरी से इस्तीफा दे दिया। डायरेक्टरों ने सोचा—उम्र कम है, चंचलता गई नहीं अभी और फिर बड़े घर का लड़का—यह भला डेढ़ हजार की क्या परवाह करेगा। लेकिन इतनी सारी विदेशी डिग्रियाँ—यह नौकरी छोड़ भी दी तो क्या! जब चाहेगा इससे अच्छी मिल जायेगी, हाथों हाथ कोई भी बड़ी कम्पनी ले लेगी। एक के बाद एक—चार महीनों से छुट्टी लेता आ रहा था वह —और अब इस्तीफा ही दे बैठा।

हेमन्त के स्वोपार्जित धन से खरीदी गई गाड़ी गैरेज में चली गई और मारिस जीप, सेवरॉल—सब की सब बेच डालीं उसने। रामसेवक ने कुछ नक़द रुपया पाकर जोर से सलाम ठोका और विदा ले ली। सुनील की सौजन्यता व भद्रता हेमन्त की नजरों से छुपी नहीं थी, उसको हेमन्त ने लावण्य के पति से कहकर उनकी नई गाड़ी चलाने के लिए नौकर रखवा दिया। जाते समय इनाम के तौर पर सुनील को हेमन्त से अच्छी मोटी रकम मिली; लेकिन तब भी इस घर के प्रति अपनी जिम्मेदारी वह भूला नहीं! जाते-जाते कह गया कि भाभी चाहे जहाँ भी रहें, आने पर मैं फिर आकर उन्हीं की गाड़ी चलाऊँगा।

देवानन्द को बुलाकर हेमन्त ने तीन महीने की तनख्वाह पकड़ाई और भगा दिया। माधव व यशोदा अभी तक अस्पताल में ही थे—बचने की कोई आशा नहीं थी। लेकिन तब भी हेमन्त ने अस्पताल के प्रधान के पास कुछ रुपया जमा कर दिया था। जिसमें से आधा अगर वह जीवित रहते तो उन्हें मिल जाता, नहीं तो सारा गरीब रोगियों के इलाज के निमित्त दान खाते में चला जाता। अब हेमन्त के मन में किसी के भी प्रति आक्रोश या घृणा नहीं रही थी, अतः एक दिन वह थाने में गया। मनोहर अभी तक हवालात में ही था। पुलिस की तहकीकात पूरी न होने के कारण मुकदमा अभी तक अदालत में नहीं गया था। पुलिस फंड में चंदे के रूप में कुछ रुपया जमा करके कह-सुनकर उसने मनोहर को छुड़वा दिया। उसकी पत्नी व बच्चों के करुण क्रन्दन से हेमन्त का मन पसीज गया था। हवालात से छूटते ही मनोहर दौड़कर एक छलाँग में पत्नी के आँचल

वाले उत्पीड़न-अत्याचार के संवाद चुपचाप सुनते आ रहे थे। आज का यह विस्फोट उसी पुंजीभूत घृणा की अभिव्यक्ति थी। अन्यायी, कुकर्मी पापी यदि यह समझ बैठे कि उसके अन्याय का प्रतिकार नहीं होगा, पाप का प्रतिफल उसे नहीं मिलेगा, उत्पीड़न का विरोध नहीं होगा तो जीवन की शोचनीय अवस्था हो जाती है, पग-पग पर मनुष्य अपमानित होता रहता है। लेकिन रुनु ने इस अपमान को, अन्याय को, अत्याचार को वर्दाश्त नहीं किया; डटकर मुकावला किया परिस्थिति का; अपने जीवन को शोचनीय अवस्था में नहीं पहुँचने दिया—इसी खुशी ने आचार्य को मानों जिला दिया था, उनके शरीर में नये प्राण फूंक दिये थे।

कुछ देर चुप रहकर फिर बोलना शुरू किया आचार्य ने—तुम्हें उस वक्त मुझ पर गुस्सा आ गया था दीनू। पर मैं एक वार फिर कहता हूँ कि कल्चर का एक दायित्व और भी होता है। जो नीचे धँस रहा हो उसे गड्ढे में ढकेल देना मनुष्यता नहीं है दीनू। वरन् भारतीय सभ्यता तो यह है कि अधःपतित को ऊपर खड़ा आदमी ऊपर खींच ले! रुनु तो अपना पथ अच्छी तरह पहचानती है, लेकिन हेमन्त के सामने तो अँधेरा ही अँधेरा है! दुःख-दारिद्रय में हेमन्त नहीं पला—यह उसका अपराध नहीं है। विलास, सम्पत्ति, ऐश्वर्य के कारण यदि वह मेरुदण्डहीन हो गया है तो यह भी कोई उसका अपना अपराध नहीं है। मनुष्य की मूल धातु को पहचानना वहुत जरूरी है दीनू—इसीलिए तो मैं कह रहा था कि कहीं कमी रह गई तुम्हारी शिक्षा में। रुनु को थोड़ी विद्या और देनी थी। तुम्हीं तो उसके शिक्षक थे।

सारी वातें सुनकर आनन्द से विभोर डाक्टर हँस पड़े और फिर आचार्य के पाँव छूकर जाने के लिए उठ खड़े हुए।

काफी देर से आकाश में वादल मँडरा रहे थे, अब उन्होंने गरजना भी शुरू कर दिया था। देखते-देखते काल वैशाखी की तरह आँधी-वारिश शुरू हो गई। अंधकार छा गया! मानों दुर्योग के वादल हर चीज को तहस-नहस करने के लिए कमर कस कर आये हों।

मीमांसा करने लगा है वह आजकल। मानों किसी जंजाल ने बिना मतलब उसे चारों तरफ से घेर लिया हो—इस जंजाल को हटाकर उसे अब कहीं और—दूर जाना पड़ेगा। ये सब बेकार के काम करने पड़ रहे हैं उसे—मानों किसी रण-क्षेत्र में लड़ते-लड़ते वह किसी महत् सत्य की ओर आगे बढ़ता जा रहा हो। अपने परम लक्ष्य की खोज में उसने जाना है, यह तो सही है परन्तु वह लक्ष्य है कहाँ—किस दिशा में जाये वह? कुछ नहीं समझ पाता। जरा-सा अधिक सोचते ही सिर की नसें झनझनाने लगती हैं, मानों तीव्र रक्त-प्रवाह के कारण फट पड़ेंगी, सब गोलमाल हो जाता है। क्या करे वह? कहाँ जाये? किससे पूछे? मानों अंधकार ने उसके चारों ओर जाल फैला दिया है—न साफ-साफ कुछ देख पाता है, न सुन पाता है और न कुछ सोच-समझ पाता है।

धीरे-धीरे हेमन्त आँखों से ओझल होता जा रहा था, लेकिन नारायण जीने की खिड़की पर सिर टिकाये अभी तक उस ओर दृष्टि गड़ाये था। हेमन्त की दुर्दशा देखकर आँखें भर-भर आती थीं उसकी! क्या-से-क्या हो गया बेचारा। लम्बी साँस छोड़कर वहाँ से हट आया नारायण और काम में लग गया।

और कुछ तो था नहीं करने को, बस कमरे की साफ-सफाई, झाड़-पोंछ कर लेता था। बक्से, पेटियाँ वगैरह ठीक से एक तरफ लगा दी थीं उसने—कीमती गहने-कपड़े, बड़े घर की बहू का सारा सामान उन्हीं कुछ ट्रंकों में था। घर को अकेला छोड़कर टस-से-मस नहीं होता नारायण, साँप की तरह पहरा देता रहता है। वहीं कमरे के बीच फर्श पर हेमन्त का बिस्तर लगा देता है, एक किनारे पीने का पानी भर कर रख देता है और काफी रात गये जब भारी मुँह लिए हेमन्त लौटता है तो सीढ़ियाँ उतर जीने के नीचे दरी बिछाकर सो जाता है। क्या खाया, कहाँ खाया—एक दूसरे से इस विषय में किसी प्रश्नोत्तर का सवाल ही खड़ा नहीं होता।

जिधर आँख उठी—हेमन्त चलता जा रहा था। उसे स्वयं को मालूम नहीं था कि वह कहाँ, कितनी दूर और क्यों जा रहा है। आजकल वह यों ही निरुद्देश्य चलता रहता है बस। जब थक कर चूर हो जाता है तो घर जाकर बिस्तर पर पड़ जाता है। न तो खाने-पीने का होश है और न कपड़े-लत्ते का। चलते-चलते न जाने दिमाग में क्या आई कि लावण्य को फोन कर बैठा। हेमन्त की आवाज सुनते ही लावण्य की हिचकी बँध गई फोन पर। हेमन्त बोला—रो मत लावण्य। हाँ, मैं ठीक ही हूँ! नहीं-नहीं बहन, मेरा पता मत पूछ। हाँ....मेरे पास नारायण है....अभी उसे नहीं भगा पाया।

लावण्य ने बताया कि अब माँ का हिरण मौसी के यहाँ रहना मुश्किल हो

में छुप गया, किन्तु वह जानता था कि उसके सिर पर झूलती तलवार अभी हटी नहीं थी।

बाकी रह गया नारायण। वह सबसे ज्यादा चतुर-चालाक था, क्योंकि बिना किसी बात का जवाब दिये फुक्का फाड़ कर रोना शुरू कर दिया उसने ! सान्त्वना देते हुए पहले तो हेमन्त ने कहा—तू रो मत। पचास रुपये महीना तेरी तनख्वाह है, मैं तुझे छह महीने की तनख्वाह और बर्दवान जाने का किराया देता हूँ। बस, अब तो खुश ?

लेकिन कहाँ ! उसका रोना तो थमने के बजाय और बढ़ गया। रोते-रोते बोला—मुझे एक पैसा भी नहीं चाहिए—और फिर वही रोना ! हिचकियाँ बँध गई रोते-रोते।

एक तो वैसे ही हेमन्त का दिमाग परेशान था, उसका रोना देखकर तो पारा सातवें आसमान पर पहुँच गया। आग-बबूला होकर बोला—तो फिर क्या चाहिए, बोल ? रोयेगा तो गला घोंट दूँगा अभी ! चुप हो बिल्कुल।

हेमन्त का डाँटना था कि नारायण के रोने की आवाज तार सप्तक पर पहुँच गई !

हेमन्त ने किसी सज्जन के मकान में गैरेज के ऊपर बना कमरा किराये पर ले लिया था। बाथरूम समेत कमरा काफी लम्बा-चौड़ा था, लेकिन छत बिल्कुल सिर पर यानी बहुत नीची थी। गर्मियों में सीलिंग फैन नहीं लगाया जा सकता था ! आजकल की तुलना में किराया फिर भी कम था, मात्र डेढ़ सौ रुपये। हत-भागे नारायण ने ही भाग-दौड़ करके कमरा ठीक किया था।

क्यों, जवाब नहीं दिया ? बोल जल्दी !

उसी तरह रोते-रोते नारायण बोला—भाभी का सामान छोड़कर मैं यहाँ से किसी भी तरह नहीं हिलूंगा !

तो फिर मर यहीं !—यह कहकर हेमन्त ने जेब से रुपयों से भरा भारी बटुआ निकाल उसके ऊपर फेंक मारा—भाभी-भाभी ! अब भाभी कभी नहीं आयेंगी ! समझा ! रोने से भी नहीं और जाकर पाँव पकड़ने पर भी नहीं।

गुस्से से बड़बड़ाता हेमन्त जल्दी-जल्दी सीढ़ियाँ उतर कर न जाने किस ओर चल दिया। आज दो महीनों से वह कठिन परिश्रम करता आ रहा है—जो उसने जीवन में कभी नहीं किया। केवल अपने बल-बूते पर उसने अपना पूरा इतिहास नष्ट-भ्रष्ट कर डाला है। एक अजीबोगरीब बेपरवाही की भावना बात-बात में उसे अधीर कर देती है। दिन पर दिन जैसे वह हताश होता जा रहा है। उसका भविष्य खुली किताब की तरह उसके सामने स्पष्ट हो गया है। हर बात की

कलकत्ते के आनन्द-लोक में अपने को डुबो देगा। जेब में अजस्र सम्पत्ति है, अनगिनत मित्र जुट जायेंगे शहद की मक्खियों की तरह। भले ही कलकत्ते में दर्शनीय विशेष कुछ न हो, किन्तु भोग्य तो अपरिमेय है। चारों ओर से आवाज़ दे-देकर उसे बुला रहा है वह भोग्य !

मैदान के बीच से गई पगडंडी पर मन ही मन बड़बड़ाता चला जा रहा था हेमन्त। तुम्हारी रगों में बहता हुआ परम्परागत सामन्ती खून क्या कह रहा है, कान खोलकर सुनो ! अपने इस अनायास लब्ध सौभाग्य को चौरंगी की इन गलियों में बिखेर दो। यहाँ के भूगर्भ व अँधेरी सुरंगों में अनगिनत स्वर्ग छद्मवेश में छुपे हुए हैं। आनन्द-ऐश्वर्य के संगी-साथी तुम्हारी प्रतीक्षा में दिन गिन रहे हैं।

हेमन्त पाँच साल लंदन में रहा है। उसने सोहो देखा है, ईस्टएंड देखा है; केन्सिंगटन व हाइड पार्क के आसपास घूमा है वह—भोग से अच्छी तरह परिचित है वह ! लेकिन हर भोग, आनन्द के पीछे एक और चीज़ भी तो उसने देखी है—वह है करुण क्रन्दन—दबाकर घुटा रुदन !

रुदन ! अचानक अपनी ही बात पर चौंक उठा वह ! तो क्या इधर कई महीने वह भी रोता रहा है ? किसको मालूम....हो सकता है इस रुदन के कारण ही उसे ऐश्वर्य-भोग के साथी न जुटे हों ! रुदन तो सदा से अकेला रहा है.... उसे कोई साथी थोड़े ही जुटता है, बल्कि जो होते हैं, वह भी छोड़कर चले जाते हैं। रुदन तो अंतर्हित होता है, एकान्त उसका साथी होता है, परिन्दा तक नहीं फटकता पास। लेकिन उसका रोना सुन कौन रहा है ? परवाह किसे है उसके रुदन की ? दुख की आग में जलकर लाखों लोग दिन-रात रोते रहते हैं। दो मुट्ठी अन्न के लिए रोते हैं लोग, फुटपाथ पर पड़े-पड़े आश्रय के लिए रोते हैं, पुत्र खोकर ममता के मारे लोग रोते हैं। पति द्वारा परित्यक्ता नारियाँ विरह-वेदना से रोती हैं फूट-फूट कर। लेकिन वह ? वह क्या लाखों की सम्पत्ति का दुर्वह बोझा सिर पर उठाये शौकीन रोना रोता फिरेगा ? ना....ना....ऐसा नहीं होता ! वेदना के दुःसह दहन से उसका हृदय कहाँ जल रहा है ? जीवन-संग्राम में कब उसने अपना खून बहाया है ? संघात, दुर्दशा, अपमान से क्या कभी उसकी छाती फटी है ? दो कौर भात के लिए क्या कभी उसकी आँखों से आँसू बहे हैं ? रास्ते में बिछे काँटों ने बिंध-बिंध कर क्या कभी उसके पाँवों से रक्त बहाया है ? नहीं.... कभी कुछ भी नहीं सहना पड़ा उसे ! इनमें से एक का भी अनुभव नहीं है उसे। वह पुरुष थोड़े ही है....वह तो है मेरुदण्डहीन एक बेकार, निकम्मा चलता-फिरता मांस का लोथड़ा....कुछ आत्मीय-स्वजनों के हाथों की गुड़िया !

रहा है। बात-बात में झगड़ा होने लगा है। अब ज्यादा दिन वहाँ रहने से लोग तरह-तरह की बातें बनाने लगेंगे और फिर इस महँगाई के जमाने में एक आदमी का खर्च कोई कम तो होता नहीं—बैरिस्टरी में होता ही क्या है आजकल। अब हिरण मौसी ने बात-बात में कहना शुरू कर दिया है कि हजार हो—लड़का तो पेट का ही है, अब यह आपस का झगड़ा मिटा डालो! लड़का कुपुत्र भी निकल गया तो क्या हुआ, आखिर तो पेट जाया है, माँ को गुस्सा नहीं करना चाहिए!

हेमन्त बोला—लावण्य, माँ मिलें तो कहना कि झगड़े वाली कोई बात ही नहीं है, लेकिन हाँ, मुझे कभी उनका मुंह न देखना पड़े ऐसी व्यवस्था मैंने कर दी है। खिदिरपुर का मकान छोटा है, उसे उनके लिए छोड़ दिया है मैंने....हाँ, नीचे का हिस्सा किराये पर उठा देने से ही उनका गुजारा हो जायेगा....हाँ, इसके अलावा स्टेट बैंक में उनके नाम कुछ रुपया भी जमा कर दिया है....जब मिलें तो खबर लेने को कह देना....हाँ....क्या? नहीं, नहीं....लावण्य, इसकी बहुत जरूरत थी।

लावण्य ने पूछा—भाभी के बारे में कोई खबर मिली तुझे?

भाभी की?....गले में जैसे कुछ अटक गया हेमन्त के। थूक निगल कर बोला....ना....खबर मिली भी नहीं और मैं लेता भी नहीं! क्यों? तुझे पता है कुछ?....

....हाँ....मेरी ननद वीमेन्स कालेज में पढ़ती है न,....भाभी वहाँ की वाइस-प्रिंसिपल हैं।....करीब तीन महीनों से वहाँ नौकरी कर रही हैं।

रोमांच हो आया हेमन्त को, एक धक्का-सा अचानक दिल पर लगा। सोचने पर भी जब कोई जवाब नहीं मिला तो बोला—अच्छा है तो....

लावण्य बोली—लेकिन सुना है कि वहाँ ज्यादा दिन नहीं रहेंगी भाभी! तूने अखबार में नहीं पढ़ा कि सेलेक्शन बोर्ड की परीक्षा में सर्वप्रथम स्थान ग्रहण करके शिवानी आचार्य शीघ्र ही सोशल साइंस की डिग्री लेने स्कॉलरशिप लेकर बाहर जा रही हैं?

शिवानी आचार्य!....मैत्र नहीं?....फिर जैसे हेमन्त के गले में कुछ अटक गया। कुछ क्षण चुप रहकर बोला—कहाँ जा रही है?

अमेरिका।....मेरी ननद कह रही थी कि इस बार जाने के बाद भाभी शायद ही वापस लौटे!

हाँ....अब क्यों लौटेगी!....अब तो उसकी राह रोकने वाला कोई है नहीं।....कहते-कहते अचानक बीच में ही हेमन्त ने फोन रख दिया।

मत लौटने दो! वह भी अपने पुराने जीवन में नहीं लौटेगा। वह भी

अविश्रान्त वृष्टि में भीगता धीरे-धीरे आगे बढ़ता रहा हेमन्त। चलते-चलते मैदान पार करके अंधकार से निकल कर प्रकाश की ओर पहुँच गया—चौरंगी सामने ही थी। गड्ढे में पाँव पड़ने के कारण एक-दो जगह गिर पड़ा था वह, धोती-कुर्त्ता कीचड़ से सन गये थे, बदन से पानी झर रहा था। सोचा—इसी तरह धीरे-धीरे वापस घर पहुँच जायेगा। रास्ते में किसी दुकान से दो रोटी खरीद लेगा। जीवन का एक और दिन इस तरह बीत जायेगा।

इधर-उधर देखकर सड़क पार की हेमन्त ने और फुटपाथ पर आकर खड़ा हो गया। शाम ढल गई थी, रात्रि का आगमन हो रहा था। एक दिन तो बीत गया था पर रात बाकी थी जो मुश्किल से कटनी है। इसीलिए निरुद्देश्य घूमता रहता वह इधर से उधर! अधिक से अधिक रात बिता कर लौटने का भरसक प्रयत्न करता है, लेकिन तब भी जैसे ही घर पहुँच कर बिस्तर पर पड़ता है तो कोई भारी चीज उसे दबा कर दम घोंटने लगती है। अँधेरे कमरे में उसकी भावनाएँ मानों निशाचर चमगादड़ों का रूप धारण करके अपनी-अपनी अक्षरेखाओं में उड़ती रहती हैं—मानों एक ही चिन्ता, एक ही दुःस्वप्न से भयभीत चारों दीवालों पर बार-बार सिर फटक कर लौट आती हों। कभी-कभी बहुत ही डर जाता है हेमन्त! और उसके बाद रात बीतने पर फिर नया रक्तिम प्रभात आ जाता है। मानों रात को उसकी मृत्यु हो गयी थी लेकिन प्रभात ने फिर उसके शरीर में प्राण फूंक दिये हों। रोज मरता है—रोज जीता है वह! ठीक उसी तरह जैसे कापुरुष एक ही जीवन में बार-बार मरता है—बार-बार जीता है! लेकिन वह भी तो कापुरुष ही है! इसमें सन्देह कहाँ है? अपने पूर्व इतिहास में अन्याय के प्रतिकार के लिए वह कभी नहीं लड़ा—हाँ, वह कापुरुष है.... भयभीत है....। विपत्ति के बादल मँडराने पर कस कर पतवार थामे रहना उसने नहीं सीखा! दुष्ट चक्रान्त को जड़-मूल से उखाड़ना वह नहीं जानता! दुर्नीति, दुराचार के विषाक्त फन पर वह प्रहार नहीं कर पाता—फिर एक दुर्बल-चित्त, कापुरुष के अलावा वह क्या कहलायेगा? धिक्कार है उसे! धिक्कार है उसके जीवन को....

चलते-चलते बिजली के एक खंभे के नीचे खड़ा होकर जब वह सोच रहा था कि वापस कैसे लौटा जाये तो उधर एक दुकान के शेड के नीचे खड़े लोग उसकी ओर उँगली उठाकर आपस में मजाक कर रहे थे—मानों उसकी वर्तमान अवस्था व चाल-ढाल के बीच कहीं विकृत-मस्तिष्कता ढूंढ़ रहे हों। नहीं तो ऐसी मूसला-धार वारिश में कोई खुले आकाश के नीचे थोड़े ही खड़ा रहता है।

एक के बाद एक सपाक्-सपाक् तेजी से गाड़ियाँ निकलती जा रही थीं। सब

अपने में डूबा हेमन्त चलता जा रहा था। आकाश में बादल घिर आये थे। चारों ओर अँधेरा छा गया था। बिजली कड़क रही थी, लेकिन हेमन्त को तो जैसे होश ही नहीं था। उसके सिर पर आसमान भी फट पड़ता तो उसे पता नहीं चलता। मैदान की वह पगडंडी जैसे किसी जादू से लम्बी होती जा रही थी। लगता था अभी वह वहीं हो जहाँ से उसने चलना शुरू किया था। टप-टप....बड़ी-बड़ी बूंदें पड़ने लगीं सिर पर तो चौंककर नजरें घुमाकर चारों तरफ देखा हेमन्त ने। उतनी ही देर में बारिश ने जोर पकड़ लिया था। हेमन्त के पाँव में चप्पल और बदन पर धोती-कुर्ता था। इस पोशाक में भागना भी तो मुश्किल था। धोती ऊपर उठाकर उसने कमर में बाँध ली और भागना शुरू कर दिया लेकिन अब भी मुश्किल पड़ रही थी भागने में। मैदान का रास्ता सीधा-सादा तो होता नहीं, गर्द-गुब्बार से भरा ऊबड़-खाबड़ होता है। बारिश पड़ने से कीचड़ हो गया था, धोती-कुर्ता बदन से चिपक गया था, चारों ओर फैला अँधेरा और भी घना हो गया था, कीचड़-पानी से सनी चप्पलें बार-बार पाँव से निकली निकली पड़ रही थीं। दूर चौरंगी की बत्तियाँ दिखाई दे रही थीं।

दौड़ते-दौड़ते साँस फूल गया था हेमन्त का। अचानक उसने रुककर पाँवों से दोनों चप्पलें निकाल कर मैदान में दूर फेंक मारीं। जैसे दिल को कुछ शांति मिली उसके। खाली पाँव बारिश में चलना-भागना आसान होता है न! जैसे पाँवों पर खड़े रहने का विश्वास पैदा हो जाता है मन में! एक भरोसा रहता है मनुष्य को सदा अपने पाँवों का। चप्पल फेंक कर नंगे पाँव फिर से दौड़ना शुरू कर दिया था हेमन्त ने। अचानक ख्याल आया कि वह दौड़ क्यों रहा है? यह भाग-दौड़ किसलिये। और बस जैसे ब्रेक लग गया पाँवों में! जहाँ का तहाँ खड़ा हो गया वह? आ जाये आँधी-तूफान, मच जाये प्रलय—पर उसे भागने की क्या जरूरत है? वज्राघात से विदीर्ण होकर टुकड़े-टुकड़े हो जाये धरती की छाती—वैसे ही जैसे अपने इन बर्बर हाथों के आघात से अपनी रुनु की छाती फाड़ दी थी! अच्छा है, अब वह भी इस आँधी-तूफान में धरती में समा जाये—उसकी दुष्कृतियाँ, कलंक धुल-पुँछ जायें। उसके अज्ञान, मूढ़ता, अमानुषिक अंधता—सब पर रुद्राणी का वज्र टूटे। दुर्भाग्य उसे और छिन्न-भिन्न कर डाले, दुर्दशा और अपमान से उसका यह निष्क्रिय कदाचारी यौवन लोगों की घृणा व धिक्कार का कदम-कदम पर भागी बने। और तब सब सहने के बाद यदि उसके अन्दर एक दृढ़ संकल्प भूलुंठित मनुष्यत्व अपने पौरुष के बल पर सिर उठा सके तो वह फिर से जी जायेगा।

जल्दी-जल्दी डाक्टर बोले—दीपेन भी यहाँ नहीं है। वह ऋषिकेश की तरफ कहीं आश्रम बनाने गया है। बड़े भैया को बस अकेले रुनु के भरोसे छोड़ कर जाना पड़ रहा है।

क्यों, तुम कहाँ जा रहे हो ?

शेड के नीचे से बाहर निकलते-निकलते डाक्टर बोले—बस, बड़े भैया को एक इंजेक्शन देकर मुझे तुरत घर जाना है। वहाँ से तेरी मामी को लेकर इसी ग्यारह के प्लेन से दिल्ली जाना है।

क्यों दीनू मामा ?

अब क्या बताऊँ तुझे ? आफत जब आती है तो एक साथ चारों तरफ से आती है। मोटर एक्सिडेंट करके मेरा लड़का वहाँ विलिंगडन अस्पताल में पड़ा है ! अच्छा अब मैं चलूं—और सुन कमबख्त—गाड़ी में बैठते-बैठते चिल्ला कर डाक्टर बोले—मेरी बात तो तूने नहीं मानी, लेकिन तबियत अगर ज्यादा खराब होने लगे तो टैक्सी लेकर सीधे करनानी अस्पताल चले जाना और जाकर मेरा नाम ले लेना। मैं अभी उन्हें फोन पर कह दूँगा—

और गाड़ी आँखों से ओझल हो गई—कुछ देर तक जिस ओर गाड़ी गई थी, आँखें गड़ाये देखता रहा हेमन्त। हर आदमी के अन्दर शैतान को देखने परखने की आजकल उसे आदत सी हो गई है लेकिन सदा के निःस्वार्थी परोपकारी दीनू मामा अभी भी उसके लिए एक उज्ज्वल भविष्य के प्रणेता का रूप लिये हुए हैं।

फिर से कदम बढ़ाये हेमन्त ने। बारिश रुकी तो नहीं थी, लेकिन जोर कम हो गया था; हल्की-हल्की फुहार पड़ रही थी। जिधर को पाँव उठे हेमन्त सिर नीचा किये अपने क्लान्त, श्रान्त शरीर को घसीटता-घसीटता चलने लगा।

नहीं, अभी रोगी की अवस्था इतनी खराब नहीं हुई थी, पहले जैसी ही थी। फलों का रस, थोड़ा सा फीका दूध, ग्लूकोज मिला पानी—इसके अलावा और दिया भी क्या जा सकता था ?

दीनू डाक्टर ने धीरे-धीरे आहिस्ते से रोगी का हाथ नीचे रख दिया।
गोदावरी तीरवर्ती अरण्य के विशाल दीर्घ शालवृक्ष की तरह आचार्य अपने विस्तर
पर बेहोश पड़े थे। देदीप्यमान उन्नत ललाट, बन्द आँखें—जैसे योगसाधना में
हों। कुछ देर पहले ही डाक्टर ने इन्जेक्शन दिया था।
सरोजिनी खाट पर आचार्य के पाँयते बैठी थी। रुनु ऊपर [illegible] देखभाल कर
रही थी और भोला काम-काज निपटा रहा था। रात

को घर पहुँचने की जल्दी थी। अगर सड़क पर पानी भर जाने से वहीं रुकना पड़ गया तो....। अचानक न जाने किधर से एक गाड़ी में से कोई चिल्लाया—हेमन्त!

नजरें उठाकर इधर-उधर देखा हेमन्त ने। आगे थोड़ी दूर जाकर बायें हाथ को फुटपाथ के किनारे एक गाड़ी रुकी और दरवाजा खोलकर दीनू डाक्टर बाहर निकले। बारिश में भीगते तेज कदमों से हेमन्त के पास आये और बोले—बारिश में खड़ा भीग रहा है यहाँ?—यह तुझे हो क्या गया है हेमन्त? आ....चल, जल्दी से गाड़ी में बैठ चलकर! कहाँ जायेगा?

नहीं दीनू मामा।

नहीं, क्यों रे? यहाँ खड़े-खड़े बारिश में भीगता रहेगा?—जरा धमकाते हुए दीनू डाक्टर बोले—दिन पर दिन तेरी धृष्टता बढ़ती जा रही है, हेमन्त! अच्छा चल, शेड के नीचे तो आ।

हेमन्त का हाथ पकड़ कर एक तरह से खींचते हुए उसे शेड के नीचे ले गये दीनू डाक्टर। फिर बोले—यह क्या? तेरा तो बदन गरम हो रहा है! लगता है बुखार चढ़ रहा है! देखूँ जरा—!

हेमन्त के भीगे कुर्ते के अन्दर हाथ डालकर डाक्टर ने उसके बदन पर रक्खा तो जल गया हाथ। बिना कुछ कहे उन्होंने पूछा—सिर में, बदन में कहीं दर्द है?

दर्द!—हेमन्त बोला—कहाँ? नहीं तो! लेकिन हाँ....सिर....

हूँ, सब समझ गया। अब समझने को रह ही क्या गया है। अच्छा, बता तो सच-सच, इन चार-पाँच महीनों से तू कहाँ था? खिदिरपुर के मकान में?

नहीं दीनू मामा!—मैंने एक कमरा किराये पर ले लिया है।

किराये का कमरा!—हँस पड़े डाक्टर। फिर हाथ में बँधी घड़ी देखकर बोले—अंत में मैत्र वंश को भी किराये का मकान लेना पड़ा! अच्छा, चल वह तो हुआ, लेकिन तू कर क्या रहा है? काफी दिन हुए तेरी खबर लेने तेरे आफिस गया था तो पता लगा कि तूने नौकरी छोड़ दी है। यह शकल-सूरत कैसी बना ली है रे तूने?—चल, छोड़ यह बातें—सुन! तुझे अभी तुरत दवा ले लेनी चाहिए—बुखार तेज है। चलेगा मेरे साथ?

नहीं, दीनू मामा। मुझे इधर काम है।

मेरा सिर...काम है!—लेकिन मैं तो जल्दी में हूँ। दे मेडिकल में रुनु के पिता जी के लिए दवा लेने आया था। आज बारह दिन हो गये सेरिब्रल स्ट्रोक के कारण बेहोश पड़े हैं वह—और डाक्टर ने फिर से घड़ी देखी।

हेमन्त चुप खड़ा था। अभी तक उसके भीगे कपड़ों से पानी टपक रहा था।

बाहर का दरवाजा उढ़का आई थी रुनु। आकर रोगी पिता के पास बैठ गई थी। कमरे में निःस्तब्धता छाई हुई थी। हलका प्रकाश था। ऐसे में आदमी की भाषा भी तो जैसे खत्म हो जाती है। कहने के लिए बहुत कुछ होता है पर मुँह में जुबान नहीं होती।

कुछ देर बाद सिर घुमाकर दबे स्वर में सरोजिनी बोली—कौन ?

मुँह उठाकर शान्त स्थिर दृष्टि से उस ओर देखा रुनु ने और बोली—कहाँ! कोई भी तो नहीं है! कौन आयेगा इस आँधी-पानी में! हवा से दरवाजा खुल गया होगा—

नहीं, मुझे ऐसा लगा जैसे दीनू लौट आया हो फिर से!—अशान्त स्वर में सरोजिनी ने अपना मंतव्य प्रकट किया।

रुनु गोद में मोटी सी अंगरेजी की किताब रखे पढ़ रही थी। उसी में आँखें गड़ाये बोली—अब दीनू काका कैसे आयेंगे ? उन्हें क्या दिल्ली नहीं जाना है ?

अब दीनू डाक्टर उठ खड़े हुए। दरवाजे के पास आकर इशारे से रुनु को पास बुलाकर धीरे से पूछा—क्यों री, बड़े भैया का यह तिहत्तरवाँ चल रहा है न ?

हाँ—

जरा दुखी स्वर में डाक्टर बोले—आज तेरे अलावा उनके सामने खड़ा होने वाला कोई नहीं है ! एक-एक करके उनके तीनों लड़कों की मृत्यु हो गई।—अच्छा सुन, मुझे मजबूरन जाना पड़ रहा है ! भोम्बल की हालत यदि ठीक हुई तो तेरी काकी को दिल्ली छोड़कर मैं कल शाम तक लौट आऊँगा—एयरपोर्ट से सीधे यहीं आऊँगा।

सिर हिलाकर सम्मति जताई रुनु ने। फिर विषण्ण कंठ से बोली—खाने के लिए तो बस वही देना है न ?

हां, उसके अलावा और क्या देगी ? अचेतन अवस्था में पड़े हैं बड़े भैया, लिक्विड के अलावा कुछ दिया ही नहीं जा सकता !....मैंने हरीश डाक्टर को सारा केस समझा दिया है। जब भी तू उन्हें बुलायेगी दौड़े चले आयेंगे वे। कल सवेरे ही वह देखने आयेंगे। अच्छा....अब चलूं मैं....

बारिश ने फिर जोर पकड़ लिया था।

दो कदम चलकर फिर लौट आये डाक्टर। बोले—रुनु, डर तो नहीं लग रहा तुझे ?

डर !—ओठों पर स्मित रेखा आ गई। बोली—विपत्ति से मुझे डर नहीं लगता दीनू काका !

कुछ कहने जा रहे थे डाक्टर कि न जाने क्या सोचकर चुप रह गये। शायद शाम को हेमन्त से हुई मुलाकात के बारे में बताना चाहते थे—परन्तु इस समय खबर से रुनु को अशान्त करना उचित नहीं था—विकलता का समय नहीं है यह—शायद यही सोचकर चुप रह गये थे वे।

दीनू डाक्टर दरवाजे से बाहर निकल गये। पीछे से रुनु एकटक उन्हें देखती रही।—गाड़ी के जाने की आवाज सुनकर जैसे होश में आई वह—कहाँ खो गई थी वह ? मन को ढाढ़स बँधाया रुनु ने और वापस कमरे में लौट आई।

मूसलाधार पानी पड़ रहा था। सड़क की बत्ती आज शाम से ही नहीं जली थी। आजकल आम तौर पर पड़ोस का टेलीफोन भी खराब रहने लगा है। रोज तो दो-एक जने आचार्य का हाल-चाल पूछने आ भी जाते थे, लेकिन आज इस आंधी-पानी में कौन किस्मत का मारा भला घर से निकलता ! सड़कों पर पानी भर गया था, गाड़ी के पहियों से टकराकर पानी की झपझप आवाज आ रही थी।

भागते-भागते काफी दूर पहुँच गई वह। गली का मोड़ आ गया था। व्याकुल दृष्टि से इधर-उधर देखा उसने। नहीं, यहाँ नहीं—इस तरफ नहीं। और जिधर से आई थी उसी ओर भाग चली वह। वारिश की तेज बौछारों के कारण रास्ता देखने में मुश्किल पड़ रही थी! लेकिन वस इतनी तसल्ली थी कि कोई देख नहीं रहा था उसे। सड़क पर पानी भरा होने के कारण साड़ी नीचे से पाँवों में फँस-फँस जाती थी—भागा नहीं जा रहा था, पर तब भी भाग रही थी जी-जान से। अब रुकने का समय नहीं था। लाज-शरम, द्विधा-संकोच, भय-भावना सब यकायक न जाने कहाँ चले गये थे। इस समय वह निर्भय, निडर, अपराजित थी, अमावस्या की इस कालरात्रि जैसी अभया थी। आँधी का एक झोंका उसका आत्माभिमान उड़ा ले गया था—चारों ओर से इस जल-प्लावन ने उसका परिचय वहा दिया था।

पतली गली से निकल कर वह राजपथ पर आ पहुँची। मानों वह संकीर्ण गली की मृत्यु से वचकर फिर जीवित हो उठी हो, किसी अँधेरी गुफा के द्वार अचानक खुल जाने पर प्रकाश से आँखें चुँधिया गई हों। लटकता आँचल उठाकर रुनु ने कमर में खोंस लिया। दोनों हाथों से माथे पर आ गये वालों को ऊपर करके इधर-उधर दृष्टि दौड़ाई लेकिन जहाँ तक नजर जाती थी जनहीन पथ पर उस अविराम वृष्टि के अलावा कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था! दोनों तरफ की दुकानें न जाने कब की वंद हो गई थीं। लेकिन नहीं, उसकी आँखें उसे धोखा नहीं दे सकतीं। सड़क के उस पार एक सिक्ख सरदार अपनी दुकान वंद कर ही रहा था।

भाग कर रुनु उस पार पहुँची, लेकिन सरदार जी ने अपने आखिरी ग्राहक के मुँह पर ही अंदर से दरवाजा वंद कर दिया!

जहाँ की तहाँ खड़ी रह गई रुनु। अपने कपड़ों की ओर नजर पड़ते ही अचानक चौंक उठी वह! नहीं, इस अवस्था में नहीं। भीगी साड़ी के भीतर से उग्र नग्नता झाँक रही थी। नहीं....ऐसे नहीं....इस वेश में तो यौन आवेदन की मादकता झलक रही है! यह उसके लिए उचित नहीं है। सावधानी से रुनु एक दुकान के नीचे शेड के अन्दर चली गई। वहाँ खड़े होकर उसने अपना आँचल निचोड़ कर मुँह पोंछा, वाल झटक कर पानी निकाल झाड़ा। इसके वाद भीगे ब्लाउज को ठीक से साड़ी से ढककर सिर पर पल्ला खींचा और वाहर आई। इसके वाद कुछ कदम आगे वढ़कर सिक्ख सरदार की वंद दुकान के चवूतरे के पास आई और इधर-उधर देखकर नीचे झुककर दवे स्वर में वोली—हेमन्त, उठो!

दीवार की तरफ करवट लिये अशक्त-सा पड़ा था वहाँ हेमन्त! तेज वुखार

ही तो चोर-डाकुओं की बन आती है, समझी ? देखूं भोला दा क्या कर रहे हैं। भोला दा—

द्रुत कदमों से रुनु अन्दर की तरफ चली गई। भोला पांडे ने रसोई का काम-काज निपटा कर पाँव सीधे किये ही थे कि रुनु की आवाज सुनाई दी—भोला दा, हद है तुम्हारी नींद की ! आज तो जरा चेतन रहो। आजकल वैसे ही दिन खराब हैं।

क्यों, तुम तो बड़ी बहादुर लड़की हो। फिर आज क्यों डर रही हो ? बैठे-बैठे भोला ने जवाब दिया।

डर ! आर्त कंठ से रुनु बोली—नहीं, नहीं, मैं भला क्यों डरने लगी किसी से, लेकिन तुम लोग भी डरना मत ! भले ही विपत्ति आये, सिर पर गाज़ गिरे, चोर-डाकू घुस आयें—लेकिन....लेकिन तुम देख लेना भोला दा, मैं डरूँगी नहीं—मैं....मैं भवेश आचार्य की लड़की हूँ—झूठ नहीं बोलती।

रुनु फिर से कमरे में लौट आई ! उसकी ओर देखते हुए पीछे से भोला मन ही मन बड़बड़ाया, हुँह....बड़ी पंडिता बनती हैं....और अपनी गुड़गुड़ी मुँह से लगा ली उसने !

कड़....कड़....कड़....कहीं दूर बिजली गिरी।

बुआ—दरवाजा बन्द कर दूँ ? बड़ी तेज हवा आ रही है !

तो फिर कर दे बन्द।

दरवाजे पर जाकर रुक गई रुनु। कुछ सोच कर बोली, नहीं, बन्द नहीं करती—खुला ही रहने दो। तुम बैठो, मैं अभी आई ! भोला दा यहीं हैं।

बरामदा पार करके आँगन में उतर आई रुनु ! बारिश तेज थी। बाहर के दरवाजे से निकल कर सड़क पर आ गई वह। बिजली की कौंध में दोनों ओर नजर दौड़ाई उसने—सड़क बिल्कुल सुनसान थी। लेकिन तो भी वह जाये किस तरफ ? जाने क्या सोचकर जल्दी-जल्दी दाहिनी ओर को पाँव बढ़ाये उसने। पर इस तरफ से जाना क्या उसके लिए शोभनीय है। उसे चलने से पहले एक बार फिर सोच लेना चाहिए था—वह आचार्यों की लड़की है, पूर्ण युवती है, कालेज की वाइस-प्रिंसिपल है—उसके कुछ नैतिक व सामाजिक दायित्व हैं ! सब तो यही जानते हैं कि असंयम, चंचलता, वाचालता उसे छू तक नहीं गई है। मृत्युशय्या पर पड़े भवेशचन्द्र आचार्य की एकमात्र सन्तान है वह—उसकी प्रकृतिगत शिक्षा, सभ्यता, स्वभाव आग में तपा लोहा जैसे हैं—फिर इस तरह का आचरण क्या उसे शोभा देता है ? लेकिन अपने मन के आगे मजबूर थी रुनु, बरबस पाँव आगे बढ़ चले और फिर उसने दौड़ना शुरू कर दिया।

के कारण बेहोशी सी छाई थी उस पर। कोई उत्तर न पाकर रुनु ने सन्देह से उसके माथे पर जैसे ही हाथ रक्खा कि चौंक पड़ी—इतना तीव्र ज्वर !

उसके कान के पास मुँह ले जाकर फिर से पुकारा रुनु ने—उठो हेमन्त, मैं तुम्हें लेने आई हूँ।

लेने आई हो ? भर्राये स्वर में हेमन्त बोला—फिर उस वक्त खिड़की क्यों बंद कर दी थी ? मैं तो खुद ही गया था !....

चुप रही रुनु। नहीं ! न तो उसका मन काँपा और न रोया ! वह जानती है कि वह क्यों भागी आई है ! वह आई है एक भग्न, व्यर्थ, अधःपतित, हताश व निपीड़ित यौवन को हाथों में उठाकर ले जाने के लिए। नहीं, उसकी आँखों की कोर भीगी नहीं है ! फौलाद के शाणित झिलमिलाते फल में या होमाग्नि-कुंड की लपलपाती शिखा में भला अश्रु का क्या काम ! नहीं, रोने वाली लड़की वह नहीं है। वह आई है एक व्यक्तित्वहीन, कुटिलता के हाथों के खिलौने पुरुष को ले जाने के लिए, जिसे वह सारा जीवन आग में तपायेगी और तपा-तपा कर लौहमानव बनायेगी। जिसको तपाने के लिए वह अपनी देहली पर अग्निकुंड बनायेगी। वह आई है—स्खलन-पतन, त्रुटि-विच्युति, दुर्बलता, अज्ञान, निर्बुद्धि इन सबसे अपने पति का उद्धार करने की खातिर उसे यहाँ से उठा ले जाने को !

अपना आँचल फिर से निचोड़ कर रुनु ने हेमन्त का मुँह व सिर पोंछा और बोली, चलो हेमन्त, तुम्हें तो मैं यमराज के हाथों से भी छीन लाऊँगी। मेरे कारण बहुत दुख उठाये हैं तुमने।

सावधानी से रुनु ने हेमन्त को सहारा देकर उठाया। आँचल से उसके पाँवों व कुर्ते का कीचड़ पोंछा और बोली—पिता जी मृत्युशय्या पर हैं शायद ! चलो हेमन्त, तुम मेरे सामने खड़े होना चलकर।

अन्धकार के कारण यह तो दिखाई नहीं दिया कि दोनों में से किसी की आँखों से सावन की धारा बही या नहीं। पर क्लान्त, अस्वस्थ, क्षुधार्त हेमन्त कम्पित स्वर में बोला—चलो।